१ੴ वाहिगुरू जी की फतहि ॥

221

जीवन वृतांत
श्री गुरू अमर दास जी

सिख मिशनरी कालेज (रजिः)

लुधियाना

੧ੴ वाहिगुरु जी की फतेह॥

जीवन वृतांत

श्री गुरु अमरदास जी

लेखक :

सः महिन्दर सिंघ जोश

M.A.

अनुवादक :

सः कुलबीर सिंघ, नई दिल्ली

प्रकाशक

सिख मिशनरी कॉलेज (रजिः)

1051, कूचा 14, फील्ड गंज, लुधियाना - 8

सब आफिस : A-143, फतहि नगर, नई दिल्ली - 18

जालन्धर आफिस : W.G.-578, सुराज गंज, जालन्धर शहर

जीवन वृतांत श्री गुरु अमरदास जी

ਜੀਵਨ ਵਿਰਤਾਂਤ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਅਮਰਦਾਸ ਜੀ

Jeewan Virtant Sri Guru Amardas Ji

© सभी अधिकार प्रकाशक के पास सुरक्षित हैं।

प्रथम हिन्दी संस्करण जनवरी, 2000 2000

प्रकाशक

सिख मिशनरी कॉलेज (रजि:)

1051, कूचा 14, फील्ड गंज, लुधियाना - 8

सब आफिस : A-143, फतहि नगर, नई दिल्ली - 18

जालन्धर आफिस : W.G.-578, सुराज गंज, जालन्धर शहर

विषय सूची

जीवन वृतांत श्री गुरू अमरदास जी

ਜੀਵਨ ਵਿਰਤਾਂਤ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਅਮਰਦਾਸ ਜੀ

Jeewan Virtant Shri Guru Amardas Ji

हिंदी संस्करण - जुलाई 1999

© सभी अधिकार प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

Laser Type Setters : DIGITAL ART THE DESIGN STUDIO, DELHI

दो अक्षर

कौन नहीं जानता कि हिंदुस्तान के अकबर जैसे बादशाह ने भी साधारण लोगों के साथ सावर्जनिक तौर पर *पंगत* में बैठकर, गोइंदवाल साहिब में, गुरू का लंगर बड़ी श्रद्धा के साथ सेवन किया था। उसके बाद ही उसने तीसरे पातशाह, श्री गुरू अमरदास जी के दर्शन भी किये और सिख गुरू साहिबान द्वारा प्रचलित लंगर की मर्यादा की भरपूर प्रशंसा की।

गुरू साहिबान के व्यक्तित्व व इतिहास पर कलम चलाने से पूर्व यह आवश्यक है कि लेखक, श्री गुरू ग्रंथ साहिब की फिलासफी से अच्छी तरह अवगत हों । नहीं तो पराधर्मी लेखक तो अपने मन के बहाव में बहकर, गुरू साहिबान के व्यक्तित्व और इतिहास के बारे में कई गलत तथ्य अंकित कर गये हैं। इस से उन्होंने कौम को लाभ पहुंचाने की जगह, बहुत भ्रांतियों में डाल कर हानि ही पहुंचाई है।

तीसरे पातशाह, श्री गुरू अमरदास जी के उपदेश, मनुष्य मात्र के उद्धार के लिए बहुत बड़ी देन हैं । इस पुस्तक में, अलग-अलग पक्ष व दृष्टिकोण से, इस देन को संगत के सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

पुस्तक का प्रथम पंजाबी संस्करण, गुरू अमर दास जी की पांचवीं जन्म शताब्दी के अवसर पर सन 1979 में संगत को भेंट किया गया था। ***सिख मिशनरी कालेज*** (रजि) लुधियाना के विशेष प्रयास द्वारा हिंदी में भी सिख साहित्य उपलब्ध कराने की श्रृंखला में इस पुस्तक का हिंदी संस्करण **भी प्रस्तुत** है। इस विषय पर चाहे और भी अधिक खोज की आवश्यकता है, परंतु साधारण जानकारी के लिए यह संस्करण उपयुक्त रहेगा।

गुरू साहिब का संपूर्ण इतिहास लिखने के लिए हम यत्नशील हैं। विश्वास है कि संगत के सहयोग द्वारा यह कार्य शीघ्र ही संपूर्ण हो जायेगा।

आशा है पाठकजन इस नगण्य से प्रयास का पूर्ण लाभ उठायेंगे। गुरू साहिबान द्वारा सिखी का न्यारापन कायम करने हेतू दिये गये उपदेशों व यत्नों को समझ कर, अपनी जीवन-शैली को, गुरू आशय के अनुसार ढाल कर, अपना लोक *सुखिए, परलोक सुहेले* करेंगे।

1. गुरू साहिब के प्रमाणिक जीवन के बारे में

अमरीकी शायर एच. डब्लयू. लांगफैलो ने महापुरूषों के जीवन-कारनामों पर विचार करने के बारे में, अपनी एक कविता Psalm of Life में बहुत उपयुक्त कहा है:

Lives of greatmen always remind us,
We can make our life sublime,
And departure leave behind us,
Footprints on the sands of time.

महापुरूषों के जीवनवृत को पढ़-सुनकर हमें अपने जीवन को उनके पदचिन्हों पर चलने की प्रेरणा मिलती है। अपने बजुर्गों की महान जीवन गाथाएं हमें साधारण *पुत्रों से सपुत्र* बनने की प्रेरणा देती हैं। महापुरषों-बजुर्गों के कारनामे पढ़-सुनकर, हमें अपने वर्तमान जीवन के भिन्न-भिन्न पहलुओं में आ रही कठिनाइयों व समस्याओं का हल ढूंढने में सहायता मिलती है। बीते समय की घटनाओं, गलतियों, त्रुटियों से हम अपने आप को बचा सकते हैं ताकि उन गलतियों की पुनरावृत्ति न हो, जिन गलतियों ने अतीत में हमारे व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन में हानि पहुंचाई है।

यह बात तो आज निःसदेह कही जा सकती है कि कौम अंधवेग से अधोगति की ओर धंसती चली जा रही है। हमारा आत्मिक और धार्मिक बल क्षीण होता चला जा रहा है। कौम की अगली पीढ़ी अपने इतिहास और विरासत से लगभग पूर्णत: अनभिज्ञ है। विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा गुरद्वारों के द्वारा हम अपने बजुर्गों के जीवन कारनामों तथा सिख सिद्धांतों का प्रचार हम तब ही कर सकते हैं, जब हमारे पास उत्तम किस्म की कोई प्रचारक संस्था हो । वास्तव में ऐसी संस्था कौम के पास है नहीं। दूसरे, कौम के पास अपने बजुर्गों के जीवन कारनामों का प्रमाणित

इतिहास हो ताकि सभी प्रचारक तथा लेखक, एकसमान प्रचार करें जिससे कौम में एकता पैदा हो और कौम किसी केंद्रीय लक्ष्य और आदर्श के लिए एकत्र हो सके।

आरंभ से ही इस देश के लोगों में इतिहास को लिखने और संभालने की वृत्ति नहीं रही। शुरू से ही पौराणिक लकीरों पर कुछेक घटनाओं का विवरण लिख लिया जाता रहा है जिस में उपदेश, काव्य रंग, अतिश्योक्ति आदि सब को मिला लिया जाता रहा है। इस सब के कारण ऐसे विवरणों में इतिहास आटे में नमक के बराबर ही रह जाता है। संवत व तिथियों के अनुसार बीते समय के विवरण लिखना यहां के लोगों की रुचि के अनुकूल ही नहीं रहे। परिणाम यह निकला है कि समय परिवर्तन के साथ ऐसी अनेकों घटनाओं पर कई परस्पर विरोधी वक्तव्य आने लग गये। इन सभी अभिलेखों का वाचन व पड़ताल करने के बाद वर्तमान वैज्ञानिक रूचियों वाले विधार्थी इन्हें इतिहास मानने को बिल्कुल तैयार नहीं है। वे इस सब को नावल व नाटकीय साहित्य समझ रहे हैं। उनकी ऐसी सोच स्वाभाविक है।

प्राचीन साहित्य की ऐसी वृत्ति, सिख साहित्य पर भी हावी रही है। समकालीन मुस्लिम बहुत सीमा तक इतिहासिक विवरण लिखने की रुचि रखते थे, पर उनके सांप्रदायिक जनून और पक्षपात ने सही घटनाएं अंकित नहीं होने दीं। हिंदू लिखारियों में से किसी-किसी को छोड़कर, बाकी सभी ने सिख बजुर्गों के बारे में लिखते समय कमाल की चतुराई और चालाकी से काम लिया है। प्रकट तौर पर वे अनेकों स्थान पर सिख सतगुरू साहिबान व सिख बजुर्गों की प्रशंसा कर रहे होते हैं, पर अंदर-ही-अंदर इन का पूरा बल इस बात पर लगा रहता है कि सिख मत को एक सर्वव्यापक स्वतंत्र मत के रूप में प्रस्तुत करने की जगह केवल मात्र, हिंदू मत की एक शाखा के रूप में ही प्रस्तुत किया जाय। सिख सतगुरू साहिबान व सिख बजुर्गों का वे हिंदू के तौर पर वर्णन करने पर ही पूरा बल लगा रहे हैं। स्पष्ट सैद्धांतिक विलक्षणता को देख कर भी ये भ्रम उत्पन्न करते ही रहे हैं। ये लोग मूल से ही सिख मत के

स्वतंत्र व आत्मनिर्भर अस्तित्व के विरोधी रहे हैं। पर ऐसा वे प्रत्यक्ष शत्रु के रूप में नहीं, बल्कि सिखी के श्रद्धालु व प्रशंसक की नकाब पहन कर अपना दांव लगाते आ रहे हैं।

पश्चिमी लेखकों के इतिहास को भी प्रमाणित नहीं माना जा सकता क्योंकि सिख मत के बारे में लिखते समय उन्होंने घटनाओं की अपने तौर पर पड़ताल व विशलेषण नहीं किया है। सुनी सुनाई और मुंह चढ़ी बातों को, जो बहुत बार गलत ही होती थीं, वास्तविकता की गहराई तक पहुंचे बिना ही लिख कर, उनको अंग्रेजी आदि भाषाओं में प्रचारित करवा लिया है।

सिख इतिहासकारों की दशा, सिख इतिहास लिखते समय, इससे भी बुरी रही है। विद्वता, खोज व विशलेषण का दृष्टिकोण इन्हें कठिन ही लगा है। श्रद्धावश विवेक-विशलेषणात्मक बुद्धि को इन्होंने ताक पर रख कर, अपनी ओर से स्तुति के रूप में अनंत घटनाओं का वर्णन करते गये हैं जिससे वास्तव में सिख सतगुरू साहिबान का महान व्यक्तित्व स्पष्ट रूप उभर कर सामने आने के स्थान पर कुछ संदिग्ध व क्लुशित सा लगने लगा है।

वास्तव में, कौम को किसी एक प्राधिकृत सर्वमान्य केन्द्रीय संस्था की जरूरत है जो कौम के प्रमुख विद्वानों को एकत्र करके दस-बीस वर्ष का समय लगा कर, प्रमाणित सिख इतिहास तैयार करवाये ताकि संशोधन करके इसे प्राधिकृत रूप में प्रकाशित किया जा सके और यही प्रमाणित इतिहास हमारे प्रचार का आधार हो। सिख सतगुरू साहिबान व बुजुर्गों की जीवन गाथएं अलग-अलग इतिहास में अनेकों रूप में उपलब्ध हैं। सन्, संवत संबंधी ही मतभेद नहीं हैं, घटनाओं के विवरणों, रूपों और उन के द्वारा किए गये विशलेषणों व परिणामों में खतरनाक किस्म के परस्पर विरोधाभस हैं। फिर ऐसे मतभेद, दो, चार या छः की संख्या तक ही सीमित हों, ऐसी बात भी नहीं: सैंकड़ों घटनाएं अलग-अलग इतिहास में अंकित हैं, जो समस्वरता, खोज व संशोधन की मांग करते हैं।

सतगुरू साहिबान की कथनी और करनी में अंतर होना नामुमकिन है। जिन विषयों पर सतगुरू साहिबान ने अपनी बाणी में निर्णयजनक अंतिम वक्तव्य दिये हुए हैं, यह कैसे संभव है कि गुरू साहिब स्वयं उन पर परस्पर विरोधी व्यवहार कर रहे हों ? पर सांस्कृतिक शत्रुओं ने बहुत गहरी चालों द्वारा सिख इतिहास में मिलावट की है। हमारे इतिहास में मनघड़ंत गपौड़े हों, हास्यास्पद हिंदू या ब्राहमणी रंगत में रंगी घटनाएं हों, तो इनके मिश्रित प्रचार द्वारा पंथ में खालिसपन, न्यारापन, विलक्षणता व स्मस्वरता कैसे आ सकती है ?

प्रसिद्ध विद्वान ***जे. डी. कनिंघम*** ने सन् 1848 में सिख इतिहास अंग्रेजी में लिखा। सन् 1951 में इसका पंजाबी संस्करण छपा। ***एम. ए. मैकालिफ*** ने सन् 1909 में *सिख रिलीजियन* पुस्तक लिखी। मैकालिफ ने स्वयं 1903 में एक भाषण में यह कहा था कि कनिंघम का सिख इतिहास, एक राजनीतिक इतिहास है और वह गुरबाणी की अंतर आत्मा को नहीं पहचान सका। मैकालिफ भी *गुरप्रताप सूरज* व *महिमा प्रकाश* आदि उन सिख पुस्तकों के पदचिन्हों पर ही चलता रहा जो ग्रंथ, अपने आप में अनेकों स्थान पर वास्तविकता विरोधी तत्व लिये बैठे हैं। यह सत्य है कि मैकालिफ ने गुर-इतिहास व गुरबाणी को श्रद्धा भरपूर ढंग से प्रचलित विदेशी भाषा में पश्चिमी लोगों तक अवश्य पहुंचाया है। सिख इतिहास के बारे में, एक हिसाब से **मोहसन फानी** की पुस्तक *दबिस्ताने मजाहिब* है। कनिंघम ने इस पुस्तक के अतिरिक्त मैलकम, विलसन (एशिया एक रिसर्च) *सियरल मुताखरीन सदरास* (लाईफ जीसस), वार्ड आन हिंदूज़, फारस्टर टरैवलर आदि पुस्तकों से संदर्भ अंकित किये गये हैं। इसके पश्चात अनंत लेखक कनिंघम को प्रमाणिक-सा मानकर, टीप-पर-टीप मारते हुए, संदर्भो का उल्लेख करते जा रहे हैं। कनिंघम ने अवश्य कुछ बातें ठीक लिखी थीं पर वास्तविकता के विपरीत ऊटपटांग विवरण भी उसकी पुस्तक में शामिल हैं। कनिंघम ने सुनी सुनाई बातें अधिक लिखी हैं और गैर-प्रमाणित ग्रंथों की नकल भी खूब की है। क्योंकि उसकी रचना अंग्रेजी में है, इसलिए इस रचना में

से लोग धड़ा-धड़ संदर्भ अंकित कर रहे हैं। उसने 9293 पृष्ठों की कोई *खारी बीड़* देखी हुई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि वह नकल दर नकल मारे गया है या फिर सुनी सुनाई पर ही लिखता गया है और उसने उल्लेख किया है कि *जित दर लख महंमदा* आदि शबद, *बीड़* में अंकित हैं और *रतन माला* भोग की बाणी है। वह केवल भट्टों के नौं कल्पित नामों की ही चर्चा नहीं करता बल्कि मीराबाई को(गुरू ग्रंथ साहिब की) *बीड़* में दर्ज करने की धृष्टता किये बैठा है।

सिखों के प्राचीन इतिहास में *दोनों गुर बिलास पातशाही 6 व पातशाही 10 सौ सारवी, गुर प्रताप सूरज, त्वारीख गुरू खालसा, पंथ प्रकाश* आदि में बेशुमार ऊट-पटांग गुरमत विरोधी मन घड़ंत प्रसंग हैं और आगे नकल-दर-नकल, बतौर असल बना कर पेश की जा रही है। कम से कम सौ पृष्ठ तो देवी के यश-गायन पर लिखे हुए हैं ।अन्य भाषाओं में लिखने वालों को क्या कहें, हमारे प्राचीन इतिहास के सिख लेखकों ने, यानी *गुरबिलास पातशाही 6 और पातशाही 10 सौ सारवी, सूरज प्रकाश, पंथ प्रकाश व त्वारीख गुरू खालसा* कृत ज्ञानी ज्ञान सिंघ आदि में कनिंघम से भी कहीं अधिक गुरमत व गुरू आशय के विरूद्ध प्रसंग अंकित किये गये हैं।

भाई भगत सिंघ, कर्ता *गुर बिलास* व सुखा सिघ पटना निवासी ब्राहमणी रंगत वाले सिख थे, देवी माता से बहुत भयभीत थे। पर चूड़ामणी कवी संतोख सिंघ, *सौ सारवी* के अड्डे चढ़े हुए थे और ऐसा रस पैदा किया है कि उन के द्वारा लिखे इतिहास में से *गुरमत व मनमत* को अलग करना या सत्य झूठ में अंतर करना, साधारण बुद्धि के मनुष्य के बस की बात नहीं रही। फिर, *सूरज प्रकाश* व *गुर बिलास* से प्रसंग ले कर, ज्ञानी ज्ञान सिंघ ने *त्वारीख गुरू खालसा* व *पंथ प्रकाश* में अनेकों कपौल-कल्पित मन घड़ंत साखियां लिख दी हैं।

समूचे सिख इतिहास संबंधी सही घटनाओं की जानकारी प्राप्त करते समय जो कठिनाई पेश आती है वह श्री गुरू अमर दास जी की

जीवन गाथा पढ़ते समय और भी तीव्र हो कर पेश आती है। शक नहीं कि श्री गुरू ग्रंथ साहिब में श्री गुरू अर्जुन देव जी और श्री गुरू नानक देव जी के पश्चात, सभी गुरू व्यक्तियों और भक्तों महापुरूषों से अधिक बाणी, साहिब सतगुरू अमरदास जी की है, जिस के द्वारा गुरू साहिब के महान गुरमत सिद्धांत तो स्वत: ही स्पष्ट हो जाते हैं, पर जहां तक सतगुरू अमरदास जी की जीवन गाथा का प्रश्न है, उसके लिए भरोसे योग्य इतिहासिक आधारों की बहुत कमी है। पुराने इतिहासों को हमारे लिखारियों ने वैज्ञानिक शैली में लिखने की कतई जरूरत नहीं समझी। सन्, संवत्, तिथियों को आगे पीछे करके, घटनाओं पर को नये सिरे से क्रम देना पड़ता है, जिससे निश्चय ही वैज्ञानिक इतिहास की सृजना संभव नहीं ।

सतगुरू साहिबान के जीवन की घटनाओं को खोजने के लिए मुख्य रूप से, सरूप दास भल्ला कर्ता *महिमा प्रकाश*, कवी संतोख सिंघ कर्ता *गुर प्रताप सूरज*, कवी बीर सिंघ रचित *गुर कीरतन प्रकाश*, कुछेक हस्तलिखित साखियों व बाणी की व्याख्या संबंधी कुछ एक हस्तलिखित प्राचीन गोष्टियों का ही आश्रय लिया जा सकता है। कनिंघम और मैकालिफ *महिमा प्रकाश* व *गुर प्रताप सूरज* के पीछे ही चले हैं । इस के बाद के लिखारी बावा छजू सिंघ, खजान सिंघ, तेजा सिंघ, गंडा सिंघ, खुशवंत सिंघ, तारन सिंघ, एम. एल. पीस. व जोध सिंघ आदि लेखक कनिंघम के पीछे चलने में मजबूर हुए हैं।

अत: संपूर्ण उपलब्ध स्रोत के आधार पर मिलने वाले प्रसंगों को इस ढंग से क्रम देने का यत्न इस पुस्तक में किया गया है कि गुरू अमरदास जी की जीवन गाथा यदि वैज्ञानिक इतिहास का रूप न भी ले सके, तो भी वह गुरू साहिबान द्वारा उच्चारी गयी बाणी, और गुरमत सिद्धांत के अनुकूल होने के साथ-साथ तत्कालीन पंजाब देश व उत्तरी भारत के इतिहासक वातावरण के भी अनुरूप हो। कुछ भी हो, यह तथ्य तो समझ ही लेना चाहिए कि गुरू साहिबान की केवल वही जीवनगाथा

पंथ में स्वीकार्य है जो गुरबाणी में दर्शाये गुरमत सिद्धांत को दृढ़ करवाये और जिस के द्वारा सतगुरू साहिबान का वह स्वरूप उभर कर सामने आए जो उनके द्वारा उच्चारी गयी बाणी के अनुकूल होने के साथ-साथ सिख सिद्धांतों और सिख परिपाटियों की प्रमुख धारा में किरक पैदा करने के स्थान पर उनके प्रति और अधिक दृढ़ता और स्पष्टता पैदा करे।

वैज्ञानिक इतिहास के रूप में, गुरू साहिबान की जीवनगाथा न लिख सकने की मजबूरी को स्पष्ट करते हुए बतौर भद्र पुरूष यह बात मान लेने में कोई हर्ज नहीं कि गुरू साहिबान की इस जीवन गाथा को प्रमाणित कहने के लिए हमारा किंचित मात्र भी हठ नहीं है। हां, गुरमत आशयों को दृढ़ करवाने में और गुरमत के प्रचार-प्रसार में निश्चय ही यह जीवन गाथा, भरसक योगदान दे सकेगी, ऐसा दृढ़ विश्वास है।

— — — — —

2. भट्ट विद्वानों की श्रद्धांजलियां

गुरू अमरदास जी के बारे में क़लसहार, जालप, कीरत, भिखा, सल व भल नामक भट्ट विद्वानों ने, जिन का पवित्र कलाम, श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दज है, सिखी भावना व श्रद्धा से ओत-प्रोत थे, उन्होंने गुरू पातशाह के बारे में बहुत श्रद्धा भरपूर व वास्ततिक विचार दिये हैं।

कलसहार जी के कथनानुसार श्री गुरू अमरदास जी ने हू-बहू उसी नाम मार्ग का उतर-दक्षिण व पूर्व-पश्चिम दिशाओं में प्रचार किया जिस नाम मार्ग का प्रचार, आरंभ में गुरू नानक देव जी ने किया था । आदि से लेकर आज तक संसार के सभी लोगों ने, जो दिल और मन से सत्य के पक्ष में रहे हैं, परमेश्वर के जिस मूल और असली रूप की पहचान की थी , परमेश्वर का वही असली तत्व रूप श्री गुरू अमरदास जी ने जाना और उसी का प्रचार किया है । श्री गुरू अमरदास जी में सति, शील, शांति, गंभीरता, निरवैरता, धैर्य आदि सभी दैवी गुण विद्यमान थे । आप की संगत बहुत बड़ी थी । जिस मनुष्य ने भी श्री गुरू अमरदास जी की संगत या स्पर्श प्राप्त किया, वही प्रभु को समझने में समर्थ हो गया और प्रभु परमेश्वर को प्राप्त करके, मानो उसने सभी इच्छाएं पूरी कर लीं।

भट्ट **जालप** जी सतगुरू अमरदास जी के महान व्यक्तित्व का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि मनुष्य के सभी इंद्रियां - पैर, हाथ, जिव्हा, आंखें, कान, हृदय व सिर तभी सफल हैं यदि इन के द्वारा गुरू अमरदास जी की पवित्र शिक्षा दृढ़ करके प्रभु की प्राप्ति की जा जाए । गुरू अमरदास जी के पवित्र उपदेशों की जिन मनुष्यों पर कृपा हो जाती है उन को संसार का कोई दुख, भूख, गरीबी, चिंता आदि अपनी आत्मिक उडोलता की अवस्था से नहीं हटा सकना । गुरू अमरदास जी के मत का आधार एकाएक परमेश्वर है । एकाएक परमेश्वर के अतिरिक्त किसी

अन्य में विश्वास की कोई गुंजाइश नहीं । गुरू अमरदास जी आदि-जुगादि से चले आ रहे सत्य-धर्म वाले एकाएक मत को मानते थे जिस के अनुसार केवल मात्र एक परमेश्वर को सच्चे दिल से प्यार करना व उसका सुमिरन करना ही मानव जीवन का मनोरथ है और जिस जीवन युक्ति के अनुसार लोभ, क्रोध, तृष्णा आदि विकार त्यागने होते हैं । गुरू अमरदास जी की शिक्षा या उपदेश इतने महान हैं कि उन को मान कर हमारे मनों में से पाप भरे विचार समाप्त हो जाते हैं और हमें परमेश्वर में ध्यान जोड़ने की युक्ति समझ आ जाती है ।

भट्ट **कीरत** जी सतगुर अमरदास जी के महान व्यक्तित्व के बारे में कहते हैं कि गुरू अमरदास जी में इतने महान गुण है जिन को अगम्य, अलख और अनंत कहा जा सकता है । गुरू अमरदास जी जिज्ञासुओं के लिए संसार-सागर को सफलतापूर्वक पार करवा पाने में समर्थ जहाज हैं । आप में ऐसे महान दैवी गुण हैं जिन को देख कर स्वत: ही मुंह से निकल आता है कि आप जी परमेश्वर का रूप ही हैं। गुरू अमरदास जी की शिक्षा को अपनाने वाले भरपूर आत्मिक गुणों के स्वत: ही धारणकर्ता बन जाते हैं ।

भट्ट **भिखा** जी कहते हैं कि गुरू अमरदास जी ने अपने आप को हरी परमेश्वर के साथ एकमेव कर लिया है। आप सदा परमेश्वर के स्मरण मंडल में विचरण करते रहते हैं। आप ने काम, क्रोध आदि विकारों को पूरी तरह वश में करके, मन को साध लिया है। भिखा जी कहते हैं कि सत्य की खोज में, मैं अनेकों संतों, साधुओं, सन्यासियों, तपस्वियों व मधुर जुबान वाले पंडित विद्वानों को मिला हूं, पर इन में से कोई भी मेरी आत्मिक संतुष्टि नहीं करवा सका क्योंकि इन सब को मैंने केवल पर-उपदेश करते ही सुना है। उनके व्यवहार में, उस उपदेश के प्रतिकूल जीवन शैली देखकर, मन में खुशी व उल्लास पैदा नहीं होता ।

सल भट्ट जी कहते हैं कि गुरू अमरदास जी आत्मिक दृढ़ता, गुरमत ज्ञान, धर्म, गुरमुख-परक शील व दैवी गुणों से परिपूर्ण हैं।

परमेश्वर के अदब में रहने के कारण आप निर्भय अवस्था में विचरण करते हैं और सदा ही ईश्वर की याद को हृदय में धारण किये रखते हैं। आपने काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि पंच विकारों को वश में कर रखा है।

भट्ट भल जी श्री गुरू अमरदास जी के बारे में बहुत ही भावपूरत शब्दों में वर्णन करते हैं। आप कहते हैं कि यह तो संभव है कि कोई समर्पित व्यक्ति बादलों की बूंदों की गिनती कर ले, धरती पर उगी वनस्पति की गणना कर ले, बसंत ऋतु में उगे फूलों की गणना या सूर्य चंद्रमा आदि की किरणों की संख्या का अंदाजा लगा ले, समुद्रों के पेट में पड़े पदार्थों का या गंगा में उठने वाली लहरों का हिसाब-किताब कर ले, पर यह सामर्थ्य किसी में नहीं कि साहिब श्री गुरू अमरदास जी के गुणों की गहराई को कोई माप सके। गुरदेव की उपमा के लिए, गुरदेव के महान व्यक्तित्व के बिना और कोई चीज पेश नहीं की जा सकती ।

— — — — —

3. प्रारंभिक जीवन

(क) आरंभिक समाचार

साहिब सतगुरू अमरदास जी का जन्म 5 मई सन् 1479 में, बासरके गांव (अमृतसर से लगभग पांच मील की दूरी पर) हुआ। आपके पिता का नाम श्री तेजभान भल्ला व माता का नाम लखमी जी था । देसी हिसाब से आपका जन्म 8 ज्येष्ठ संवत 1536 को हुआ। चंद्रमा की तिथियों के अनुसार यह दिन बैसाख सुदी 14 का है। इस तरह स्पष्ट है कि आयु में आप श्री गुरू नानक देव जी से दस वर्ष छोटे थे ।

बासरके में श्री तेजभान जी खेतीबाड़ी करते और कुछ व्यापार दुकानदारी आदि का काम भी करते थे । आपके चार भाई थे जो सब खेतीबाड़ी और व्यापार आदि का काम ही करते थे । सन् 1503 में (11 माघ संवत 1559) को आपका विवाह गांव सणखत्रे में देवी चंद बहल क्षत्रीय की बेटी राम कौर से हुआ। बासरके से सणखत्रा गांव 50-60 मील की दूरी पर है और यह क्षेत्र अब पाकिस्तान में है । आपके घर दो लड़कों - बाबा मोहन व बाबा मोहरी, तथा लड़कियों - बीबी भानी जी व बीबी दानी (निधानी) जी ने जन्म लिया।

खाते पीते परिवार के होने के साथ-साथ उस समय आप हिंदुओं में प्रचलित धार्मिक कर्मकांडों में बहुत श्रद्धा व विश्वास रखते थे। ये कर्म कांड थे - जप, तप, पुन्य, दान, देवी देवताओं की पूजा, हिंदू मंदिरों की यात्रा व तीर्थ स्नान, दिनों, त्यौहारों को शुभ-अशुभ के भेदों द्वारा मानना, ऊंच नीच जाति का भेद करना, खान-पान के मामले में शुचि आदि का भेद भाव रख कर विचरण करना आदि। ये संपूर्ण कर्म कांड, गुरू अमरदास जी ने भी सिखी में प्रवेश होने से पूर्व जी भर कर किये थे। सन 1521 में जब आपकी आयु 42 वर्ष की थी, आप हरिद्वार आदि तीर्थों की यात्रा पर गये। फिर ये कर्म कांड जो हिंदू धर्म की जी जान थे, को आप, 1541 ई. तक लगभग 20 वर्ष तक निभाते रहे। हिंदू रीति में

ब्राहमण की बहुत मान्यता है और इस पक्ष को पूरा करने के लिए वह ब्राह्मणों को, अपनी सामर्थ्ययानुसार उचित दान देने में, बहुत विश्वास रखते थे।

उस मत के अविलंबियों के मनों में पंडितों, ज्योतिशियों, साधु पहरावे में विचरण वाले पारवंडियों और ब्रह्मचारियों के प्रति बहुत ही श्रद्धा व सम्मान होता था । ये प्रवृतियां आज भी इस मत के धारणकर्ताओं में काफी देरवी जा सकती है । सिरवी धारण करने से पूर्व गुरू अमरदास जी के मन में भी इस प्राचीन मत के लिए अगम्य श्रद्धा थी, जिस के कारण आप की धार्मिक गतिविधियां, रूचिया व स्वभाव आदि उसी हिंदवाणी शैली के थे ।

यह बात पक्की है कि आप की लगन बहुत गंभीर और पक्की थी। यह बात अलग है कि साधना-विधि प्राचीन हिंदू मत की थी, जिससे केवल संबंधित फल ही आपको मिल सकता था । उस साधना विधि के द्वारा केवल मात्र कर्मकांडों का घर पूरा करने से प्रभु की प्राप्ति कैसे हो सकती थी ? पर हम आपकी बहुत गहरी व पक्की लगन को नजरअंदाज नहीं कर सकते । गंगा आदि नदियों व तीर्थ स्थानों के स्नान और तीर्थ यात्राएं करना कोई आसान काम नहीं था । फिर, उसी काम पर लगे रहना आपके समर्पण और दृढ़ वृत्ति को भली-भांति स्पष्ट करता है। यातायात के वर्तमान साधन - बसें, रेल-गाड़ियां, जहाज आदि का तो उस समय अस्तित्व ही नहीं था । घर ग्रहस्थी में से इतना समय निकाल लेने व यात्राओं की कठिनाइयां सहन करना, पक्की लगन के बिना संभव नहीं था । उस समय की यात्राएं रवतरे से रवाली नहीं हुआ करती थीं। यात्रियों के पास, तीर्थ-रटन का केवल एक ही चारा था कि वे शक्तिशाली काफिले या संग साथ बना कर, इकट्ठे हो कर यात्रा करें । याद रहे कि सन 1541 में आप 21वीं बार हरिद्वार गंगा की यात्रा पर स्नान के लिए गये थे।

आम तौर पर शाही सड़कों और आम चलते हुए ।तों के द्वारा ही यात्रा की जाती थी चाहे इस तरीके से कई बार अधिक लंबा रास्ता तय

करना पड़ता था । प्रमुख मार्गो के किनारे, समय की आवश्यकता अनुसार धार्मिक रूचियों वाले लोगों ने विश्राम गह बना रखे थे । ये विश्राम स्थल कई बार गांवों की प्रंचायतों अथवा नगरों के धनाढ्य व्यक्तियों द्वारा अपने धर्म प्रेम को प्रकट करने के लिए बनाये जाते थे और कई बार मंदिरों, शिवालयों वाले भी ऐसे अरामगृह जनता की भलाई को दृष्टि में रख कर कायम कर दिया करते थे । कई बार कई संत साधु और ब्राह्मण आदि धार्मिक रूचियों वाले व्यक्ति भी ऐसे टिकाने बना कर रखा करते थे जिस से एक तो किसी सीमा तक वे अपनी धर्म भावना को लोक सेवा की खुराक के बहाने शांत कर लिया करते थे, व दूसरे इन टिकानों पर टिकने वाले और रैण बसेरा करने वाले यात्री प्रस्थान के समय, इन संतों साधुओं, ब्राह्मण डेरेदारों की सामर्थ्यानुसार दान द्वारा सहायता भी कर जाते थे, जिससे उन की वाहवाही हो जाती थी ।

(ख) दुर्गा ब्राहमण व ब्रहमचारी साधू से मेल

पूर्वोक्त तरह का एक टिकाना, एक जरनैली सड़क के किनारे बसे मेहड़े गांव (परगना मुलाणा) के दुर्गा ब्राहमण ने भी बना रखा था। सन् 1541 में 21वीं बार हरिद्वार की यात्रा से वापिस आते हुए, इस टिकाने पर उस काफिले ने विश्राम किया जिस में (गुरू) अमरदास बतौर एक हिंदू यात्री शामिल थे। इस काफिले में एक ब्रहमचारी साधु भी शामिल था जो (गुरू) अमरदास जी की सेवा भावना और गुणों के कारण उनकी ओर स्वतः ही आकर्षित हो गया था।

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है कि दुर्गा ब्राहमण ने यह टिकाना यात्रियों के निवास के लिए बनाया था और इस से उसकी धर्मभावना भी किसी सीमा तक पूरी होती थी और आने जाने-वाले यात्री दुर्गा को दान दक्षिणा भी दे जाया करते थे । प्राचीन इतिहास के अनुसार, दुर्गा सामुद्रिक ज्योतिष विद्या की भी जानकारी रखता था। उसने अपने इस ज्योतिष ज्ञान के आधार पर (गुरू) अमर दास जी के चरणों व हाथों पर पदम रेखा बताई, जिसका उसके ज्योतिष के अनुसार बहुत महातम था और उस के अनुसार पदम रेखा वाले मनुष्य का भविष्य में चक्रवर्ती

राजा अथवा बहुत ही भाग्यशाली मनुष्य होने का योग होता है । जाते समय दुर्गा ने (गुरू) अमरदास जी से दान दक्षिणा लेते समय यह कह कर रस्मी तौर पर न भी की कि भविष्य में जब (गुरू) अमरदास जी की पदम रेखा का प्रताप प्रकट होगा, जब वे उस राज भाग के मालिक होंगे तो वह उन से मुंह मांगा दान प्राप्त करेगा। पदम रेखा और इसके योग की जानकारी मिल जाने के कारण यात्रियों के काफिले में शामिल ब्रहमचारी साधु (गुरू) अमरदास की ओर और अधिक प्रेरित और प्रभावित हुआ ।

हिंदू संस्कारों के कारण (गुरू) अमरदास जी ब्रहमचारी साधु की सेवा भी अधिक करने लग गये। ब्रहमचारी भी उनको अच्छा भक्त जान कर उनके हाथों तैयार किया भोजन खाने लग गया, जबकि पहले वह केवल अपने हाथ का पका भोजन ही सेवन करने की कर्मकांडीय व्यवस्था का धारणकर्ता था।

इसी प्रकार यात्रा तय करते-करते काफिले सहित (गुरू) अमरदास जी तथा ब्रहमचारी साधु बासरके पहुंच गये। एक दिन अचानक ब्रहमचारी साधु ने (गुरू) अमरदास जी से पूछ लिया कि आपका गुरू कौन है? (गुरू) अमरदास जी ने जब यह वास्तविकता बताई कि उन्होंने अभी तक कोई गुरू धारण नहीं किया है। तो ब्रहमचारी साधु लाल पीला हो गया। उसने इस बात का बहुत बुरा मनाया कि इस तथ्य का उस को पहले पता क्यों नहीं लगा? उसकी रीति के अनुसार *निगुरे* के हाथों भोजन खाना तो कहीं, निगुरे का तो संग या दर्शन मात्र भी शास्त्रों के अनुसार बहुत बुरा काम है। यह सब कुछ कह कर ब्रहमचारी दुखी होता हुआ (गुरू) अमरदास जी से नाराज हो कर सदा के लिए नाता तोड़ कर चला गया।

एक अरसे से (गुरू) अमरदास जी तीर्थ यात्रा गंगा स्नान, देवी देवताओं की पूजा, ब्राहमणों को पुन्य दान, तथा जाति पात के भेदभाव पर सख्ती से चलने के कर्मकांडों को मानते हुए व्यवहार में ला रहे थे। मन की भटकन बिल्कुल नहीं मिट पाई थी। ब्रहमचारी की बात (गुरू) अमरदास जी के मन पर गहरा घाव कर गई। उन्होने मन में फैसला किया कि वे आत्मिक मार्गदर्शन के लिए अब किसी पूर्ण पुरूष की अगवाई प्राप्त करके ही रहेंगे।

4. श्री गुरू अंगद देव जी से मिलाप

(क) बीबी अमरो जी द्वारा बाणी पढ़ना:

संसार के अनेकों महापुरूषों की जीवन गाथाएं पढ़ने पर पता चलता है कि जब किसी मनुष्य ने अपने जीवन के लिए कोई उच्च आदर्श निश्चित कर लिया हो, उसकी प्राप्ति के लिए इरादा भी नेक हो, तो प्रकृति उस की सफलता के लिए स्वयं ही कोई न कोई स्रोत बना देती है। यही बात गुरू अमरदास जी के साथ हुई।

अभी कुछ समय पूर्व (गुरू) अमरदास जी के भतीजे का विवाह श्री गुरू अंगद देव जी की बेटी, बीबी अमरो के साथ हुआ था। यह प्रश्न तो उठ नहीं सकता कि इस समय तक (गुरू) अमरदास जी को, श्री गुरू अंगद देव जी के व्यक्तित्व के बारे में कोई जानकारी ही न मिली हो। इस समय तक गुरू नानक साहिब के चहुकुंटी प्रचारक दौरों के बारे भी कुछ न कुछ जानकारी पंजाब के प्रत्येक निवासी को अवश्य मिल चुकी थी । आपके भतीजे की शादी गुरू अंगद देव जी की पुत्री के साथ हुए अभी कुछ मास ही हुए थे । इसलिए सुने-सुनाये विचारों के द्वारा भी वे गुरू अंगद जी की महानता से अनभिज्ञ नहीं थे । केवल मात्र पुराने हिन्दू संस्कार, यथा तीर्थ यात्राएं, जप तप करने, ब्राहमणों को पुन्य दान करना आदि ही गुरू अंगद देव जी के साथ मिलाप की राह में रूकावट नहीं थे, बल्कि समधि होने के नाते, रिश्तेदारी के अहसास तथा आयु में गुरू अंगद देव जी से बड़े होने के विचार आदि भी गुरू अंगद देव जी के संग मिलाप की राह में भारी रूकावट बने पड़े थे ।

मन की भटकन, अशांति और ब्रहमचारी साधु द्वारा दर्शाई गयी बातों ने(गुरू) अमरदास जी के मन में, गुरू अंगद देव जी को मिलने की तीव्र इच्छा उत्पन्न कर दी। बीबी अमरा जी की आयु 15 वर्ष के लगभग ही थी, पर गुरू अंगद देव जी की सिखी की तालीम के कारण वे नित्य प्रति अमृत बेला में बाणी पढ़ने की आदी थीं। एक दिन बीबी जी अमृत बेला में गुरू नानक देव जी का नीचे लिखा शबद मीठी तान में पढ़ रही थीं,

जिसे वैसे का वैसा सुनने का अवसर (गुरू) अमरदास जी को प्राप्त हुआ।

करणी कागदु मनु मसवाणी,
बुरा भला दुइ लेख पए ।।
जिउ जिउ किरतु चलाए तिउ चलीऔ,
तउ गुण नाही अंतु हरे।।१।।
चित चेतसि की नही बावरिआ।।
हरि बिसरत तेरे गुण गलिआ।।१।।रहाउ।।
जाली रैनि जालु दिनु हूआ,
जेती घड़ी फाही तेती।।
रसि रसि चोग चुगहि नित फासहि,
छूटसि मूढ़े कवन गुणी।।२।।
काइआ आरणु, मनु, विचि लोहा,
पंच अगनि तितु लागि रही।।
कोइले पाप पड़े तिसु ऊपरि
मनु जलिआ संनी चिंत भई।।३।।
भइआ मनूर कंचनु फिरि होवै,
जे गुरु मिलै तिनेहा।।
ऐकु नामु अंमृतु उहु देवै,
तउ नानक त्रिसटसि देहा।।४।। (मारू महला घर १, पृ ९९०)

यह शबद उस समय की बोली जाने वाली भाषा में होने के कारण, इसे समझने में कोई कठिनाई नहीं थी। शबद का तत्व सार सीधा ही हृदय की गहराई में बस गया। शबद का भाव इस प्रकार है:

"हे परमेश्वर, तेरे गुणों का कोई अंत नहीं है। जीवों की करणी मानो कागज़ है और मन दवात है। मन रूपी दवात में मनोवृत्तियों और पुराने कमाए हुए संस्कारों के कारण जीव अपनी करनी रूपी कागज पर बुरे तथा भले दो प्रकार के लेख लिखता है।

गुरू नानक देव जी चेतावनी देते हुए समझाते हैं कि हे पगले जीव! तूं ईश्वर को क्यों नहीं याद करता? ईश्वर को भूलने से तेरे आत्मिक गुणों का विनाश हो रहा है ।

हे जीव! तेरी दूशित मनोवृति के कारण, तेरे जीवन का प्रत्येक दिन-रात तुझे माया के मोह में फंसाने के लिए जाल बने हुए हैं। इस मायावादी मनोवृति के कारण तेरे जीवन की सब घड़ियां, तेरे आत्मिक जीवन को तबाह करने के लिए फांसी बनी हुई हैं। विकारों की खुराक को तूं रस ले ले कर खा रहा है और माया के बंधनों में अधिक-से-अधिक फंस रहा है। हे मूर्ख मनुष्य! इन में से कौन से गुणों के बल से तूं माया के मोह से छुटकारा पा सकेगा?

काया रूपी भट्ठी में मन रूपी लोहा पड़ा हुआ है और उस को काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार आदि पांच तरह की आग लगी हुई है। विकारों की पांच चिता रूपी अग्नियों को और अधिक प्रज्वल्लित करने के लिए पाप रूपी कोयले ताव दे रहे हैं । चिंता रूपी(सन्नी) इस मन को हर ओर से जलाने में मदद कर रही है।

यदि पूरा सतगुरू मिल जाय, तो वह विकारों की अग्नि से जल चुके मन रूपी लोहे को भी अपने स्पर्श से सोना बना लेता है । सतगुरू जीव को आत्मिक जीवन देने वाले परमेश्वर का नाम अथवा प्यार प्रदान करता है जिससे मनुष्य का शरीर टिक जाता है, अर्थात् मन विकारों से पूरी तरह हट जाता है।"

(ख) (गुरू) अमरदास जी का खडूर साहिब आना

अपने आत्मिक विचार की इतने ऊंचे स्तर की बाणी को, मीठी सी सरल आवाज में बीबी अमरो जी से क्या सुना कि (गुरू) अमरदास सदा के लिए गुरू घर के ही हो कर रह गये। वे बीबी अमरो जी को साथ ले कर गुरू अंगद देव जी के दर्शन करने के लिए उसी दिन ही खडूर साहिब आ गये। सतगुरू अंगद देव जी ने समधि के रिश्ते के अनुसार (गुरू)

अमरदास जी का सम्मान करना चाहा, पर आपने गुरू अंगद देव जी को मिलते ही अपना मंतव्य स्पष्ट कर दिया। आपने साफ बता दिया कि मैं बतौर समधि नहीं, एक जिज्ञासु के रूप में आप के पास उपस्थित हुआ हूं और आपका सिख बनना चाहता हूं । यह घटना सन् 1541 की है।

गुरू अंगद देव जी ने परमेश्वर प्राप्ति हेतु तथा आदर्श जीवन जीने के लिए (गुरू) **अमरदास** जी को बाणी के संग जोड़ा। गुरू नानक **साहिब** की बाणी का **संग्रह तो गुरू** अंगद साहिब के पास मौजूद ही था। अपनी **बाणी भी** गुरू **अंगद देव जी ने** उस संग्रह में शामिल कर ली थी। गुरू अंगद देव जी ने **(गुरू) अमरदास** जी को सिखी धारण करवाते समय यही उपदेश किया कि सिख बनने के लिए बाणी के महान् उपदेशों को अपने व्यवहारिक जीवन में उतारना जरूरी है ।

(गुरू) अमरदास जी को स्पष्ट बताया गया कि **सिखी केवल सिद्धांतों का पुलंदा नहीं, व्यवहारिक तौर पर आदर्श जीवन जीने की कला है।** सिखी धारण करने के लिए पुराने पराधर्मी और मनमती संस्कारों, कर्मकांडों, विचारों आदि को त्याग कर केवल मात्र गुरू के दर्शाये जीवन मार्ग अथवा गुरमत को आधार बनाना आवश्यक है। यह नित्य प्रति सतसंग में शामिल हुए बिना संभव नहीं हो सकता है। परमेश्वर एक आत्मिक उन्नति है और उस को प्राप्त करने के लिए गुरू द्वारा दर्शाये विवर्जित कर्मों से बचना जरूरी है। वाहिद परमेश्वर की समीपता प्राप्त करने के लिए भाँति-भाँति के देवी देवताओं को मन से पूरी तरह निकाल कर परमेश्वर के साथ दिल और मन से सच्चा प्यार करना जरूरी है। तीर्थों के रटन, नाम मात्र तथा कथित पवित्र नदियों (गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, कृष्णा, कावेरी, गोदावरी) के स्नान करके, शरीर को अनावश्यक दुख देने, तोता रटन अभ्यास करने, ब्राहमणों को पुन्य दान आदि के कर्म-कांड ईश्वरीय कर्म नहीं कहे जा सकते। तब इन सब का पूरी तरह त्याग कर देना चाहिए। जाति पाति के भेद-भाव को पूरी तरह अपनी गर्दन से उतार कर मनु-समृति के श्रद्धालु ब्राहमणों को वापिस दे देना जरूरी है। संसार के प्रत्येक मनुष्य को एका-एक परमेश्वर का बच्चा मान

कर, प्रत्येक मनुष्य को जाति पाति, देश, लिंग नस्ल भेद भावों से ऊपर उठकर, बराबर का भाई-भाई समझना आवश्यक है। अपने मन से काम, कोध, लोभ, मोह अहंकार, निंदा, चुगली, ईर्ष्या, तृष्णा आदि की मैल उतारने के लिए केवल सतसंग में शामिल ही नहीं होना है, बल्कि श्रद्धा सहित सत्संगियों की सेवा भी करनी है। जाति पाति की ओछी महानता तथा लोकलाज के भय आदि त्याग कर श्रद्धा और उत्साह द्वारा संगत की सेवा करना *निर-अहंकार* बनाने में सहायक होता है। गुरू अंगद देव जी ने यह बात भी स्पष्ट कर दी कि गुरमत धारण करने के लिए आयु को भी राह की रूकावट नहीं बनने देना चाहिए। सिखी की कमाई के लिए प्रत्येक आयु नेक और योग्य है, केवल मन बनाने की जरूरत है। याद रहे कि यह सिखी उपदेश प्राप्त करते समय (गुरू) अमरदास जी की आयु लगभग 62 वर्ष की थी।

(ग) सिखी की कमाई तथा सेवा

(गुरू) अमरदास जी ने यह उपदेश आम संसारी जिज्ञासु की तरह ग्रहण नहीं किया। आप गुरू अंगद देव जी का एक-एक उपदेश पूरी तरह व्यवहार में लाये। इक्कीस वर्ष से तीर्थस्थानों के कर्मकाडी के लिए पुराने संस्कारों से जान छुड़वाना आसान नहीं था। जाति पात के भेद भाव छोड़ पाना, क्षत्रियों की ऊंची जाति में जन्म लेने के अहंकार से छुटकारा प्राप्त कर पाना अति कठिन बात थी। संगत की सेवा में तो प्रत्येक ऊंची व नीची जाति के लोगों की सेवा करनी पड़ती । सभी मनुष्यों को भाई-भाई समझना जरूरी था।

(गुरू) अमरदास जी इस समय स्वयं गुरू अंगद देव जी से 25 वर्ष बड़े थे। गुरू अंगद देव जी के साथ समधिपन का विचार भी लोकलाज के आधार पर त्याग पाना आसान बात नहीं थी । (गुरू) अमरदास जी आर्थिक दृष्टिकोण से, संपन्न और सुखी थे । घर का गुजारा बहुत आसानी से चल रहा था। नित्य प्रति तीर्थ यात्रा जैसे व्यर्थ कर्म पर व्यय करना और अपने रोजगार को बार-बार ठप्प करना, कमजोर आर्थिक दशा के रास्ते

में, आदि काल से ही रूकावटें बनते रहे हैं । पर (गुरू) अमरदास जी की लगन इतनी पक्की थी और श्री गुरू अंगद देव जी का उपदेश आपको इतना अच्छा लगा कि आपने अपने सभी पुराने संस्कारों तथा कर्म कांडों के जाल को एकदम तोड़ दिया, और केवल मात्र गुरू घर के हो कर रह गये।

खडूर साहिब में (गुरू) अमरदास जी ने सिखी की व्यवहारिक कमाई तथा संगत की सेवा का बीड़ा उठा लिया। आलस, लोक-लाज, पुराने संस्कार आदि सब का त्याग करके लंगर की सेवा, बर्तन साफ करने की सेवा, कुएं से पानी निकालकर संगत को स्नान करवाने की सेवा, गर्मियों में संगत में पंखे से हवा करने की सेवा आदि में पूर्ण श्रद्धा भावना से जुट गये। *"हथ कार वल, चित करतार वल"* ये आपकी जीवन शैली बन गये। सेवा के अतिरिक्त गुरू अंगद देव जी को अमृत बेला में स्नान करवाने के लिए रोजाना ताजा पानी भर कर लाने की महान सेवा उन्होंने अपने जिम्मे ली। बरसात, आंधी, गर्मी, सर्दी और हर समय उन्होंने गुरू अंगद देव जी को अमृतबेला में स्नान करवाने के लिए *गुरू दे खूह* से ताजा जल भर कर लाने की निरंतर सेवा की । फिर यह सेवा इतने लंबे समय तक निभाई कि देखने वाला दंग रह जाय। सन् 1541 से 1552 तक 11 वर्ष का समय गुरू अमरदास जी की महान सेवा, समर्पण व परिश्रम का समय है। (गुरू) अमरदास जी की अपनी आयु के मुताबिक यह काल उनकी 62 से 73 वर्ष तक की आयु का है।

आज के बहुत से लिखारियों के अनुसार गुरू अंगद देव जी के स्नान के लिए जल, ब्यास नदी से लाया जाता था, ब्यास नदी पर पुराने ग्रंथों अथवा अभिलेखों में ऐसी बात का विवरण कतई नहीं है। सरदार जोध सिंघ जी की रचना *लाइफ़ आफ़ श्री गुरू अमरदास* (1953) में यह उल्लेख है कि जल *गुरू के खूह* से ही लाया जाता था। ब्यास नदी जो 8-10 किलोमीटर दूरी पर है, की बात श्रद्धावश *गुरू महिमा* अथवा *सेवा*

महिमा की अतिश्योक्ति के द्वारा वर्णन करने के कारण हुई है। **इतनी दूरी से आधी रात को पानी लेने जाना ताकि सवा पहर रात रहते तक वे जल को गुरू अंगद देव जी के स्नान के लिए पेश कर सकें, बहुत युक्ति संगत अथवा तर्कपूर्ण बात भी नहीं लगती है। जबकि** खडूर साहिब में ही *गुरू का खूह* मौजूद हो । पता नहीं लिखारियों ने जल के लिए गुरू के खूह की जगह ब्यासा नदी किस कठिनाई को हल करने के लिए अंकित कर दी जो चलते-चलते आगे चल पड़ी और आज के दौर क लगभग सभी लिखारी ब्यासा पर ही जोर दिये जा रहे हैं। रोजाना अमृत बेला से पहले ही, लगातार 11 वर्ष तक कुएं से पानी निकाल कर अपने गुरू पातशाह के स्नान के लिए प्रस्तुत करना कोई मामूली परिश्रम की बात नहीं । निश्चित तौर पर आपकी दृढ़ता , परिश्रम तथा लगन ला-जवाब और बेमिसाल प्रतीत होते हैं। आयु 62 से 73 वर्ष के बीच में जा रही हो और सर्दी, गर्मी, अंधेरी, तूफान, वर्षा किसी की भी परवाह न हो, काली बोली रात हो, हर ओर आधी रात को सुनसान हो, लगातार गुरू पातशाह के स्नान के लिए जल ले कर आना, सेवा के इतिहास में प्रकाश स्तंभ का काम करता रहेगा। इस सेवा के साथ-साथ लंगर तैयार करना, बर्तन साफ करना, संगत के स्नान और लंगर के लिए जल लाना, पंखे से हवा करना, आदि की सेवाएं भी जारी थीं।

(घ) जोगी शिवनाथ व (गुरू) अमरदास जी

(गुरू) अमरदास जी की सेवा के समय की जीवन साखियों में खडूर साहिब के एक जोगी का वर्णन आता है जिसको साखियों में खडूर साहिब का *तपा* कहा गया है। नाम इसका था शिवनाथ और था यह जोग मत का धारणकर्ता। उस समय पंजाब तथा उत्तरी हिंदुस्तान में नाथ पंथियों, जोगियों और जंत्रमंत्रों वाले *साकतों* का बड़ा जोर था। एक ओर तो इन्होंने घर घाट त्याग कर साध-मलंग बनने वाला रास्ता अपनाया, दूसरी ओर रिद्धियों-सिद्धियों के माया जाल द्वारा आम जनता को प्रभावित

कर अपना मुरीद बनाने का यत्न किया। "संसार मिथ्या है" का सिद्धांत ऐसे घटिया तरीके से प्रचारित किया कि समाज का आम व्यक्ति भी संसार से भागने की रुचियों का धारणकर्त्ता हो गया। उसमें अपने प्रति, समाज के प्रति, परिवार के प्रगति कर्त्तव्यों को पूरा करने की भावना भी समाप्त हो गयी । मुल्क में किसी का राज्य कहो, जनता पर कोई अत्याचार करे, धक्का जबर्दस्ती करे, इन जोगियों की चेतना पर कोई असर नहीं पड़ता था। समाज, भाईचारे तथा मानवता के प्रति अपने कर्त्तव्यों के बारे में सोचने को ये व्यर्थ समझते थे, क्योंकि इनके अनुसार सारा संसार ऐसा मिथ्या छल था जिस में सिवाय संसार त्याग के उनके पास कोई और प्रावधान न था।

संसार तथा घर-घाट त्यागने की बुरी रुचि ने एक ओर तो इस देश को सीमा से अधिक कमजोर बना दिया था और दूसरी ओर इन नाम मात्र के त्यागियों के मनों में अहं, ईर्ष्या, नफरत तथा अपनी पूजा और सम्मान करवाने की बेकार लालसा अत्पन्न कर दी थी, जिस के कारण ये लोग मानसिक शांति से भी हाथ धो बैठे थे ।

गुरू नानक पातशाह का मत इस मामले में बड़ा साफ और स्पष्ट था । उस मत में संसार तथा परिवार को त्याग कर साधु बनने को जीवन संघर्ष से भगौड़ा हो जाने के बराबर माना गया है। किसान से लेकर मेहनतकश समाज पर अर्थहीन जोगी समाज का भार डालना धर्म नहीं, अनर्थ है। गुरू नानक देव जी ने **नाम जपने, मेहनत करने तथा बांट कर खाने का** सुनैहरी सिद्धांत दिया जिस के अनुसार ईश्वर के साथ प्यार सहित जुड़ना तो अनिवार्य करार कर दिया गया पर साथ ही हर व्यक्ति को परिश्रम करने तथा फिर सारे मानवीय भाईचारे को अपना भाई समझ कर, मिल-बांट कर खाने का निर्देश दिया। संसार तथा परिवार को त्यागने की जगह पर **संसार और परिवार के मोह को त्यागने की महान शिक्षा दी ।**

संसारिक तथा पारिवारिक जीवन व्यतीत करते हुए इनके मोह से

कैसे निर्लिप्त रहना है- यह हकीकत समझाने के लिए कंवल फूल तथा मुर्गाबी की मिसालें पेश कीं। कमल फूल पानी में तैरता है, पर स्वयं पानी से जरा भी नहीं भीगता है। इसी प्रकार आदर्श जीवन वाला जिज्ञासु संसार तथा परिवार में रह कर भी उसके मोह से निर्लिप्त रहता हुआ परमेश्वर के साथ अपना ध्यान जोड़े रखता है:

जैसे जल महि कमलु निरालमु, मुरगाई नैसाणै।।

सुरति सबदि भव सागरु तरीऔ, नानक नाम वखाणै।।

(रामकली महला १)

आदर्श गृहस्थी जीवन को रूपमान करते हुए गुरमत के ग्रहस्थ मार्ग को केवल एक और जीवन युक्ति ही नहीं माना, बल्कि आदर्श धर्मी ग्रहस्थी जीव को एक सफल जीवन युक्ति के तौर पर सम्मानित किया है। **ग्रहस्थी रहते हुए मनुष्य ने विकारों से बचना है और सद्गुण धारण करने वाले रास्ते पर चलना है।** यथा:

सो गिरही, जो निग्रह करै।। जपु तपु संजमु भीखिआ करै।।

पुंन दान का करे सरीरु।। सो गिरही गंगा का नीरु।।

(रामकली महला १)

गुरमत के महान विद्वान भाई गुरदास जी ने तो अनेकों मिसालें दे करं, गुरमत के दर्शाये धर्म-ग्रहस्थी मार्ग को सब से बढ़िया और प्रधान धर्म माना है। यथा:

जैसे सर सरिता सकल मैं समुंद्र बडो,

मेरु में सुमेरु बडो, जगत बखान है।।

तरवर दिखे जैसे चंदन बिरख बडो,

धातु में कनिक अति उतम कै मान है।।

पंछनि में हंस, मृगराजन में शार्दूल

रागन मे सिरी राग, पारस पाखान है।।

गिआनन मै गिआन अर धिआनन मै धिआनु गुर,

सकल धरम मै ग्रिहसत परधान है।। (कबित ३७६)

गुरू नानक देव जी ने जब अपने सत्य धर्म का भरपूर प्रचार किया और कई जगह पर जोगियों का गलत प्रभाव कम हो गया, तो यह बात तो स्वाभाविक ही थी कि वे गुरमत अथवा गुरू नानक पातशाह का सामना मजबूत हो कर करते। सुमेर पर्वत, गोरखमता, कदली वन आदि अनेकों जगह पर जोगियों के झुंडों के झुंड ज्ञान युद्ध अथवा सैद्धांतिक गोष्ठियां करने हेतु एकत्र हुए। वे हर जगह पर अपने थोथे और फोकट सिद्धांतों के कारण गुरू नानक साहिब से अच्छी तरह पराजित हुए। अनेकों जोगी तो अपनी मनमत को छोड़ कर गुरू नानक मत के धारणी बने। कुछेक अड़ियल हठ करके जोग मत के बीज का नाश होने से बचाने का यत्न करते रहे। वैसे मन ही मन इन्हें परले दर्जे की ज़लालत का मुंह देखना पड़ा। अचल बटाले में शिवरात्रि के मेले के समय जोगियों ने गुरू नानक पातशाह के साथ अंतिम असफल ज्ञान युद्ध छेड़ा जिस में आम जनता के भरे इजलास में गुरू नानक साहिब ने उनके थोथे तथा फोकट मत का बखिया उधेड़ दिया।

गुरू नानक साहिब ने तो वास्वत में कभी भी ग्रहस्थ का त्याग नहीं किया था। हां, परोपकार की भावना के कारण जलते हुए जनमानस में सत्य धर्म की शीत्तलता पहुंचाने के लिए लंबे-लंबे प्रचारक दौरे जरूर किए जिनको *उदासियों* की संज्ञा दी गयी। अचल बटाले के मेले में, गुरू नानक साहिब को आम ग्रहस्थियों के लिबास में देख कर जोगियों ने अपनी अल्प-बुद्धि की कसौटी के आधार पर उन पर कटाक्ष किया, जिस में घर-घाट छोड़कर त्यागी साधु बनने को दूध तथा ग्रहस्थी मार्ग को *कांजी* बता कर हीन प्रदर्शित करना चाहा। आम जनता में जब जोगियों को यह कह कर जलील किया गया कि हे मूर्ख जोगियो यदि तुम अपने आप को ग्रहस्थियों से इतना ही अधिक ऊंचा, अच्छा तथा पवित्र मानते हो तो फिर क्या कारण है कि उन अपवित्र तथा नीच ग्रहस्थियों के घर

से ही अपनी उदर पूर्ति हेतु भिक्षा मांगने जाते हो? इस गोष्ठी का भाई गुरदास जी ने बहुत सुंदर ढंग से वर्णन किया है। यथा:

"खाधी खुणसि जुगीसरां, गोष्टि करनि सभे उठि आई।।
पुछे जोगी भंगरनाथु, तुहि दुध विचि किउ कांजी पाई।।
फिटिआ चाटा दुध दा, रिड़किआं मखणु हथि न आई।।
भेखु उतारि उदासि दा, वति किउ संसारी रीति चलाई।।
नानक आखै भंगरि नाथ, तेरी माउ कुचजी आही।
भांडा धोइ न जातिओनि , भाइ कुचजे फुलु सड़ाई।।
होइ अतीतु ग्रिहसति तजि फिर उनहु के घरि मंगणि जाई।।
बिन दिते कछु हथि न आई।। (वार १/४०)

अचल बटाले में, सत्य पूछो तो जोगियों की कमर ही टूट गयी थी। आम जनता में उनका थोथापन उघड़ गया और गुरू नानक मत का बोलबाला हुआ। पर बीज मात्र कई जगह पर अपना आप बचा कर, बचे-खुचे जोगी अपनी साख दुबारा बनाने के लिए हाथ पैर मार रहे थे। खडूर साहिब में भी जोगियों का एक मजबूत मट्ठ था। यहां पर मट्ठ का इंजार्च एक कनपटा शिवनाथ जोगी था। जब खडूर साहिब में गुरू अंगद देव जी ने सिखी का मजबूत केन्द्र बना कर गुरमत मारतंड की किरणें बिखेरीं तो यह जोगी अपने मत के थोथेपन को ध्यान में रख कर कहीं बाहर भाग गया। इसने इस आशा से चुप्पी साध ली कि आने वाले समय में कभी तो भले दिन आयेंगे। जोगी का डेरा खाली-सा हो गया। कई वर्ष और मास जोगी वापिस नहीं आया। कइयों ने समझा कि जोगी कालवास हो गया होगा, पर शिवनाथ कनपटे का शरीर देवताओं की इस पवित्र भारत भूमि पर अभी साक्षात कायम था। भटकते-भटकते फिर खडूर साहिब आ गया। उसके क्रोधी व अहं स्वभाव से हर कोई अच्छी तरह परिचित था । गुरू साहिब के खडूर साहिब जाने से पहले जोगी शिवनाथ का नगर में बहुत प्रभाव तथा दबदबा-सा था। अब तक खडूर

साहिब के लोग गुरू अंगद देव जी के महान, मीठे तथा मृदुल व्यक्तित्व और उनके उपदेशों से भी कुछ न कुछ अवश्य ही प्रभावित हो गये थे। खडूर के लोगों ने जोगी शिवनाथ को पूरी तरह नजर अंदाज कर दिया और किसी ने उसको पूछा तक नहीं। जोगी को ग्लानि हुई और अब वह गरू अंगद देव जी से ईर्ष्या करने लगा। वह किसी ऐसे अवसर की तलाश में था जबकि वह गुरमत प्रचार की राह में रूकावट खड़ी कर सके। करनी करतार की यह हुई कि उस साल बरसात बिल्कुल नहीं हुई। किसानों की खेती-बाड़ी वर्षा पर ही निर्भर थी। भाद्रव भी निकलता दिखाई दे रहा था। वर्षा न होने के कारण किसान दुखी थे। हरी खेती भी सूखने लगी। बरसात तो ईश्वर का खेल है, कभी पहले और कभी बाद में होती है। और कभी बहुत अधिक और कभी कम।

कनपटे ने अवसर से फायदा उठाने के लिए हाथ पैर मारने शुरू किये, लोगों को कहने लगा- "वर्षा कैसे हो? तुम्हारे पापों का फल तो अंत में मिलना ही है न! शास्त्रों की मर्यादा तोड़ कर तुम ने हम ब्रहमचारी साधुओं को छोड़ कर गुरू अंगद देव जी को गुरू बना लिया है। जो एक ग्रहस्थी और बाल बच्चेदार है। गुरू केवल हम बन सकते थे। हमें छोड़ कर गुरू जी को मान्यता देने से यह दैवी उपद्रव तो होना ही था। कुछ बुद्धिमान लोगों ने गुरू जी के महान गुणों का भी वर्णन कर दिया और साफ कहा कि गुरू जी सब को शुभ व्यवहार और भलाा करने का उपदेश देते हैं। प्रभु, प्रेम का साक्षात स्वरूप है। इस बात ने बल्कि जलती हुई पर तेल डाला। जोगी कहने लगा कि यदि गुरू साहिब इतने कलावान हैं तो उनको कहो, वर्षा करवा दें। *विनाश काले विपरीत बुधे,* इस सीमा तक ईष्यालु कनपटा आगे बढ़ गया और कहने लगा, कि तुम गुरू अंगद देव जी को खडूर साहिब से निकाल दो तो स्वयं ही वर्षा करवा लूंगा।

गुरू जी तो सदा ईश्वरेच्छा में राजी रह कर उद्यम करने की प्रेरणा करते थे, पर गांव के किसान शिवनाथ की बातों में आ गये। कुछ किसान कान भरे जाने पर गुरू जी के पास आये और आ कर कहने लगे कि या

तो वर्षा करवा दो या नगर छोड़ दो क्योंकि जोगी कनपटे के अनुसार वर्षा आपके कारण रूकी हुई है। जमींदार तंगी के हाथों बहुत दुखी थे, इसी तंगी के कारण ही वे गुरू साहिब से ईमान त्याग बैठे थे।

धर्म तथा भक्ति के मूल तत्व व सिद्धांत ईश्वरेच्छा के प्रति समर्पण को दृढ़ करवाने तथा लोगों के भ्रम को जड़ से काटने के लिए आपजी ने खडूर साहिब छोड़ दिया और भैरोवाल आदि से होते हुए खान रजादे की जूह में जा डेरा लगाया । तुड़ आदि गांव में प्रचार किया। टिकाना करने वाली जगह पर गांव छापरी बस गया।

इन दिनों में (गुरू) अमरदास जी गुरू आदेश के अनुसार किसी काम से अपने गांव बासरके गये हुए थे। खडूर साहिब वापिस आ कर सारे हालात देखे तो दंग रह गये और बड़े दुखी हुए। गुरू अंगद देव जी जैसी धर्म परोपकार तथा ईश्वरीय प्यार की साक्षात मूर्ति के साथ ईर्ष्या करके निरादर करने वाले शिवनाथ कनपटे के साथ सही ढंग से निपटने का निर्णय (गुरू) अमरदास जी ने कर लिया। सच्चा गुरसिख अपने गुरू का निरादर होता कैसे सह सकता है? (गुरू) अमरदास जी यह बात भी भली भांति समझते थे कि जोगी शिवनाथ लोगों को सत्य धर्म का उपदेश देने की जगह पर वहमों-भ्रमों में भटकायेगा और इस प्रकर उन का आत्मिक जीवन भी बर्बाद कर देगा।

लगभग सारा नगर ही जोगी की बातों में आ गया था और गलत रास्ते पर चल रहा था। ऐसी दशा में (गुरू) अमरदास जी की जगह पर यदि कोई और होता तो विरोधियों की अधिसंख्या को देख कर जरूर घबरा जाता। (गुरू) अमरदास जी ने महान दृढ़ता का प्रमाण पेश किया। आप नगर के हर मुखी को मिले। अपने वचनों द्वारा उनकी अंतरआत्मा को झकझोर दिया और नगर के वासियों तथा मुखियों को उनकी मूर्खता तथा कनपटे जोगी की कुटिलता और ईर्ष्या को उभार कर नंगा कर दिया। आठ दिनों से भी अधिक समय हो चुका था। पर वर्षा फिर भी नहीं थी हुई । किसानों तथा नगर वासियों के द्वारा (गुरू) अमरदास जी ने शिवनाथ

को सीधी बात कह दी कि अब वह अपनी करामात से वर्षा करे, नहीं तो अपने ईष्यालु कर्मो का फल भुगतने को तैयार हो जाये।

बिल्कुल वर्षा न होने के कारण आगे ही किसान बहुत तंग आ चुके थे। तिस पर (गुरू) अमरदास जी ने उन्हें उनकी महान गलती और अपराध का अहसास करवा दिया था। गुरू अंगद देव जी के प्यारे, मृदुल तथा परोपकारी व्यक्तित्व और उन जैसे व्यक्ति के साथ किये गये दुर्व्यवहार के कारण, नगरवासी तथा किसान, बार-बार पश्चातांप कर रहे थे। उधर गुरू अंगद देव जी से बेमुख हुए और इधर शिवनाथ जोगी की वर्षा करवा देने की डींग पूरी न होती देख कर, वे दुखी थे। जोगी शिवनाथ क्रोधी स्वभाव का ईर्ष्यालु व्यक्ति था।

वह वर्षा करवा सकने का तुक्का न चल सका। लोगों के तानों आदि को न सहन करते हुए, बहाने बाजियां करने लगाा। कभी कहे कि नगर वालों ने गुरू अंगद देव जी को मान कर बहुत बड़ा पाप किया था, इसलिए कनपटे के मंत्र आदि भी वर्षा करवा सकने में समर्थ नहीं हो रहे। लोग अभी तक सब बात समझ चुके थे। यह बात भी वे समझ चुके थे कि गुरू अंगद देव जी को ईर्ष्यावश नगर में से निकलवाने का महा-अपराध शिवनाथ ने करवाया था। लोगों को जब वास्तविकता पता चली तो वे नियंत्रण से बाहर हो गये। उन्होंने शिवनाथ जोगी को गले से पकड़ कर खींचना शुरू कर दिया और ऐसा घसीटा कि शिवनाथ जोगी मर गया। कुदरत करतार की, इस समय पर खडूर साहिब में आसमान पर बादल छा गये और भरपूर वर्षा हुई । पुरातन ग्रंथों में यह भी लिखा मिलता है कि (गुरू) अमरदास जी ने स्वभावत: यह कह दिया था कि वर्षा केवल उन खेतों में होगी जिनमें शिवनाथ को खेतों में रगड़ें लगंगी। कुछ भी हो, इस घटना से (गुरू) अमरदास जी की गुरू के प्रति अनन्य श्रद्धा और भक्ति भावना बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है।

गुरू अंगद देव जी को जब इस कार्रवाई के बारे में पता चला तो आपने (गुरू) अमरदास जी तथा खडूर साहिब के जिमींदार के इस कर्म

को बिल्कुल स्वीकार नहीं किया। (गुरू) अमरदास जी ने तो अपना कर्त्तव्य पूरा किया था कि सतगुरू जी से ईर्ष्या कर के उनका निरादर करने वाले को उसके किये की सजा मिलनी चाहिए, पर गुरू अंगद देव जी ने क्षमा करने का महान उपदेश दृढ़ करवाया। गुरमत का उपदेश भी स्पष्ट है कि यदि करामाती शक्तियों के साथ लोगों को झुका लें तो इस में लाभ की जगह हानि अधिक होती है। इससे मन में अहं पैदा होता है जिस के कारण मनुष्य ऊंची आत्मिक अवस्था से नीचे आ गिरता है।

कुछ भी हो, (गुरू) अमरदास जी की इस जीवन साखी के द्वारा यह तो बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि आपके मन में गुरू अंगद देव जी के लिए कितना प्रेम और सिखी में कितना गहरा विश्वास था।

(ङ) गोइंदवाल नगर का बसाना एक बार सतगुरू अंगद देव जी का एक श्रद्धालु गोइंदा जो मरवाह क्षत्रीय जाति में से था, गुरू साहिब के पास आया और विनती की कि इस के पास काफी जमीन है और वह दरिया ब्यास के किनारे पर, जहां पत्तन वाली जगह है वहां नगर बसाना चाहता है। अनेक बार यत्न किया गया था। पर नगर नहीं बस सका, कभी कोई विघ्न और कभी कोई कठिनाई आ जाती थी । यह स्थान देखने में हर ओर से बड़ा खूबसूरत लगता था, पर इसका बसना बहुत कठिन हुआ पड़ा था। जगह बहुत मौके की व रमणीक थी।

पुराने ब्राहमणीय विश्वासों तथा भ्रमों वहमों के मारे लोगों में यह विचार जोर पकड़ गया था कि यह जगह *भारी* है। कहा जाता था कि यहां पर भूत प्रेत रहते हैं । गुरू अंगद देव जी ने निर्णय लिया कि लोगों के मनों में से भ्रम वहम निकाला जाये। किसी जगह को *भारा* तथा किसी को हल्का, किसी जगह को पवित्र तथा किसी जगह को अपवित्र करार देने के वहम से लोगों का छुटकारा करवाना बड़ा जरूरी था। पुराने चले आ रहे ब्राहमणी मत में बनारस को पवित्र धरती तथा *हाडंबा* को, जो साथ में ही लगने वाली धरती है, अपवित्र तथा भारी कह कर माना गया है। पापाचारी तथा दुशकर्मी व्यक्ति भी यदि बनारस में जा कर शरीर त्याग दें

तो वे नर्क भोगने के फल से बच जाता है, क्योंकि धरती का प्रभाव ही ऐसा है। यदि किसी धर्मात्मा तथा नेक चलन पुरूष का हाड़बे में जा कर देहांत हो जाय तो उस के सभी शुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं और वह नर्कगामी बन जाता है। ब्राहमणी वहम-भ्रम का, गुरू ग्रंथ साहिब की बाणी में बहुत जोदार खंडन किया गया है और स्पष्ट कहा गया है कि कठोर मन वाले दुराचारी की यदि बनारस की पुन्यभूमि में भी जान निकल जाय तो भी वह नर्क से नहीं बच सकता और यदि परमेश्वर का प्यारा कोई नेक चलन इनसान हाड़बे की धरती पर भी शरीर त्याग दे तो उसका कोई आत्मिक गुण नष्ट नहीं हो सकता बल्कि उस में अपने सतसंगियों को संसार सागर को सफलता से पार करा सकने की सामर्थय आ जाती है। यथा:

मनहु कठोरु मरै बानारसि,नरकु न बांचिआ जाई ।।
हरि का संतु मरे हाडंबै।। त सगली सैन तराई।।

(आसा सिरी कबीर जी, पृ ४८४)

गुरू अंगद देव जी ने (गुरू) अमरदास जी को बुला कर आदेश दिया कि वे गोइंदे के साथ जा कर ब्यास के किनारे वाली पत्तन वाली भूमि, जो वैसे बड़ी खूबसूरत तथा रमणीक कही जा रही है, का निरीक्षण करें और लोगों के वहम भ्रम को जड़ से दूर करने की खातिर उस भूमि को बसा दें। दूसरे, दूरदेशी और दीर्घ-दर्शी सतगुरू अंगद देव जी ने दूर की एक और बात भी सोच रखी थी । वह यह कि जिस प्रकार पहले शरीर में गुरू नानक साहिब ने अपना प्रचार केन्द्र करतारपुर बना रखा था और दूसरे शरीर में, गुरू अंगद देव के साथ प्रचार के कार्य को और बढ़ाने के लिए खडूर साहिब को एक मजबूत केन्द्र का रूप दे दिया गया था, इसी प्रकार तीसरे शरीर में भी एक और प्रभावशोली प्रचारक केन्द्र स्थापित करना था।

गोइंदा स्वयं एक सरमायेदार तथा रसूख वाला व्यक्ति था। नगर बसाते समय पैसे की कमी आने का प्रश्न ही नहीं उठता था। इमारतों का

सामान, मजदूर, बढ़ई, लुहार आदि की कठिनाई तो नहीं थी। बात केवल एक ही थी कि लोगों को वहम ले डूबा था। गुरू अंग्रद देव जी के उपदेश, (गुरू) अमरदास जी के संरक्षण, लोहे जैसे मजबूत व्यक्तित्व तथा सिख संगत की गुरू पर अटल और अनन्य श्रद्धा के कारण, कुछ सप्ताह में ही नगर बस गया, दुकानें बन गयीं, बाजार तैयार हो गया। स्थान बहुत ही मौके के मुताबिक था। उस जमाने में यह स्थान लाहौर से दिल्ली को जाने वाली शाही सड़क पर स्थित था। नदी का पत्तन होने के कारण ब्यास से पार वाले राहगीरों के लिए भी सुन्दर पड़ाव बन गया। रौनक दिन-ब-दिन बढ़ती ही गयी।जब(गुरू)अमरदास जी को गुरू पद की जिम्मेवारी सौंपी गयी तो इस सुहावनी जगह को ही आपने अपना मुख्यालय बना लिया था।

गोइंदे की विनती पर यह नगर संवत 1603 में गुरू अंगद देव जी के आदेश से (गुरू) अमरदास जी ने लोगों को भ्रम व वहमों से उबारने के लिए बसाया था, जो आज तक भली-भांति बस रहा है । संवत 1603 से लेकर आज तक, किसी भूत-प्रेत के दर्शन नहीं हुए ।आशा की जाती है कि ये भूत प्रेत निकट भविष्य में भी कभी दिखाई नहीं देंगे । हां, गुरबाणी तथा गुर इतिहास का ठीक ढंग से प्रचार न हो सकने के कारण, ब्राहमणी मत के भ्रम वहम रूपी भूत प्रेत, धड़ा-धड़ जन्म ले रहे हैं, जिनको नथिनी डालने के बारे में प्रत्येक पंथ दर्दी को प्रयार करना चाहिए।

(च) गुरू पद का उत्तरदायित्व

(गुरू) अमरदास जी ने 62 वर्ष की आयु से 73 वर्ष की आयु के 11 वर्ष तक, पूरी लग्न, श्रद्धा तथा गुरू प्रेम में पसीज कर जो करड़ी सेवा की, उसकी मिसाल मिलना नामुमकिन है। लंगर तैयार करना, जूठे बर्तन मांजना, लंगर के लिए जल, लकड़ी आदि लाना, संगत को स्नान के लिए जल उपलब्ध कराना, गुरू अंगद देव जी को रोजाना स्नान करवाना और यह सब सेवाएं वर्षो तक करते जाना, कोई मामूली बात नहीं थी। यह सारी सेवा निष्काम भाव से तथा गुरू प्रेम में ही की जा रही थी।

जब इस बात की ओर ध्यान दें कि कड़ी सेवा का यह समय आपकी आयु के 62 वर्ष से 73 वर्ष तक जाता है, तो बुद्धि चकित हो कर रह जाती है।

सर्दी हो चाहे गर्मी, अंधेरी तूफान हो या वर्षा, कुछ भी हो, काली रात हो या चन्द्र रात्रि, अर्द्ध रात्रि को संपूर्ण शांति को तोड़ते हुए गुरू अंगद देव जी के स्नान के लिए रोजाना जल भर कर लाना तथा स्नान करवाना निश्चित तौर पर लाजवाब परिश्रम था। यह सेवा वर्षों तक निभाई गयी। एक अंधेरी रात को जब सर्दी भी पूरे जोबन पर थी और बरसात भी पूरे वेग से बरस रही थी तो आप गुरदेव के लिए जल भरके ला रहे थे। आप अंधेरे में ठोकर खा कर खडूर के जुलाहों की खड्डी में जा गिरे। खड्डी में गिरने से जोर की आवाज होना स्वाभाविक था। आवाज से जुलाहा तथा जुलाही जाग पड़े और जुलाहे ने अपनी पत्नी से पूछा कि यह किस की आवाज है? ऐसा प्रतीत होता है कोई व्यक्ति खड्डी में गिर गया है, आगे से जुलाही ने अंदाजे से उत्तर दिया, " यह अमरदास *निथावां* (बेघर) ही हो सकता है, जिस को न दिन में चैन है और न रात को, बहुत बना है बड़े गुरू वाला।" (गुरू) अमरदास जी के कानों में जुलाहे-जुलाही की यह वार्ता पड़ गयी। आप ने अपने आप को संभाला और खड्डे में से बाहर निकलते हुए जुलाही को संबोधित करते हुए कहा- "पगली, पहले तो मैं अवश्य ही निथावां (बेघर) था, पर अब तो गुरू अंगद देव जी मेरे सिर के साई हैं और वही मेरा आश्रय हैं। अब मैं बेघर कैसे? तूं महान सतगुरू, गुरू अंगद देव जी की शान के विरूद्ध वचन बोल गयी है। यह बात तूने बिल्कुल पागलों वाली की है। यह घटना सन् 1552 की है जब आप 73 वर्ष की आयु के थे। आप अनन्य गुरू भक्ति के कारण गुरू अंगद देव जी की शान के विरूद्ध कुछ भी सुनने को तैयार नहीं थे।

11 वर्षों की इस समर्पित सेवा में (गुरू) अमरदास जी ने कई बार धक्के खाये थे। कई लोगों के कई वचन हंसी मजाक के झेले थे। पर (गुरू) अमरदास जी इन सब बातों से बहुत ऊंचे उठ चुके थे। एक

कर्मकांडी तथा जात-पात के भेद भाव वाली पुरानी मर्यादा पर वर्षों से चले आ रहे व्यक्ति के लिए जाति अभिमान त्याग कर सर्व संगत की सेवा नि-अहंकार हो कर करना मामूली बात नहीं थी। फिर, सेवा भी उस तरह की जो उच्च जातीय के लिए अनुकूल नहीं थी। लंगर में जल पहुंचाना, जूठे बर्तन साफ करने, जंगल में से लकड़ी काट कर लंगर में पहुंचाना और संगत को कुएं में से जल निकाल कर स्नान करवाना। यह सब, पुराने संस्कारों और अहं के पूर्ण परित्याग के बिना संभव नहीं था। फिर, समधिचारी के रिश्ते को पूरी तरह भुला कर और अपनी वृद्धावस्था का विचार भी मन से पूरी तरह निकाले बिना, ऐसी कठोर और आदर्श सेवा हो ही नहीं सकती थी। हंसी मजाक और तानों से प्रभावित होने का तो प्रश्न ही उत्पन्न नहीं था हो सकता। गुरू संगत द्वारा आप ने ऐसी ऊंची आत्मिक अडोलता प्राप्त कर ली थी।

करनी करतार की (गुरू) अमरदास जी के प्रति अपशब्द कहने के पश्चात जुलाही पगली हो गयी। बात सारे फैल गयी। जुलाहा, जुलाही को लेकर गुरू अंगद देव जी के दरबार में उपस्थित हुआ और भूल की माफी मांगी। सारी संगत में तथा गुरू दरबार में (गुरू) अमरदास जी की अडोलता, सिखी सिदक, निर-अहंकार हो कर सिखी की कमाई करना और लगन भरी करड़ी सेवा, और अधिक उभर कर सामने आ गयी। इतनी ऊंची आत्मिक अड़ोलता, और सहनशीलता कि हर चीज सहन कर सकने की शक्ति की मिसाल कहीं मिलना संभव नहीं था।

गुरू अंगद देव जी ने उचित अवसर जान कर सारी संगत में यह सूचित कर दिया कि गुरू नानक देव की ओर से प्रदत्त सिखी प्रचार की जिम्मेवारी उनके पश्चात (गुरू) अमरदास जी ही निभाएंगे । जनवरी 1552 तदनुसार 1 माघ संवत 1608 को गुरू अंगद देव जी ने सर्वत्र संगत को एकत्र करके (गुरू) अमरदास जी को गुरगद्दी सौंप दी। गुरू नानक देव जी की बाणी का संपूर्ण संग्रह अपनी रची हुई बाणी सहित, जो गुरू नानक साहिब ने एकत्र कर के रखी थी, गुरू अमरदास जी के सुपुर्द कर

दिया । इस समय आप ने संगत में स्पष्ट करते हुए कहा:

"जिन्ही चलणु जाणिआ से किउ करहिं विथार।।

चलण सार न जाणनी काज सवारणहार।।१।।

राति कारणि धनु संचीऔ भलके चलणु होइ।।

नानक नालि न चलई फिर पछुतावा होइ।।२।।

बधा चटी जो भरे न गुणु न उपकारु।।

सेती खुसी सवारीऔ, नानक कारजु सारु।।(सूही, वार-७८७)

जिन जिज्ञासुओं ने संसार की नास्तिकता को समझ लिया है, वे संसार में माया का मोह नहीं फैलाते। माया के मोह में फंसे लोग, इस बात को न समझते हुए कि संसार नाशवान है, माया के मोह में बुरी तरह फंसे रहते हैं। मानव जीवन रात्रि की भांति है, जो सूर्य चढ़ने पर समाप्त हो जाता है। यदि नाशवान मानव जीवन रूपी रात्रि के लिए पाप कर के माया आदि क्षण भंगुर पदार्थ एकत्र करते जायं तो मृत्यु के समय इन सब पदार्थो को त्यागते समय पछतावा ही पछतावा होता है।

सेवा अनेकों व्यक्ति करते हैं। जो व्यक्ति मजबूरी में सेवा करते हैं, उसका वास्तव में कोई महत्त्व नहीं होता। ऐसी मजबूरी की सेवा का लाभ न अपने आप को है और न दूसरों को। वास्तविक सेवा वही है जो मन की गहराइयों में से श्रद्धा से और मन की पूर्ण खुशी से की जाय।

(गुरू) अमरदास जी ने माया के मोह का गुरमत के आशय के अनुसार पूर्ण त्याग किया है। व्यवहारिक तौर पर सिखी की पूर्ण कमाई की है। गुरू और संगत की सेवा की तो सदा के लिए मिसाल कायम कर दी है। जो भी सेवा की है, पूर्ण श्रद्धा से, दिल से, मन से की है।

इस प्रकार जनवरी सन् 1552 को गुरू अमरदास जी पर गुरू नानक पातशाह की गद्दी की तीसरी जगह पर गुरमत प्रचार का सारा दायित्व आ गया। इस समय आप जी की आयु लगभग 73 वर्ष की थी।

लगातार 11 वर्ष के लंबे समय तक गुरदेव गुरू अंगद देव जी की संगत व सेवा करने, और व्यवहारिक तौर पर बाणी के दर्शाये सभी आदेशों, सिद्धांतों आदि के संपूर्ण ज्ञाता हो चुके थे। साथ ही साथ गुरू की पारस कला का प्रभाव हो जाने के कारण आप के अंतर्मन में गुरू नानक साहिब तथा गुरू अंगद देव जी के सब गुण आ चुके थे। गुरू अंगद देव जी के साहिबजादे दातू जी और दासू जी इस वास्तविकता को नहीं समझ सके। वे गुरू बनने के लिए निरर्थक हाथ पैर मार रहे थे । गुरू अमरदास जी के आगे नम्रता सहित झुकना तो कहीं रहा, अहंकार और हठ में आ कर गुरू अमरदास जी का निरादर करने का घोर अपराध भी इन्होंने किया। समय-समय पर मुकाबले पर गद्दी लगाने के निरर्थक यत्न करते रहे। क्षमा स्वरूप सतगुरू अमरदास जी ने सब कुछ देख कर भी अनदेखा कर दिया । वास्तव में आपकी आत्मिक अडोलता और धैर्य अपनी मिसाल आप थे। सत्ते रबाबी ने आपके इन गुणों का वर्णन *झखड़ि वाउ न डोलई परबततु मेराणु।।* कह कर किया है। आप में गुरू नानक और गुरू अंगद देव जी के सभी गुण होने की बात *पियू दादे जेविहा पोता परवाणु* कह कर की गयी है।

(छ) मनघड़ंत तथा गुरमत विरूद्ध साखियां

(गुरू) अमर दास जी द्वारा गुरू सेवा और करड़े जीवन-व्यवहार के 11 वर्षो के इस लम्बे काल के बारे में समय-सम्य पर कई साखियां प्रचलित होती रहीं, जो कि वैसी-की वैसी आगे चलती गई । इन में से कुछ साखियां तो ऐसी हैं, जो वास्तविकतावादी और गुरू आशय के अनुसार हैं, और वे गुरू पातशाह की महानता को दर्शाती हैं, पर कुछ ऐसी भी हैं जो केवल भावावेश में याा श्रद्धावश घड़कर लिख दी गयी हैं अथवा पराधर्मियों द्वारा सिख इतिहास और सिखी में मिलावट करने और इस को नीचा दिखाने के नीच इरादे से भी प्रचलित कर दी गई हैं। ऐसी साखियां गुरू आशयं को दृढ़ करवाने की जगह, गुरमत रूपी दूध में मनमत या अनमत रूपी कांजी मिलाने का नापाक प्रयास हैं।

ऐसे साखीकारों के अनुसार (गुरू) अमरदास जी को हर साल गुरू अंगद देव जी की ओर से लगभग डेढ गज का एक रूमाल सिरोपा के रूप में मिलता था जिस को (गुरू) अमरदास जी अपने सिर पर बांध लेते थे। यह सिरोपा (गुरू) अमरदास जी किसी समय भी सिर से नहीं उतारते थे। इस प्राकर वे 11 वर्षो की सेवा के दौरान 11 सिरोपा सिर पर बांध गये। सिरोपा के कारण केश स्नान हो ही नहीं सकता था। सफाई न होने के कारण केशें में और सिरोपा के कपड़ों में, किरम चलने लगे। इनसे बचने के लिए गुरू अमरदास जी ने कोई उपाय नहीं किया। गुरमत आशय के विरूद्ध इन मनघढ़ंत साखियों से हम सतगुरू साहिबान के महान व्यतित्व पर अपनी निरबुद्धिता के कारण, धब्बा लगाने का महान अपराध करते रहे है। फिर, इस घोर मनमत को गुरमत की पर्त चढ़ा कर पेश करने के लिए बड़ी बेशर्मी तथा साहस के साथ केशों तथा दस्तार में कीड़ों का चलना और केश स्नान न करना, (गुरू) अमरदास जी के ब्रहम ज्ञानी होने के प्रमाण के तौर पर दर्शा रहे हैं। गुरू अमरदास जी की बाणी तन और मन दोनों की शुद्धि पर बल देती है। इस संबंध में अनेकों प्रमाण आपकी बाणी में से पेश किए जा सकते हैं । आपकी इतनी बड़ी आयु हो जाने पर भी बढ़िया स्वास्थ्य के बरकरार रहने का राज़ भी शरीर तथा मन की सफाई ही थे।

यहां यह बात बता देना उचित ही होगा कि *महिमा प्रकाश और गुर प्रताप सूरज* आदि ग्रंथों में जिन में गुरू आशय तथा हकीकत के विरूद्ध उपरोक्त साखी लिखी गयी है। अन्य कई जगह पर इस विचार के विरूद्ध परस्पर विरोधी विचाार दे दिये गये हैं। *महिमा प्रकाश* की नित्यक्रम और सिख जीवन पद्धति वाली साखियां प्रमाण स्वरूप पेश की जा सकती हैं। कवी संतोख सिंघ के *गुरप्रताप सूरज* के बीच की, गुरू साहिब के नित्य व्यवहार को बयान करने वाली साखी तो स्वयं ही गुरदेव के दोनों हाथों से रोजाना केश-स्नान करने का जिक्र करके कीड़ों वाली मनघड़ंत गप्पों का मानो पाज़ खोल देती है।

सार यह कि कौम की सारी केन्द्रीय संस्थाओं को इतिहास की ठीक छंटाई के लिए विशेष प्रयास करने के बारे में प्रभावपूर्ण काम करना चाहिए। केवल मात्र जलूस निकाल देने और लोगों को दिखाने के लिए *दीवान* रचा देना काफी नही है । गुरबाणी सिद्धांत तथा गुर इतिहास, अपने असल रूप में हर प्राणी मात्र तक पहुंचाने के लिए ठोस प्रोग्राम बनाये जाने चाहिएं।

5. गुरगद्दी जीवन की गाथा

(क) दासू जी तथा दातू जी द्वारा विरोध

संवत 1608 (जनवरी सन् 1552) को गुरू अंगद देव जी ने गुरू अमरदास जी को गुरू नानक पातशाह के मत के प्रचार करने का पूर्ण उत्तरदायित्व गुरूगद्दी के रूप में प्रदान कर दिया था। गुरू अंगद देव जी के दोनों साहिबज़ादे इस बात पर बिल्कुल खुश नहीं थे। माता खीवी जी ने दोनों को बहुत समझाया कि गुरगद्दी विरासत की चीज़ नहीं है, जो पिता के पश्चात पुत्रों को मिल जाय। इस पर परमेश्वर और गुरू नानक पातशाह की रज़ा के द्वारा प्रदत्त कृपा होती है। यह पूजा करवाने के लिए नहीं यह तो तपते हुए सांसारिक जीवों को सत्य धर्म की शीतलता देने के लिए, उन्हें आदर्श जीवन की राह सिखाने के लिए और परमेश्वर प्राप्ति का तरीका बताने के लिए सौंपी गयी, बहुत बड़ी जिम्मेवारी होती है। मन के वेगों के पीछे दौड़ने के कारण दोनों साहिबजादों पर माता खीवी जी के उत्तम उपदेश का कोई असर न हुआ।

दासू जी और दातू जी दोनों साहिबज़ादे यह सहन नहीं थे कर रहे कि उनके होते हुए बाहर से आकर कोई गुरू नानक पातशाह की गद्दी का मालिक बन जाये। इस समय तक सिखी का प्रचार बहुत हो चुका था। दूर-दूर के इलाकों में से रूहानियत की तालीम लेने के लिए लोग बढ़-चढ़ कर आते थे। जिम्मेवारी के पक्ष को बिल्कुल न समझते हुए

दातू जी और दासू जी गुरगद्दी की हो रही बाहरमुखी मान्यता तथा सम्मान की चकाचौंध में चुंधियाए हुए वास्तविकता को समझ न सके। परिणाम यह हुआ कि उन दोनों के मनों में ईर्ष्या, द्वेष प्रजवल्लित हो उठे और वे किसी न किसी बहाने से गुरू अमरदास जी के साथ बदले की भावना से व्यवहार करने लगे । गुरू अंगद देव जी ने पहले से ही गुरू अमरदास जी को यह हिदायत दे रखी थी कि गुरमत प्रचार के लिए वे अपना मुख्यालय (अपने) बसाये नगर गोइंदवाल को ही बना लें।

29 मार्च सन 1552 (3 बैसाख 1609) को गुरू अंगद देव जी ज्योति में विलीन हो गये । कार्यक्रम के अनुसार आवश्यक था कि गुरमत प्रचार हेतु अपना मुखी प्रचारक केन्द्र खडूर साहिब से स्थानांतरित कर अपने नए बसाये नगर गोइंदवाल को बना लेते और धर्म प्रचार की सारी जिम्मेवारी को अपने सिर पर लेते।

गोइंदवाल साहिब में गुरू अमरदास जी बैठे ही थे कि सिख संगत बढ़-चढ़ कर वहां एकत्र होने लगी । खडूर साहिब वहां से दूर तो नहीं था। वहां भी गुरू अमरदास जी के दरबार की शोभा की खबरें पहुंच गयीं। बाबा बुढा जी और गुरू अमरदास जी का प्रेमी गुरसिख सेवक भाई बल्लू जी भी गोइंदवाल में आ गये थे। दासू जी खडूर साहिब में बैठे-बैठे गुरू अमरदास जी की शोभा को सुन कर सहन न कर सके। कुछ निजी साथियों, सलाहकारों तथा चाटुकारों ने चुगली कर के खडूर साहिब में ही उनकी गद्दी लगवा दी । इनमें से कोई भी यह नहीं समझ सका कि गुरगद्दी न तो सांसारिक पदवी है और न ही विरासत वाली चीज है। कुछ समय तक दासूजी ने गुरू बनने का पूरा नाटक रचे रखा। माता खीवी जी भी समझा बुझा कर हट गये। माता खीवी जी ने दासू जी को स्पष्ट समझाया कि गुरू बनना बहुत बड़ी जिम्मेवारी की बात है । परमेश्वर की पूर्ण कृपा और दैवी गुणों के बिना यह जिम्मेवारी उठाने का हठ करना और कृपा प्राप्त, गुरू अमरदास जी के साथ झगड़ा या शत्रुता करना, इसी प्रकार की मूर्खता है जैसे बिच्छु को वशीभूत करने वाले मदारी ने सांप के

बिल में हाथ डाल दिया हो। इस संबंध में *माझ की वार* में आये गुरू अंगद देव जी के सलोक की शिक्षा भी दी गयी । यथा:

मंत्री होइ अठूहिआ नागी लगै जाइ।।

आपण हथीं आपणै, दे कूचा आपे लाइ।।

हुकमु पाइआ धुरि खसम का, अती हूं धका खाइ।।

गुरमुख सिउ मनमुखु अड़ै, डुबै हकि निआइ।। (माझ की वार, पृ १४८)

भाव, यदि कोई मनुष्य हो तो बिच्छू का मुदारी और हाथ डाल दे सांपों को, तो मानो वह अपने हाथों से अपने आप को आग लगा रहा है। ईश्वर का अटल नियम है कि इस प्रकार की अति करने (मूर्खता) पर ऐसा व्यक्ति दैवी धक्के खाता है। परमेश्वर का सच्चा न्याय ही ऐसा है कि जो मनमुख पुरुष, गुरमुख आत्मा के साथ दुर्व्यवहार करता है, वह विकारों के सागर में डूब कर अपने आत्मिक जीवन को तबाह कर लेता है ।

अपना आत्मनिरीक्षण करने की जगह यदि मनमुख अहंकारी पुरुष गुरमुख आत्मा के साथ शत्रुता करे तो उस मनमुख की क्या दशा होती है, उसके बारे में गुरू अंगद देव जी ने उसी माझ की वार में फर्माया है:

नानक परखे आप कउ, तां पारखु जाणु ।।

रोगु दारू दोवैं बुझै, तां वैद सुजाणु।।

वाट न करई मामला, जाणै मिहमाणु।।

मूलु जाणि ग्लां करे हाणि लाइ हाणु।।

लबि न चलई सचि रहै से विसटु परवाणु।।

सरु सधे आगास कउ, किउ, पहुचै बाणु।।

अगै ओहु अगमु है, वाहेदडु जाणु।। (माझ की वार, पृ १४८)

भाव यह है कि उस पुरुष को ही सच्चा पारखी समझो जो अपना आत्म निरीक्षण करता हो अर्थात अपने अवगुणों की परख-पड़ताल

करता हो। वही पुरुष ही चतुर वैद्य (धार्मिक अग्रणी) कहलवा सकता है जो मनुष्य के आत्मिक रोग और निदान दोनों को ठीक प्रकार से समझता हो । जीवन रूपी यात्रा में, दूसरों से बेकार के झगड़े न करता हो और अपने आप को इस संसार में मेहमान की तरह, अल्पवासी समझे । अपने मूल परमेश्वर को अच्छी तरह जानते हुए संसार में सभी काम करे और सच्चे सत्संगियों के संग मित्रता करे। जो पुरुष जीवन में लालच के अधीन नहीं चलता और हमेशा अटल ईश्वर में लीन रहता है, वही पुरूष दूसरों के आत्मिक कल्याण के लिए स्वीकार्य व सक्षम हो सकता है। थोथा मनमुख, आकाश जैसी ऊंची आत्मिक अवस्था वाले परुष का, अपनी ईर्ष्या और विरोध के तीर से कैसे हानि पहुंचा सकता है। बल्कि सत्य तो यह है कि ईर्ष्या का ऐसा तीर वापिस ईर्ष्यालु को ही घायल कर देता है अर्थात मनमुख ईर्ष्यालु भले पुरूष के साथ की गयी ईर्ष्या से खुद ही तपता रहता है और अपने आत्मिक जीवन को बर्बाद कर लेता है।

माता खीवी जी के इन उपदेशों का दासू जी पर कोई प्रभाव न पड़ा। वह सदा यह सोचते कि गुरू अमरदास जी की जगह यदि वही सिखों के गुरू बन जाते तो गुरू अमरदास जी की जगह उनकी ऐसी शोभा मान्यता और सम्मान होता। इस मायावादी चकाचौंध में फंस कर, आप अपने चाटुकारों के उकसाने पर कुछ दिनों के लिए खडूर साहिब में, गुरू होने का नाटक करते रहे। लोगों को वर व उपदेश आदि देने का ढोंग भी रचते रहे। करनी परमेश्वर की कि दासू जी का सिर ही फिर गया। सिर पर दिमागी दौरे पर दौरा पड़ने लगा जिससे आप बेहद दुखी रहने लगे। इसका प्रभाव उनकी सेवकी पर भी पड़ने लगा। सिर पर दुख आने पर कुछ होश टिकाने आया । माता खीवी जी ने भी दासू जी को उनकी महान गलती का अहसास करवाया और इस प्रकर उनके गुरू बनने का नाटक समाप्त हो गया। इतिहास बताता है कि उन्होंने स्वयं गोइंदवाल साहिब जा कर गुरू अमरदास जी से अपनी भूल की क्षमा मांगी।

भाई गुरदास जी ने दासू जी के साथ-साथ दातू जी के बारे में भी

अपनी 26 वीं वार की 33वीं पउड़ी में थोड़ा सा वर्णन किया है। यथा:

"मंजी दासु बहालिआ, दाता सिधासण सिख आइआ।।"

दासू जी गुरू बनने के यत्न में नाकामयाब हो कर चुप कर गये। दातू जी के मन में गुरू बनने की बहुत लालसा और उमंग थी। दातू जी भी इस वास्वविकता को नहीं थे पहचान सके कि पूर्ण कृपा और गुणों के बिना गुरू नहीं बना जा सकता। जैसे जैसे गुरू अमरदास जी की शोभा और महानता के समाचार आप को खडूर साहिब बैठे-बैठे मिलते जा रहे थे, त्यों-त्यों उनके मन में गुरू बनने की चाह और बढ़ने लगी।

गुरू अमरदास जी ने गद्दी की जिम्मेवारी संभालते ही गुरमत प्रचार के लिए अनेकों ऐसे इनकलाबी कदम उठाये कि एक ओर तो गुरमत सिद्धांतों की उत्तमता और सतगुरू अमरदास जी का चुंबकीय व्यक्तित्व हजारों लोगों को गुरू नानक पातशाह की ईश्वरीय पताका के नीचे ले आया, और दूसरी ओर सदियों से स्वनियुक्त धर्म के ठेकेदारों-ब्राहमणों आदि उच्च जातीय लोगों के मनों में गुरमत और गुरू अमरदास जी के विरूद्ध ईर्ष्या भर दी। सदियों से जाति पात के भेद भावों और कर्म कांडों को प्रचलित करके, लुटेरों की यह जुंडली जनता को गुमराह करके ठगती व लूटती चली आ रही थी। गुरमत ज्ञान के प्रकाश के कारण ज्यों-ज्यों लोगों को सत्य धर्म का ज्ञान होता गया, उन्होंने ब्राहमण की जंजीरों को उतार कर आजाद हो जाने का दावा आरंभ कर दिया। लंगर तथा संगत में मिल बैठने वाले सहअस्तित्व के सिद्धांतों के कारण ब्राहमण, क्षत्रीय आदि उच्च जातीय, गुरू साहिब से खीझने लगे। यह स्वाभाविक ही था। नये तौर पर फैल रहे इसलाम के प्रचारकों, मौलवियों, मुल्लाओं ने भी गुरू अमरदास जी के व्यक्तित्व और गुरमत आंदोलन को अपनी राह में भारी रूकावट महसूस किया।

समय भी कुछ युग गर्दी वाला ही जा रहा था। ध्यान रहे कि श्री गुरू अमरदास जी ने सन् 1541 में सिखी में प्रवेश किया था और सन 1552 के आरंभ में आपने गुरूता की जिम्मेवारी संभाली थी। हुमायूं को

शेरशाह सूरी ने 17 मई 1540 में कन्नौज के मैदान में हरा कर हिंद में से भगा दिया था। पर कालिंजर के किले को विजयी करते समय शरीर पर लगे घावों के कारण 22 मई, 1545 में ही इसका देहांत हो गया। शेरशाह सूरी की अंश, हकूमत संभाल न सकी। फरवरी 1555 में हुमायूं ने लाहौर छीन लिया और जून सन् 1555 में शेर शाह के भतीजे सिकंदर सूरी को सरहिंद के युद्ध में हरा दिया तथा जुलाई 1555 में वह दिल्ली के सिंहासन पर पुनः बैठ गया। अपने 13 वर्षीय पुत्र अकबर को उसने नया नया ही लाहौर का गवर्नर नियुक्त किया था। कुदरती बात थी कि इस राजगद्दी के दिनों में समाज के नाममात्र के चौधरी ब्राहमण, मुल्लां शेख आदि समाज में अपना प्रभाव बढ़ाने के लिए हाथ पैर मार रहे थे। गोइंदा मरवाह, जो गुरू जी का अनन्य भक्त और श्रद्धालु था, और जिसकी विनती पर गुरू अमरदास जी ने यह नगर बसाने में सहायता की थी, वह कालवास हो चुका था। गोइंदे का पुत्र गुरू घर का अहसानमंद होने की बजाय गुरू घर का द्रोही और ईर्ष्यालु था। उसको तथा उसी वृत्ति के अन्य क्षत्रियों को गुरू अमरदास जी के विरूद्ध अपनी सहायता के लिए दातू जी ने अपने साथ गांठ लिया था । यह बात समझ लेनी चाहिए कि उच्च-जातीय ब्राहमणों और क्षत्रियों द्वारा यदि भड़काया न गया होता तो शायद दातू जी इतना उभर कर गुरू घर के विरूद्ध मैदान में न आते। आखिरकार तीन चार वर्ष से वे चुप्पी साधे चले आ रहे थे।

ब्राहमणों और क्षत्रियों को सहअस्तित्व का सिद्धांत पसंद नहीं था आ सकता। दातू जी के रूप में उन सबके हाथा गुरू घर में बवाल खड़ा करने का एक अच्छा हथियार हाथ आ गया। दातू जी को दासू जी के असफल यत्नों के बारे में तो पता ही था। जैसे-तैसे गुरगद्दी प्राप्त करने के लिए उन्होंने प्राणायाम की साधना सीखी। सिद्ध आसन सीखने के पश्चात उनका मंतव्य यही था कि इससे वे करामाती शक्तियां प्राप्त करके लोगों को वर और श्राप दे सकेंगे और इस तरह सिखों में उन की मान्यता बढ़ जायेगी। ऐसे खोखले मत का खंडन गुरू नानक देव जी पहले ही कर चुके थे। गुरूता व गद्दी की इतनी तीव्र लालसा वाले दातू जी का

र्मकांडीय और वर्ण आश्रमी धार्मिक ठेकेदार ब्राहमणों के हाथों चढ़ जाना भाविक बात थी ।

उपर्युक्त चौकड़ी व दूसरे लोगों की बातों में आये दातू जी एक न शाम को अपने चाटुकारों तथा नारदमुनी ब्राहमणों के टोले सहित इंदवाल साहिब, गुरू अमरदास जी के लगे हुए दीवान में आ धमके। ह घटना सन् 1556 की है। दीवान की ऐसी रौनक और गुरू शोभा देख कर उन की ईर्ष्या भड़क उठी। गुस्से में आ कर भरे दीवान में चौकी पर बैठे गुरू अमरदास जी को लात मार कर चौंकी से नीचे गिरा दिया और स्वयं गुरगद्दी पर जोर जबर्दस्ती से बैठ गये। गुरू अमरदास जी ने कमाल की नम्रता तथा सहनशीलता प्रदर्शित की। आपने गुरूसुत जानकर दातू जी का आदर करते हुए, दातू जी के पैर दबाते हुए कहा, मुझ बूढ़े की करड़ी हड्डियों पर कोमल चरण लग जाने से आपको चोट लग गयी होगी। आपको अवश्य ही मेरे से कोई कष्ट हुआ है जिसके कारण आपको गुस्से में लात मारनी पड़ी है। आप आदेश करो, मेरे से क्या गुस्ताखी हुई है ताकि आप के क्रोध को शांत किया जा सके।

पत्थर वृत्ति दातू जी पर, गुरू अमरदास जी की नम्रता और मिठास का बल्कि उल्टा असर हुआ। उन्होंने समझा कि गुरू जी उनकी जोर जबर्दस्ती से शायद डर गये हैं। गुरू अमरदास जी की स्वाभाविक नम्रता को उन्होंने गुरू अमरदास जी की कमजोरी और अपनी सफलता समझते हुए झिड़कते हुए कहा- "गुरगद्दी का असली वारिस मैं हूं। मैं ही गुरू अंगद देव जी के पश्चात गुरू हूं और सिख संगत को उपदेश देने का अधिकार केवल मेरे पास है। हमें जितनी सेवा की आवश्यकता थी, वह आपसे करवा ली है। अब आपकी सेवाओं की जरूरत नहीं है। अब मेरा आदेश केवल यही है कि यह नगर छोड़ कर चले जाओ, क्योंकि मैं गद्दी का असल उत्तराधिकारी आ चुका हूं। ब्राहमणों को प्रसन्न करने के लिए और उनकी चाटुकारिता करने के लिए उन्होंने यहां तक कह दिया कि तुम कौन होते हो जो ऊंची नीची जातियों को एकत्र करो और वरण

आश्रमी मत के विरूद्ध प्रचार करो?

गुरू अमरदास जी ने दातू जी के प्रति वास्तविकता समझाने के लिए वचनों का माध्यम अपनाने की जगह पर बड़ा मनोवैज्ञानिक तरीका अपनाया। वहां से चुप करके चल दिए और रातो-रात अपने गांव बासरके आ गये। इधर आने के बारे में सूचना भी किसी को नहीं दी।

सिख संगत अपने प्यारे सतगुरू का अपमान तो सहन नहीं थी कर सकती, पर गुरू अमरदास जी की हद दर्जे की क्षमा शक्ति, धैर्य तथा सहनशीलता के कारण और किसी हद तक गुरू अंगद देव जी की अंश होने के कारण, सब ने चुप साधना ही उचित समझा। एक प्रकार से गुरू अमरदास जी ने दातू जी को खुला अवसर प्रदान किया ताकि दातू जी को अपने ब्राहमण तथा क्षत्रीय चाटुकारों सहित इस बात की समझ आ जाये कि गुरगद्दी तो सतगुरू साहिबान द्वारा कृपा के रूप में जिम्मेवारी सौंपी गयी थी और जोर-जबदस्ती, फरेब या गुंडागर्दी द्वारा गुरगद्दी पर कदाचित कब्ज़ा नहीं किया जा सकता।

गुरू अमरदास जी के उठ कर चले जाने के पश्चात संगत भी एक-एक कर के चली गयी। कुछ ब्राहमण और क्षत्रीय खुशामदी, ईर्ष्यालु व पिटठू रह गये जो साथ लाये गये थे या फिर नगर का चौधरी मरवाह, जो गोइंदे का लड़का था, उपस्थित था। दो चार दिन बड़े यत्न किये गये। दीवान लगाने के असफल प्रयास किये गये और खडूर साहिब से कुछ डूम भी शबद पढ़ने के लिए भाड़े पर लाये गये। चौधरी मरवाह भी जोर लगा बैठा। एक भी सिख ने प्रणाम नहीं किया। यह बात किसी से भूली हुई नहीं थी कि गुरू अंगद देव जी ने गुरू अमरदास जी को अपनी होश में ही गुरगद्दी प्रदान की थी। फिर कहां धर्म, धैर्य, क्षमा, मृदुल स्वभाव और ज्ञान की साक्षात मूरत गुरू अमरदास जी और कहां ईर्ष्या, क्रोध, और निजी पूजा में उलझे हुए दातू जी। कहां राजा भोज और कहां गंगू तेली।

अंत में तीन चार दिनों के भरपूर प्रयास और जोर आजमायश के पश्चात बुरी तरह जलील हो कर दातू जी ने खडूर साहिब की राह ली

और जाते हुए डेरे का जो भी माल असबाब हाथ आया, खच्चरों पर लाद कर खडूर साहिब की ओर चल दिये। पर माल असबाब खडूर साहिब पहुंचने से पूर्व ही रास्ते में लुटेरों द्वारा लूट लिया गया। लुटेरों के साथ हुई मुठ भेड़ में दातू जी के पैर पर जोरदार चोट आयी जिसका बेहद दर्द कई वर्षों तक दातू जी को रहा।

दासू जी तथा दातू जी से संबंधित घटनाओं से एक दो ऐसी हकीकतें समझ आ सकती हैं कि जो आज तक के सारे इतिहास की पढ़ाई के समय अच्छी तरह समझना आवश्यक है। पहली बात यह कि हर गुरू शरीर के समय गुरगद्दी पर बैठने के इच्छुक प्राणी हमारे समाज में विद्यमान रहे और गुरिआई सिद्धांत को न समझते हुए जोर, धक्के, प्रापेगंडे, राज बल की सहायता तथा आर्थिक हथियारों के बलबूते मुकाबले पर देहधारी गुरू बनने और प्रसिद्ध होने का यत्न करते रहे हैं। गुरू नानक पातशाह की गद्दी की अद्वितीय मान्यता, महानता और सिखों में सतगुरू साहिबान के प्रति अनन्य श्रद्धा व प्रेम ऐसे तत्त्व हैं जो पाखंडी गुरूओं तथा निजी पूजा में उलझने उलझाने वाले स्वार्थी अज्ञानियों की आंखें ही चुंधिया देते हैं। शबद या बाणी गुरू के सिद्धांत का जोरदार प्रचार ही कौम को देहधारी गुरूओं के रूप में जोंकों से बचा सकता है। खेद की बात है कि ठोस प्रचार की कमी के कारण आज भी पंथ में अनेकों दंभी अपनी स्वार्थपूर्ति हेतु "देहधारी गुरू पूजा" की दुविधा बड़े संगठित ढंग से फैला रहे हैं।

दूसरी हकीकत की बात यह समझ लेनी चाहिए कि ब्राहमणी मत का बखिया उधेड़ देने वाली गुरमत का विरोध चतुर तथा शातिर ब्राहमण अनेकों छिपे तथा परोक्ष ढंग से करता आया है। इस मंतव्य के लिए वह साम, दाम, दंड, भेद सभी प्रकार की नीतियों को अपनाता रहा है। कभी घर में फूट डालकर, कभी हाकिमों के पास सच्ची झूठी चुगलियां कर के, कभी साहित्य में मिलावट करके और कभी अपनी अधिसंख्या के हथियार द्वारा तत्व गुरमत को ग्रहण लगाने का यत्न करता रहा है। उपरोक्त

वर्णित मामले में ही वह ऐसा चालाक जीव सिद्ध हुआ है कि कुछ पूछो ही नहीं! स्वयं पीछे रह कर दातू जी को उकसा- भड़का कर गुरू घर के संग शत्रुता की। उसकी इस वृत्ति को आज भी समझने की पूरी आवश्यकता है। बाहर से आये इसलाम के पैरोकार तो बड़ी जल्दी इस तत्व को समझ गये पर हम बीच में रह कर भी प्रत्यक्ष प्रमाण को समझ नहीं सके हैं। एकछत्र इसलाम का बोलबाला चाहने वाले ने इस हकीकत को अपने मत पर पूरी तरह घटित कर कैसा सुंदर वर्णन किया है:

वो दीने हज़ाज़ी का बेबाक बेड़ा,
जो सीहूं पे अटका, न जीहूं पे ठहरा ।
कीए पार थे जिसने थे सातों समुंदर,
वो डूबा दहाने में गंगा के आ कर।

दातू जी तो पूरी तरह निराश होने के पश्चात ज़लील हो कर खडूर साहिब वापिस चले गये थे। सिख संगत ने बाबा बुढा जी, जो सिख संगत में बहुत ही आदरयोग्य स्थान रखते थे, की अगवाई में सतगुरू अमरदास जी की खोज करते-करते बासरके जा ढूंढा। बाबा बुढा जी तथा सारी संगत ने गुरू अमरदास जी को सारे हालात से वाकिफ करवाया और विनती करके वापिस गोइंदवाल साहिब ले आये ताकि गुरू अंगद देव जी की हिदायत के अनुसार सिखी प्रचार का काम जोर शोर से जारी रखा जा सके।

(ख) सपुत्री बीबी भानी के लिए गुरू राम दास जी का चुनाव:

24 सितम्बर सन 1534 को गुरू रामदास जी, जिनका पहला नाम जेठा जी था, का जन्म लाहौर की चूना मंडी में हुआ था। बहुत अल्पायु में आपके माता जी गुजर गये। 1541 में जब आप कुल सात वर्ष के थे, तब आपके पिता जी भी कालवास हो गए । कोई और संबंधी न होने के कारण उनकी नानी आपको बासरके ले आई।

इस प्रकार सन् 1541 में जेठा जी का मेल गुरू अमरदास जी के साथ हो गया। एक यतीम तथा बेसहारा बच्चे के लिए गुरू अमरदास जी के मन में हमदर्दी पैदा होना स्वाभाविक था। खास तौर पर जब कि जेठा

जी में शुरू से ही कई ईश्वरीय गुणों की झलक दिखाई देती थी। इस हमदर्दी ने जेठा जी के गुणों ने जेठा जी को (गुरू) अमरदास जी का बहुत नज़दीकी बना दिया। सन् 1546 में गुरू अमरदास जी जेठा जी को गोइंदवाल ले आये। गुरू अंगद देव जी की गुरिआई के समय से ही जेठा जी की गुरू घर के साथ निकटता बन गई । आप गुरसिखी की व्यवहारिक कमाई वाले रास्ते पर पड़ गये।

गुरू अमरदास जी को सन् 1552 में गुरगद्दी की जिम्मेवारी मिली थी। सन् 1553 में जब उनकी छोटी सपुत्री बीबी भानी 19 वर्ष की हुई, गुरू अमरदास जी ने बीबी जी के लिए कोई योग्य रिशता ढूंढने की सोची। रिश्ते का चुनाव एक बड़ा अहम तथा नाज़ुक मामला हुआ करता है पर इस मामले को गुरू अमरदास जी दुनियावी दृष्टि से देखने को तैयार नहीं थे। लगभग पिछले 12 वर्षो से वे जेठा जी को अच्छी तरह जानते थे। जेठा जी यतीम थे और उनका कोई और भाई-बंधु भी नहीं था। वे आर्थिक तौर पर भी बहुत कमजोर थे। जमीन जायदाद आदि का प्रश्न ही नहीं था उठता ।गुरू अमरदास जी ने यह सब कुछ तो बिल्कुल ही नहीं देखना था। उन्होंने जेठा जी के गुण, आचरण, जीवन ध्येय तथा व्यक्तित्व आदि सब को बीबी भानी जी के लिए मुनासिब समझा और इस कारण सन् 1553 में बीबी भानी जी का विवाह जेठा जी के साथ कर दिया । इस मामले में आपने दुनियादारी के दृष्टिकोण को पूरी तरह अनदेखा कर दिया। यह रिश्ता हर लिहाज से सफल सिद्ध हुआ।

रिश्ते नातों के चुनाव के लिए गुरू अमरदास जी की ओर से दर्शायी गयी राह समाज में से अनेकों क्लेशों को दूर कर सकती है।

(ग) गुरू अमरदास जी का इतिहासिक प्रचारक दौरा

गुरू अमरदास जी ने एक बहुत बड़ा प्रचारक दौरा लगाया, जिसका पूरा विवरण *तुखारी राग* में गुरू रामदास जी ने दिया है। पूरा शंबद इस प्रकार है:

नावणु पुरबु अभीचु गुर सतिगुर दरसु भइआ।।

दुरमति मैलु हरी अगिआनु अंधेरु गइआ।।
गुर दरसु पाइआ अगिआनु गवाइआ अंतरि जोति प्रगासी।।
जनम मरण दुख खिन महि बिनसे, हरि पाइआ प्रभु अबिनासी।।
हरि आपि करतै पुरबु कीआ सतिगुरू कुलखेति नावणि गइआ।।
नावणु पुरबु अभीचु गुर सतिगुर दरसु भइआ।।१।।
मारगि पंथि चले गुर सतिगुर संगि सिखा।।
अनदिनु भगति बणी खिनु खिनु निमख विखा।।
हरि हरि भगति बणी प्रभ केरी सभु लोकु वेखणि आइआ।।
जिन दरसु सतिगुर गुरू कीआ तिन आपि हरि मेलाइआ।।
तीरथ उदमु सतिगुरू कीआ सभ लोक उधरण अरथा।।
मारगि पंथि चले, गुर सतिगुर संगि सिखा।।२।।
प्रथम आए कुलखेति गुर सतिगुर पुरबु होआ।।
खबरि भई संसारि आए त्रै लोआ।।
देखणि आए तीनि लोक सुरि नर मुनि जन सभि आइआ।।
जिन परसिआ गुरु सतिगुरू पूरा, तिनके किलविख नास गवाइआ।।
जोगी दिगंबर संनिआसी खटु दरसन करि गए गोसटि ढोआ।।
प्रथम आऐ कुलखेति गुरि सतिगुर पुरबु होआ।।३।।
दुतीआ जमुन गए गुरि हरि हरि जपनु कीआ।।
जागाती मिले दे भेट, गुरि पिछै लंघाइ दीआ।।
सभ छुटी सतिगुरू पिछै जिनि हरि हरि नामु धिआइआ।।
गुर बचनि मारगि जो पंथि चाले तिन जमु जागाती नेड़ि न आइआ।।
सभ गुरू गुरू जगतु बोले गुर के नाइ लइऔ सभि छुटकि गइआ।।
दुतीआ जमुन गए गुरि हरि हरि जपनु कीआ।।४।।
त्रितीआ आए सुरसरी तह कउतकु चलतु भइआ।।
सभ मोही देखि दरसनु गुर संत, किनै आढु न दामु लइआ।।
आढु दामु किछु पइआ न बोलक जागातीआ मोहण मुंदणि पई।।
भाई हम करह किआ, किसु पासि मांगह सभ भागि सतिगुर पिछै पई।।
जागातीआ उपाव सिआणप करि वीचारु डिठा भंनि बोलका सभ उठि गइआ।।
त्रितीआ आऐ सुरसरी तह कउतकु चलतु भइआ।।५।।
मिलि आए नगर महाजना गुर सतिगुर ओट गही ।।
गुरु सतिगुरु गुरु गोविंदु पुछि सिम्रिति कीता सही।।
सिम्रिति सासत्र सभनी सही कीता,

सुकि प्रहिलादि सिरी राम करि गुर गोविदु धिआइआ।।
देही नगरि कोटि पंच चोर वटवारे तिन का थाउ थेहु गवाइआ।।
कीरतन पुराण नित पुंन होवहि गुरबचनि नानकि हरि भगति लही।।
मिलि आए नगर महाजना गुर सतिगुर ओट गही।।६।।५।१०।।

(तुखारी महला ४, पृ ११९६)

गुरू अमरदास जी के इस महान प्रचारक दौरे के सन् संवत के बारे में लिखारी सज्जनों में अलग- अलग राय पाई जाती है। प्रोफेसर साहिब सिंघ इस दौरे को सन् 1558 में हुआ बताते हैं। *बंसावली नामे* के अनुसार सन् 1557 (संवत 1614) तथा *त्वारीख खालसा* के अनुसार सन 1558 (संवत 1615) में यह भ्रमण किया गया था । डॉ. बलबीर सिंघ की *निरुकत* की *दूजी पोथी* के संदर्भ से सरदार सतबीर सिंघ ने इस प्रचारक दौरे से संबंधित *अभीचु पुरब* का समय 14 जनवरी, 1553 निश्चित किया है जबकि इब्राहीम सूरी सिंहासन पर बैठा हुआ था ।

इस प्रचारक दौरे का सन् संवत जो मर्जी है सिद्ध हो जाय, इसकी सर्वोच्च महानता में अधिक अंतर पड़ने वाला नहीं है । हां, मैकालिफ तथा संतोख सिंघ आदि लिखारियों ने जो यह विचार देने का यत्न किया है कि अकबर के पास जब कई उच्च जातीय हिंदुओं ने गुरू अमरदास जी के विरूद्ध शिकायतें कीं तो अकबर ने गुरू अमरदास जी को विनय अथवा प्रेरणा की कि वे उच्च जातीय हिंदुओं के क्रोध को शांत करने के लिए गंगा, कुरूक्षेत्र आदि की यात्रा कर लें-बिल्कुल निर्मूल बात है । गुरू अमरदास जी के सुमेर पर्वत से भी अधिक अडोल तथा मजबूत व्यक्तित्व को किसी के गलत दबाव अथवा गलत प्रेरणा द्वारा गुरमत सिद्धांतों में कोई परिवर्तन करने को तैयार हो जाय - नामुमकिन बात है । उच्च जातीय अभिमानी हिंदुओं को खुश करना सिख मत के लिए कभी संभव नहीं हुआ, और न भविष्य में संभव हो पायेगा । गुरू अमरदास जी की सारी बाणी से यह बात स्तव: ही प्रत्यक्ष हो जाती है । गुरू अमरदास जी की जीवन गाथा की अनेकों साखियां इस बात की साक्षी हैं कि इस पक्ष से बहुत बड़ा सैद्धांतिक मत भेद था, जिस के लिए गुरू अमरदास जी ने

कभी भी समझौता करना उचित नहीं समझा और न ही तदोपरांत किसी गुरू व्यक्ति द्वारा ऐसा किया गया है ।

अभीचु पुरब के संबंध में प्रोफेसर साहिब सिंघ जी लिखते हैं।

"ज्योतिष के अनुसार उत्तरखाड़ा नक्षत्र के पिछले हिस्से और श्रवण नक्षत्र की पहली चार कला के मेल में एक समय ऐसा आता है जो लग्न होती है। इसको अभीचु कहते हैं । सूर्य ग्रहण के अवसर पर इसका समय बंधता है ।''

सरदार सतबीर सिंघ जी के अनुसार:

"28 नक्षत्रों में से एक नक्षत्र अभिजित है । अभिजित बाइसवां नक्षत्र है । महाभारत वन पर्व में भी जिक्र आता है कि सूर्य ग्रहण के समय सेनहत (जो कुरूक्षेत्र में है) तीर्थ में स्नान करने पर एक हजार अष्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है । सारे पाप भी समाप्त हो जाते हैं । "

वरण आश्रमी मत का विश्वास है कि अभीचु पर्व के समय कुरूक्षेत्र हरिद्वार आदि तीर्थो पर स्नान करने से शत्रुओं पर विजय प्राप्त हो जाती है । इन अवसरों पर ऐसे तीर्थो पर लाखों लोग एकत्र होते हैं । गुरू नानक साहिब ने अपने समय में अनेकों ऐसे अवसरों और स्थानों को गुरमत प्रचार के लिए प्रयोग किया है । स्वाभाविक तौर पर बहुत बड़े समूह ऐसे तीर्थो व विशेष पर्वो के समय एकत्र होते ही हैं और इनमें अनेकों मतों के धार्मिक नेता पहुंचे हुए होते हैं । इस सब के कारण इन अवसरों को गुरमत प्रचार के लिए भली भांति प्रयोग किया जा सकता था । गुरू नानक साहिब जी की भांति गुरू अमरदास जी ने इस अभीचु पर्व संबंधी तीर्थो पर एकत्र होने वाले समूहों को गुरमत प्रचार के लिए प्रयोग किया था ।

गुरू राम दास जी द्वारा गुरू अमरदास जी के इस प्रचारक दौरे के बारे में दिये गये विवरण में से कुछ बातें बहुत ध्यान मांगती हैं ।(1) जनता के लिए सतगुरू अमरदास जी का दर्शन ही अभीचु पर्व का स्नान था क्योंकि सतगुरू साहिबान ने अपने ऊंचे व निर्मल सिद्धांतों के प्रचार द्वारा लोगों की दुरमति और अज्ञानता

के अंधकार को दूर कर दिया था । (2) सतगुरू साहिबान के इस प्रचारक दौरे के समय बड़ी भारी संख्या में गुरसिख सत्संगी साथ हो चले थे और लोग जोर शोर से इस मेले में आ रहे थे । इस दौरे के समय अधिक से अधिक समय हरि भक्ति और सिखी सिद्धांतों के प्रचार पर लगता था । (3) गुरू रामदास जी ने बड़े स्पष्ट शब्दों में लिखा है *"तीरथ उदम सतिगुरू कीआ सभ लोक उधरण अरथा"* जिससे स्पष्ट होता है कि तीर्थ स्थानों पर गुरू अमरदास जी द्वारा लगाये गये इस दौरे का मुख्य प्रयोजन जन कल्याण अथवा लोगों में गुरमत प्रचार करना ही था (4) सब से पहले आप ने कुरूक्षेत्र का दौरा किया जहां पर हजारों लोगों ने आप से गुरमत उपदेश ग्रहण किया । आम लोगों के अलावा, जोगी, दिगम्बर, सन्यासी आदि अनेकों वेशों के धार्मिक नेताओं ने गुरू अमरदास जी के साथ गोष्ठियां कीं और सिख मत का उपदेश ग्रहण किया । (5) इस के पश्चात सतगुरू साहिबान के प्रचार का इतना प्रभाव हुआ कि यमुना नदी के पुल पर नियुक्त महसूलियों द्वारा सिखों से पुल पार करने का महसूल वसूल करना तो कहीं रहा, वे बल्कि गुरू अमरदास जी के पास अपनी प्रेम भेंट ले कर उपस्थित हुए । गुरू जी का केवल नाम लेने से हजारों लोग बिना महसूल दिये पुल पार कर गये ।(6) इसके बाद भी गुरु जी गंगा नदी पर आ पहुंचे । बहुत बड़ी संख्या में जिज्ञासु गुरू नानक जी के झंडे के नीचे आ गए । पहले तो महसूल एकत्र करने वालों ने अपनी अक्ल और चतुराई से महसूल एकत्र करने का इरादा किया, पर गुरू अर्जुन देव जी के दीर्घ प्रभाव के इतने कायल हुए कि वे बोल भी न सके और जनता से एक कौड़ी भी महसूल एकत्र न कर सके । (7) इसके पश्चात गुरू जी अपनी संगत सहित कनखल आ गये जहां नगर के मुखी लोगों, धार्मिक नेताओं और विद्वानों ने भी गुर उपदेश ग्रहण किया । गुरू अमरदास जी ने सब लोगों को यह स्पष्ट समझाया कि मनुष्य के सब से बड़े शत्रु काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार आदि ही हैं जो केवल गुरू की शिक्षाओं के द्वारा ही दबाये जा सकते हैं और इस प्रकार मन में सारे सुखों की मूल, प्रेमाभक्ति को पैदा किया जा सकता है ।

जिस प्रकार पुस्तक के आरंभ में बताया गया है कि गुरू पातशाह की क्रमिक गाथा के ऐतिहासिक विवरण अभी तक नहीं मिल सके हैं पर गुरू रामदास जी की प्रचारक गतिविधियों के बारे में भली भांति पता चल सकता है। यह बात उभर कर सामने आ जाती है कि आप की प्रचारक गतिविधियों पर, शारीरिक क्षमता की दृष्टि से, आपकी वृद्ध आयु का जरा सा भी प्रतिकूल असर नहीं था हुआ । यह भी बात समझ लेनी चाहिए

कि गुरदेव के इस प्रचारक दौरे का कुछ जिक्र गुरू रामदास जी की कृपा द्वारा हमारे तक जरूर पहुंच गया है, पर अनेकों ऐसे दौरे बिना लिखे रह जाने के कारण हमारे तक नहीं पहुंच सके।

(घ) गोइंदवाल नगर की स्थापना तथा विकास

गोइंदा क्षत्री ब्यास. नदी के किनारे पत्तन वाली जगह पर, जहां दिल्ली से लाहौर जाने वाली शाही सड़क निकलती थी, एक नगर बसाना चाहता था । बहुत सी जमीन का वह मालिक था । नदी का पत्तन और शाही सड़क पर स्थित होने के कारण यह बड़ी मौके वाली जगह थी । गोइदे के विरोधी यह नहीं चाहते थे कि गोइंदा कोई नगर बसा सके। उन्होंने दबी चालें चलीं और नगर बसने की राह में बाधायें उपस्थित कीं। यदि दिन को निर्माण कार्य होता तो रात को गिरा दिया जाता । बड़े स्तर पर लोगों में यह फैला दिया गया कि वहां पर भूतों प्रेतों का वास है जिसके कारण मकान गिर जाते हैं । गोइदे को भी यह वहम हो गया। नगर बसाने के लिए यह जगह हर लिहाज से बहुत रमणीय, खूबसूरत तथा बहुत अच्छे मौके वाली थी ।

गोइंदा गुरू अंगद देव जी के चरणों में हाजिर हुआ और उसने अपनी इच्छा व्यक्त की । गुरू अंगद देव जी ने सिख की याचना पूरी करने के साथ-साथ लोगों का और गोइंदे का यह वहम भी दूर करने का निश्चय कर लिया कि वह जगह भारी है और भूत प्रेतों के वास के कारण बस नहीं सकती । (गुरू) अमरदास जी को सारी बात समझा कर गोइंदे की विनती पर नगर बसाने का आदेश दे दिया । सिखों के भरपूर उत्साह तथा (गुरू) अमरदास जी की योजना के अनुसार सन 1546 में नगर का निर्माण शुरू हो गया और नगर दिन दूना, रात चौगुना तरक्की करने लग गया । गोइंदे ने अपनी आधी जमीन तो वैसे ही गुरू अर्पण कर दी थी लोगों में पड़े भ्रम वहम भी दूर हो गये । वैसे, यह नगर बसाने में गुरू अंगद देव जी के दो और प्रयोजन भी थे । पहला यह कि अगले गुरू व्यक्ति के रूप में सिख मत का मुखी प्रचार केन्द्र खडूर से गोइंदवाल ले

आया जाये जिससे कुदरती तौर पर और अधिक क्षेत्र परोक्ष रूप से सिख केन्द्र से संबंधित हो जाना था और समय पाकर ऐसा हुआ भी ।

सतगुरू साहिबान का दूसरा प्रयोजन सिख प्रभावी नगर स्थापित करने का था जिनमें सिख सभ्यता तथा गुरमत रहित मर्यादा अधिक कारगर ढंग से प्रचलित हो सकें । यह योजना अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण है । पुराने नगरों की जगह नये नगरों में नवीन मर्यादायें बांधने में तथा नये सिद्धांत और रीतियां लागू करने में अधिक अनुकूल वातावरण मिल जाया करता है, जो समूचे तौर पर नये मत के प्रचार में अधिक सहायक सिद्ध हाता है। आज हम इस योजना के महत्व को नहीं समझ रहे और इस पक्ष से कई प्रकार से हानियां भी उठा रहे हैं । यदि गुरमत धारणी नयी कालोनियों, नगरों तथा गांवों को इस ढंग से बनाने की योजनाएं बनाएं कि उनमें गुरमत धारणी बहु संख्या में हावी हो कर विचरण कर सकें तो निश्चित तौर पर इससे सिख रीतियों तथा सिख सभ्यता के फलने तथा विकसित होने में बहुत मदद मिल सकती है । बहुत अलग-अलग रूप में, मिश्रित ढंग से बसे होने के कारण हमारी अगली पीढ़ी के मनों पर स्वत: ही पराधर्मियों के सभ्याचार हावी होने लग गये हैं । मिली-जुली बस्तियों की जगह खालस बस्ती सिखी के प्रचार में अधिक लाभदायक हो सकती है । गोइंदवाल आदि नगरों के निर्माण के पीछे एक विचार यह भी रहा है कि किसी हद तक नये बसे हुए नगरों को इस ढंग से विकसित किया जाये कि सिख रीतियां तथा सभ्याचार हावी हो कर बढ़ फूल सकें ।

नया नगर बसाने तथा विकसित करने में इमारती लकड़ी की आवश्यकता पड़ी । बहुत समस्या खड़ी हो गयी थी । गुरू अमरदास जी ने अपने भतीजे सावण मल को, जो कांगड़े में हरीपुर आदि पहाड़ी इलाकों में सिखी का प्रचार करते थे, पहाड़ी इलाके से इमारती लकड़ी का प्रबंध करने को कहा । पहाड़ी इलाके के लोग पहले वैरागी साधुओं को मानते थे पर सावण मल जी ने सिखी का प्रचार अपने व्यवहारिक जीवन के द्वारा

किया । परिणाम यह हुआ कि वहां के अनेकों वासियों ने सिखी धारण की । हरीपुर का राजा भी अपने अमीरों-वजीरों सहित सिख बन गया । गोइंदवाल ने नव-निर्माण के लिए जितनी इमारती लकड़ी की जरूरत थी, वह ख़ुले दिल से हरीपुर के राजा ने गुरू अमरदास जी को भेज दी और गुरू जी ने सारे नगर वासियों तथा नये बसने वाले वासियों को लकड़ी मुफ्त बांट दी । कुदरती बात थी कि इससे निर्माण का कार्य बहुत तेजी पकड़ गया और गोइंदवाल एक सुंदर सिख नगर के रूप में तैयार हो गया । गोइंदे ने गुरू अमरदास जी के निवास के लिए स्वयं इमारत बनवा कर अपनी ओर से गुरू जी को भेंट कर दी थी । बाद में सन 1556 में हरीपुर का राज परिवार, अन्य अमीरों वजीरों सहित गोइंदवाल, गुरू अमरदास जी के दर्शनार्थ हाजिर हुआ । गोइंदवाल के विकास के द्वारा हुई सिखी की बुलंदी ने भट्ट विद्वानों के मनों ईश्वर की नगरी कह कर सम्मानित किया।

(ङ) बाउली (जलकुण्ड) का निर्माण ।

बाउली से तात्पर्य जलकुंड से है । बाउली का निर्माण कब शुरू हुआ और कब तक यह सेवा चलती रही, इसके बारे में अलग अलग लिखारियों ने अलग अलग समय लिखा है। *त्वारीख खालसा* में कार्तिक की पूर्णिमा संवत 1616 (सन् 1559) को बाउली की सेवा का आरंभ होना बताया गया है । *बंसावली नामा* संवत 1613 विक्रमी बताता है । सरदार सतबीर सिंघ जी के अनुसार बाउली का काम 1553 को आरंभ हुआ और बैसाखी वाले दिन सन् 1558 को कड़ (जलस्त्रोत) तोड़ लिया गया बताते हैं, जिससे पानी भरा गया था । प्रोफेसर साहिब सिंघ जी ने बाउली का सन् 1559 में आरंभ होना लिखा है । उनके अनुसार बाउली सन् 1559 में ही बना कर तैयार भी कर ली गयी थी । कुछ लिखारियों ने बाउली का छः सालों में संपूर्ण होना बताया है और कइयों के अनुसार 9 वर्ष में, अर्थात सन् 1565 और 1568 आदि संपूर्णता के वर्ष बताये गये हैं । छः या नौ वर्ष तक बाउली ही बनती रही, यह बात उपयुक्त नहीं लगती है । बाउली का सन 1559 में ही बन जाना उपयुक्त लगता है । सिख

इतिहास के अनुसार बाबा बुढा जी ने इस सेवा को आरंभ किया था और (गुरू) रामदास जी, भाई माणक चंद, भाई संत साधारण, भाई महेशा, भाई पारो, भाई सचन सच, माई सेवां आदि अनेकों करनी वाले गुरसिखों ने इस सेवा में भाग लिया था ।

"बाउली क्यों बनायी गयी थी ? यह भी एक दिलचस्प तथा जरूरी प्रश्न है, जिसके बारे में कुछ जानकारी लेना लाभदायक होगा । सब से बड़ा कारण तो यह था कि एकाएक साझी बाउली से स्नान तथा पीने के लिए पानी लेने से वरण-आश्रमी मत का छूआछूत वाला वहम दूर हो जाये और इस प्रकार जाति पात के भेद का निवारण किया जा सके । वरण आश्रम श्रद्धालु चलते हुए पानी को पवित्र मानता था पर खड़े पानी को साझे तौर पर प्रयोग करने से हिचकता था, क्योंकि इस से उसके जाति पात संबंधी अभिमान को चोट लगती थी । सतगुरू साहिबान ने लंगर की भांति बाउली के साधन को भी जातिपात के भेद को समाप्त करने के लिए बहुत अच्छा समझा था ।

वैसे गोइंदवाल ब्यास नदी के किनारे बसा हुआ था जिस के कारण पानी की कठिनाई का प्रश्न ही नहीं उठता है । इससे पूर्व गोइंदवाल में एक बड़ा साझा कूआं भी लगा हुआ था, जिस के पानी से नगर का काम चल रहा था । ब्यास नदी का पानी केवल चौमासे में पीने को उपलब्ध नहीं हुआ करता था । जाति अभिमानी ब्रहमणों, क्षत्रियों, गोइंदे के लड़कों तथा शेखों के साथ साझे कुएं पर कई बार क्लह क्लेश हो जाने के कारण भी सिख संगत कोई पक्का तथा असीमित मात्रा में अलग से पानी का प्रबंध करना चाहती थी । कुछ दूर दृष्टि वाले सिख प्रचारक यह भी महसूस करते थे कि एक बड़ी तथा रमणीय-सी बाउली वर्ण-आश्रमी श्रद्धालुओं को दूर-दूर के तीर्थों की भटकन से बचाने में भी सहायक सिद्ध होगी ।

बाउली बनवाने की सेवा में सिखसंगत ने बहुत उत्साह दिखलाया। (गुरू) रामदास जी की अगवाई में बाउली का निर्माण हो रहा था । (गुरू)

राम दास जी केवल अगवाई और निगरानी ही नहीं थे करते बल्कि खुदाई का काम तथा टोकरी उठा कर मिट्टी बाहर निकालने का काम भी वे स्वयं करते थे । एक बार लाहौर से उनकी बिरादरी के कुछ सज्जन गोइंदवाल साहिब गुरू अमरदास जी के दर्शनार्थ आये । जाति अभिमानियों तथा सांसारिक रस्मों का वहम मन में आ गया । (गुरू) रामदास जी गुरू अमरदास जी के जमाई थे, पर गुरू घर की सेवा एक गुरसिख के तौर पर कर रहे थे । जो लोकलाज रिश्ते तथा रस्में ही निभानी होतीं तो सिखी कैसे निभ सकती थी । (गुरू) रामदास जी तो सब सिखों को मानो, सिखी कमाने का ढंग सिखलाने के लिए पद चिन्ह स्थापित कर रहे थे । लाहौर से आये भाई सिहारी मल तथा बिरादरी के कुछ और लोगों ने सिखी की असल कमाई की बात न समझने के कारण लोकाचारी के प्रभाव में (गुरू) रामदास जी, जो गुरू अमरदास जी के दामाद थे, को गोइंदवाल में हर प्रकार की सेवा हाथों से करते हुए देख कर, काफी परेशानी सी महसूस की थी । (गुरू) रामदास जी ने बहुत थोड़े से शब्दों में उन सब को, उनकी त्रुटि बताते हुए कह ही दिया कि वे सब अहं के दीर्घ रोग और लोकाचारी की रीतियों की धुंध के कारण गुरमत के महान उपदेशों व कमाई को समझने में असमर्थ हैं ।

जब खुदाई का सारा काम लगभग संपूर्ण हो गया था तब आगे एक बहुत पक्का कड़ आ गया । इस कड़ को काटे बिना बाउली में पानी आना कठिन बात थी । भाई पारो आदि मुखी सिखों ने गुरू अमरदास जी को अवसर पर बुलवा कर आदेश मांगा कि कड़ को तोड़ने के लिए आगे क्या किया जाय । गुरू अमरदास जी ने बड़ी छोटी छैनियों से और हथौड़ों से कड़ को काटने का सुझाव दिया । यह कार्य इतना आसान नहीं था और काफी खतरे वाला था । छैनी के साथ कड़ को दो फाड़ करते समय यह संभव था कि भूतल का पानी पूर्ण वेग से अचनाक फुहारे की भांति ऊपर चढ़ जाये और बाउली एकदम अचानक पानी से भर जाये । इस प्रकार कड़ को छैनी से काटने वाला व्यक्ति एकदम पानी के वेग में फंस

कर जान गंवा सकता था । यह कार्य एक मरजीवड़े सिदकी सिख माणक चंद ने पूरी दलेरी के साथ किया । कड़ टूटते ही पानी बड़े फुहारे की तरह जोर से, देखते ही देखते सारी बाउली में भर गया और माणक चंद पानी में ही डूब गया । सब ने महसूस किया कि वह अब बाउली में से जीवित नहीं निकल सकेगा । विधवा माता ने पुत्र को मर गया समझ कर बहुत रोना धोना किया । पर परमेश्वर को कुछ और ही स्वीकार्य था । माणक चंद का शरीर बाउली में से निकलवाया गया । पेट में बहुत पानी भर चुका था । बेहोश शरीर का उपचार करके पेट में से पानी निकालने पर माणक चंद होश में आ गया । इस प्रकार उसने सिखों में उत्साह से सेवा करने के मानो पद चिन्ह स्थापित कर दिये । माणक चंद वैरोवाल का पथरीआ था पर इसका जीवन इतना ऊंचा तथा पवित्र था कि भाई माई दास को सिखी के व्यवहारिक जीवन को सीखने समझने के लिए माणक चंद की संगत करने का विशेष अनुग्रह गुरू जी द्वारा किया गया था ।

भाई संत साधारण जो बकाले का निवासी था, गोइंदवाल में बाउली की सेवा में बहुत ही श्रद्धा तथा प्यार सहित शामिल हुआ । यह लोहारा तथा बढ़ई का काम बहुत अच्छी तरह से करता था । गोइंदवाल की बाउली में उतरने के लिए उसने बहुत सुंदर सीढ़ियां, पूर्ण श्रद्धा तथा प्रेम से बना कर फिट की थीं और गुरू जी की खुशी प्राप्त की थी ।

सुल्तान पुर के धीरे जाति के क्षत्रीय महेशा जी ने भी बाउली बनते समय पूरी श्रद्धा तथा प्रेम से सेवा की । सेवा के काम में एक चित हो कर लगातार जुटे रहने के कारण वे अपने व्यापार के काम की ओर ध्यान न दे सके जिसके कारण उनका काम लगभग ठप्प सा ही हो गया । गुर संगत के प्रभाव के कारण भाई महेशा जी बहुत ऊंची आत्मिक अवस्था के मालिक बन गये । धन पदार्थ तथा अन्य सांसारिक वस्तुओं को वे क्षण-भंगुर समझने लगे थे । इन पदार्थो में उनका संसारियों की भांति मोह नहीं रह गया था । इस कारण वे सहज या आनंद की अवस्था में पहुंच गये थे । पदार्थों का छिन जाना अब उनके लिए दुखदायी नहीं था

रहा । बाद में भाई महेशा जी ने दुआबे में सिखी का बहुत प्रचार किया था ।

माई सेवां, जो काबुल की रहने वाली थी, ने भी एकमन को कर बाउली की सेवा आदश ढंग से निष्काम हो कर की थी । यह माई गोइंदवाल में सतगुरू अमरदास जी के दर्शनार्थ आई थी । गुर संगत से इतनी प्रभावित हुई कि बाउली बन जाने तक वापिस देश नहीं गयी । इस माई के व्यवहारिक सिखी जीवन के कारण काबुल के इलाके में सिखी का प्रचार करने के लिए इसको प्रचार करने की मंजी प्रदान की गयी थी ।

बाउली बन जाने पर भाई पारो जुलका, जिनकी निर्माण सेवा तथा सिखी की कमाई को देख कर सतगुरू अमरदास जी ने उन्हें "परम हंस" पद से सम्मानित किया था, ने सतगुरू साहिबान के आगे विनती करते हुए एक लाभदायक योजना रखी । अलग-अलग जगह से अलग-अलग समय पर संगत गोइंदवाल में आती ही रहती थी और गुरू अमरदास जी स्वयं भी जहां कहीं संभव हो सके, प्रचार के लिए दूसरे गांवों तथा नगरों में जाते रहते थे, पर यदि साल में एक दो दिन ऐसे निश्चित करके सभी सिख संगतों का भारी जोड़ मेला कर दिया जाये तो इससे संगत में सिखी के लिए बहुत उत्साह बढ़ेगा और सिखी सिद्धांतों पर गुर मर्यादा का अधिक प्रभावशाली ढंग से प्रचार हो सकेगा । गुरू अमरदास जी ने इस पेशकश पर अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुए स्वीकृति दे दी और इस प्रकार सन् 1567 संवत 1624 में पहली बार बैसाखी के अवसर पर सिख संगत का बड़ा *जोड़ मेला* यानी सम्मिलन हुआ जो बाद में सिख कौम के कौमी त्यौहार का रूप धारण कर गया । बाकी गुरू व्यक्तियों द्वारा भी, सतगुरू जी जहां-जहां भी रहते रहे, यह दिन सिखी के कौमी त्यौहार के रूप में मनाया जाता रहा ।

6. सिख इतिहास में मिलावट का एक नमूना

जैसे कि पहले वर्णन किया जा चुका है कि बाउली की रचना के बारे में लिखारियों ने अलग-अलग सन-संवत लिखे हैं, पर प्रोफेसर साहिब सिंघ जी द्वारा लिखा गया सन 1559 ही सही प्रतीत होता है। अनजाने में अथवा जानबूझ कर सिख इतिहास में मिलावट करने के इरादे से, *गुर प्रताप सूरज* की रास 3 अंसू 7 और *त्वारीख गुरू खालसा भाग 2* के पृष्ठ 611 में कुछ इस प्रकार दर्ज है :

गोइंदवाल की बाउली की खुदाई हो रही थी । तब उन दिनों में अकबर ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया हुआ था । संयोग से इधर बाउली का कड़ टूटने में नहीं आ रहा था और उधर अकबर से चित्तौड़ का किला फतेह नहीं हो पा रहा था । अकबर ने टोडरमल की सलाह पर ताहिर खान को गुरू अमरदास जी के चरणों में मन जोड़कर अरदास करने को भेजा। गुरू जी ने यह वचन किया कि जब बाउली का कड़ टूटेगा तो उसी समय चित्तौड़ के किले पर अकबर की विजय हो जायेगी, इससे पहले नहीं । शाही कारीगर कड़ तोड़ने पर लगा दिये गये । इधर बाउली का कड़ टूटा और उधर गुरू जी के वचन के मुताबिक किला चित्तौड़ पर विजय हो गयी।

राजा बिहारी मल अंबर ने उचित जानकर अपनी कन्या का विवाह अकबर के साथ कर दिया था। मेवाड़ का राजा उदै सिंघ इस बात पर नाराज था क्योंकि इस से राजपूती स्वाभिमान तथा ग़ैरत पर चोट लगती थी। अकबर उदै सिंघ पर आक्रमण करके उसे इस विरोध का फल चखाना चाहता था । राजा उदै सिंघ इस आक्रमण के समय जैमल तथा फते को किला सौंप कर स्वयं पहाड़ों की ओर भाग गया था । शाही फौज ने सितम्बर सन् 1567 में चित्तौड़ पर घेरा डाल लिया था, व 23 फरवरी, 1568 को चित्तौड़ जीत लिया गया। *स्मिथ, लेन, कर्नल टाड, अबुल फ़जल* (अकबरनामे का लिखारी तथा अकबर का दरबारी) डॉ ईश्वरी प्रसाद आदि के हवालों के अनुसार अकबर द्वारा चित्तौड़ पर आक्रमण और विजय का समय सन 1567या 1568 ही दर्शाता

है । बाउली का काम सन् 1559 में आरंभ हुआ था और सन् 1559 में ही संपूर्ण कर लिया गया था । जिस किसी लिखारी ने भी सन् 1565 तक, 6-7 साल तक की अवधि तक, बाउली बनते रहने की बात, लिखी है, वह भी अच्छी खासी बेकार लगती है । गुरू अमरदास जी का संरक्षण हो, (गुरू) रामदास जी की निगरानी हो रही हो, बाबा बुढा, भाई पारो, भाई माणक चंद, भाई संत साधारण, भाई महेशा, माई सेवां, भाई सचन सच आदि अनेकों श्रद्धावान तथा परिश्रमी सिख सेवा कर रहे हों तो एक बाउली छः सात सालों में पूर्ण न हाने का बखान करना, उपरोक्त महापुरूषों के साथ अन्याय ही नहीं, अपनी सूझ बूझ का अपने हाथों ही दीवाला निकालने वाली बात है । कैसी भी सख्त जगह क्यों न हो, कुएं या बाउली बनाने मात्र के लिए इतने साल लग जाने का वर्णन करना, इतने परिश्रमी, श्रद्धावान और आगे बढ़ कर काम करने वाली संसार प्रसिद्ध समर्पित कौम के साथ मज़ाक करना होगा । फिर निर्माण की इतनी सुस्त चाल पर भी यदि टिप्पणी करें तो बाउली का निर्माण सन् 1565 का किसी तरह से मान भी लिया जाय, तो भी बात नहीं बनती, क्योंकि चित्तौड़ का किला सन् 1568 में विजयी हुआ था । वास्वत में ऐसी साखी किसी मुगल राज्य के शुभचिंतक ने, मुगल राज्य के प्रभाव में चला दी थी, जिस के अनुसार लिखारी आगे से, मखी पर मखी मारते चले गये हैं । वास्तव में बाउली के कड़ टूटने और चित्तौड़ गढ़ विजयी होने का आपस में दूर का भी संबंध नहीं है ।

बाउली साहिब की सीढ़ियों की संख्या 84 रखी थी, जो अपने आप में मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालती थी । अनन्त प्राचीन ग्रंथों में योनियों की संख्या चौरासी लाख दर्शायी गयी है । पराधर्मो के अधूरे सिद्धांतों अथवा मनमत के पीछे चलने वाले लोगों को गुरमत के धारणकर्ता मखौल में *चौरासी का खाज* ही कहते रहे हैं । जपु जी पाठ पर विचार करके बाउली में से जल ग्रहण करने तथा स्नान करने से स्वभावत: ही जाति पात का भेदभाव दूर हो जाता था । इस प्रकार ब्राहमणी मत द्वारा नाति पात के आधार पर किसी को नीचा और किसी को ऊंचा मानने वे गलत सिद्धांत

से छुटकारा हो जाता था । ज़ाति अभिमान तथा मनुष्य जाति के कुछ हिस्से से जाति व जन्म आधारित नफरत का अंत करके सारी मानवता को भाई बहन मानने की दिशा में लाता था । जाति अभिमान आदि मनमत से छुटकारा हो जाना, निश्चित तौर पर चौरासी से छुटकारा था, जो सिखों ने गुरू की मति को धारण करके प्राप्त कर लिया था।

(क) हरी राम तपे की पोल खोलना

गोइंदवाल में बाउली का निर्माण सन् 1559 में हुआ था । बाउली के संपूर्ण होने के समय गुरू अमरदास जी ने गोइंदवाल साहिब में सिख संगत का भारी समारोह करने का निर्णय किया । यह कार्य केवल जल उपलब्धि हेतु बाउली के निर्माण का नहीं था बल्कि इसमे यह भावना निहित थी कि वर्ण-आश्रम आधारित मत के जाति पात के भेद भावों और अंतर को समाप्त करके, सिख मत के सह-अस्तित्व तथा बराबरी के महान सिद्धांतों का निर्माण किया जाय । सिख मत के श्रद्धालुओं के लिए यह बड़ा उत्साहजनक अवसर था । इस अवसर पर गुरू अमरदास जी ने सिखी सिद्धांतों की उत्तमता और उत्कृष्टता दृढ़ करवाने के लिए तथा वरण-आश्रमी मत वालों के पाखंड से पर्दा उतारने के लिए एक बहुत ही रोचक तथा दिलचस्प घटना का वर्णन यहां किया जाता है ।

बाउली की खुदाई संपूर्ण होने पर, बड़े स्तर पर निमंत्रण भेजे गये। जाति अभिमानियों को उलझन में से निकालने के लिए (दूसरे हिसाब से उलझन में डालने के लिए) एक बहुत हास्यास्पद शोशा छोड़ा गया । गुरू अमरदास जी ने यह ऐलान कर दिया कि उच्च जातियों में से जो लोग जाति पात के वहम और अहंकार को छोड़ कर गुरू के साझे लंगर में से प्रसाद सेवन करेंगे, उनको एक रूपया इनाम दिया जायेगा । उस समय एक रूपये की कीमत आज के मुकाबले में काफी अधिक थी । अनेकों लोगों ने केवल मात्र रूपये के इनाम को प्राप्त करने के लिए वर्ण भेद का खात्मा करवा लिया और इस प्रकार वरण आश्रमी मत के सिद्धांतों के थोथेपन का इजहार कर दिया ।

लोगों को सहअस्तित्व का सिद्धांत दृढ़ करवाने के लिए और वरण आश्रमी मत के श्रद्धालुओं का पाखंड उघाड़ने के लिए बाद में इस इनाम की रकम बढ़ा कर पांच रूपये कर दी गयी । बड़े-बड़े धुरंधर आचार्या अपने भ्रमों भरे सिद्धांत का त्याग कर बैठे । कुछेक जिद्दी लोग फिर भी रह गये थे । इनाम की रकम और बढ़ा दी गयी । इनाम एक मुहर तक का निश्चित कर दिया गया । बड़ी जबदस्त विस्माद की स्थिति पैदा हो गयी, जिसका इस साखी में वर्णन किया गया है ।

गोइंदवाल में एक हरी राम नाम का व्यक्ति तपे (तपीश्वर) के नाम पर पिछले कुछ समय से विचरण कर रहा था । व्यवहार को देखते हुए, इस का सही नाम तो मिलाजुला राम होना चाहिए था, पर माता पिता ने उसका नाम हरी राम रखा था । वह तप का बहुत पाखण्ड करता था और तपा कहलवा कर बहुत खुशी महसूस करता था । अपने को जोग मत का धारणकर्ता बताता था और अपने पंच भूतक शरीर को जोगियों की तरह राख द्वारा सजा संवार कर रखता था । वैसे वह शादी शुदा तथा घर ग्रहस्थी वाला था, जिसके लिए जोग मत में अधिक प्रावधान नहीं था । था तो वह मिला-जुला व्यक्तित्व ही, पर धर्म का सही प्रचार न होने के कारण कई लोग इसके वर-श्राप से भयभीत थे कि कहीं कोई ऊट पटांग श्राप दे कर कोई नुक्सान न कर दे ।

दिन प्रति दिन गुरू घर का प्रचार बढ़ते जाने के कारण यह तपा गुरू अमरदास जी के सम्मान से खार खाने लगा । वह समय समय पर गुरू साहिब तथा सिख सिद्धांतों के विरूद्ध बोलता रहता था । कुछ उच्च जातीय जाति अभिमानी भी छिप छिपा कर इस की पीठ ठोकते रहते थे । यह स्वयं जाति का मरवाह क्षत्रिय था । सिखी प्रचार के विरूद्ध बोलते समय यह बाउली तथा लंगर की भरपूर आलोचना किया करता । उसकी बुद्धि के मुताबिक गुरू जी ने वरण आश्रमी मत के जाति पात के भेद भाव को मिटा कर बहुत बड़ा अधर्म और अनर्थ किया था । वह साझे लंगर में प्रसाद सेवन करने को धर्मभ्रष्ट होना कहता था ।

जिस दिन गुरू साहिब ने एक रूपया इनाम देने का ऐलान किया

था, वह अपने किसी चेले चाटे के घर प्रसाद सेवन करने गया हुआ था और वहां से उसे एक रूपया दक्षिणा मिली थी। उसके खाना खा कर वापिस आने तक यह इनाम पांच रूपये तक बढ़ चुका था । बहुत चकराया और परेशान हुआ । गुरू जी ने उसको विशेष निमंत्रण भेजा पर उसको पांच रूपये ले कर जाति पात के भेद भाव को खुले आम त्यागना, सिर कटवाने से भी अधिक कठिन लग रहा था । वह गुरू पातशाह के महान ईश्वरीय सिद्धांत के विरूद्ध ऊट पटांग बोलता रहा । गोइदे के लड़कों तथा ब्रहामणों को गुरू साहिब के विरूद्ध भड़काने में तपे का बहुत हाथ हुआ करता था । अपने आप को एक बहुत विरक्त तथा त्यागी महात्मा के तौर पर प्रसिद्ध करने में वह आत्म संतुष्टि महसूस करता था।

जाति अभिमान छोड़कर, लंगर सेवन करने के लिए जब इनाम को बढ़ा कर मुहर तक लाया गया तो कई लोग एक-एक मुहर का इनाम ले कर फिरने लगे तो हरी राम तपे के मन में आया कि जैसे तैसे वह भी मुहर प्राप्त कर ले । पर मुश्किल यह थी कि लंगर तो सदृश्य होकर, खुले आम सेवन करना पड़ता था, जिससे उसकी बनी बनाई सारी साख खत्म हो जानी थी ।

तपे हरी राम ने अपनी तीव्र बुद्धि से काम लेते हुए स्वयं लंगर में जाने की जगह अपने छोटे से पुत्र को लंगर की पिछली दीवार से लंगर में कूद जाने को कहा । दीवार से पार होते समय वह लड़का लंगर वाले स्थान में जा गिरा । तपे ने यह काम चोरी छिपे लोगों की दृष्टि से बचा कर, बहुत जल्दी में किया था । तपे के लड़के को टांग पर करारी चोट लगी । लड़का छोटा था । उस ने लगी चोट के कारण सब को बता दिया कि किस प्रकार उस के पिता ने मुहर का इनाम लेने के लिए उसको दीवार से कुदवा कर लंगर में फेंका था । लड़के को संगत ने लंगर तो सेवन करवा दिया और मुहर का इनाम भी दे दिया मगर यह बात सारी संगत में फैल गयी थी और तपे की लोभी तथा पाखंडी प्रवृत्ति का सब को पता लग चुका था । बात चलते चलते नगर के मुखी लोगों तक भी पहुंच गयी जिससे तपा सब के हंसी मजाक का विषय बन गया । गउड़ी की

वार में इस पाखंडी तपे की घटना का गुरू रामदास जी ने बड़ा सुंदर वर्णन किया है । यथा :

"तपा न होवै, अंद्रहु लोभी नित माइआ नो फिरै जजमालिआ ।।
अगो दे सदिआ सतै दी भिखिआ लए नाही,
पिछो दे पछताइ कै आणि तपै पुतु विचि बहालिआ ।।
पंच लोक सभि हसण लगै, तपा लोभि लहरि है गालिआ ।।
जिथै थोड़ा धनु वेखै, तिथै तपा भिटै नाही,
धनि बहुतै डिठै तपै धरम हारिआ ।।
भाई ऐहु तपा न होवी, बगुला है,
बहि साध जना वीचारिआ ।।
सत पुरख की तपा निंदा करै, संसारै की उसतति विचि होवै,
ऐतु दोखै तपा दयि मारिआ ।।
महापुरखां की निंदा का वेखु जि तपै नो फलु लगा,
सभु गइआ तपे का घालिआ ।।
बाहरि बहै पंचा विचि तपा सदाए ।।
अंदरि बहै तपा पाप कमाए ।।
हरि अंदरला पाप पंचां नो उघा करि वेखालिआ ।।
धरम राइ जमकंकरां नो आखि छडिआ,
एसु तपे नो तिथै खड़ि पाइहु,
जिथै महां महां हतिआरिआ ।।
फिरि एसु तपे दै मुहि कोई लगहु नाही,
ऐहु सतिगुरि है फिटकारिआ ।।
हरि कै दरि वरतिआ सु नानकि आखि सुणाइआ ।।
सो बुझै जु दयि सवारिआ ।। (गउड़ी की वार, महला ४, पृ ३१५)

वह व्यक्ति तपा नहीं हो सकता जो मन से लोभी हो और जो दुश्कर्मी नित्य प्रति माया के लालच में भटकता फिरे । यह (हरी राम) तपा पहले सम्मान से मिली भेंट लेने को तैयार नहीं हुआ पर बाद में माया के लालच वश (हरी राम) तपे ने अपने पुत्र को ला कर लंगर की पंक्ति में बिठा दिया ।

लोगों के प्रति तपे के लोभ लालच की बात खुलकर सामने आ गयी । बात खुल जाने पर गोइंदवाल के मुखी लोग हंसने लगे कि यह

अच्छा तपस्वी है जो लोभ की लहरों में गला हुआ है । वे हंस कर कहने लगे कि जहां थोड़ी रकम मिले, उधर तपा (हरी राम) चलने को तैयार नहीं, पर बड़ी भेंट या रकम के लालच में आकर यह अपना जाति पाति तथा छूआ छूत वाली कट्टरता नियम त्याग बैठा है ।

नगर के भद्रपुरूषों ने तपे के बारे में बैठ कर यह विचार तथा निर्णय किया कि (हरी राम) वास्वत में तपा या धर्मात्मा नहीं, पाखंडी बगुला है । यह अच्छा तपस्वी है जो भले पुरूषों की तो निंदा करता है और माया के लालच में फंसे संसारियों की स्तुति करता है और इस दोश के कारण परमेश्वर ने इस तपे को आत्मिक जीवन की ओर से मार रखा है ।

महापुरूषों की निंदा का इस तपस्वी को यह फल मिला है कि उस द्वारा की गयी आज तक की आध्यात्मिक कमाई बेकार गयी है । बाहर गोइंदवाल के मुखिया लोगों में बैठ कर यह अपने आप को तपा कहलवा रहा है और अंदरखाते ये खोटे कर्म कमा रहा है । पर परमेश्वर ने ऐसी विधि बना दी है कि नगर के सब मुखियों के सामने तपे के अंदर का पाप खुल कर सामने आ गया ।

धर्म राज ने अपने दूतों को कह दिया है कि इस पाखंडी तपे को वे ऐसी जगह पर डालें जहां बहुत बड़े हत्यारे डाले जाते हैं । फिर वहां पर भी इस पाखंडी तपे के मुंह कोई न लगे, क्योंकि यह तपा सतगुरू द्वारा फिटकारा हुआ है । हरी के दर पर जो होता है, वह कह कर सुना दिया है और इस शुभ सत्य को केवल वही मनुष्य समझता है जिसके आत्मिक जीवन को मालिक प्रभु ने स्वयं संवारा हो ।

इस घटना ने सिखी प्रचार में महान योग दिया और साथ ही पराध र्मियों के गलत सिद्धांतों तथा लोभी वृत्ति भी पूरी तरह खुलकर सामने आ गयी ।

(ख) मरवाहे चौधरी की ओर से विरोध तथा उसका फावा होना

जैसे कि पहले बताया जा चुका है कि गोइदे मरवाहे ने गुरू अंगद देव जी के दरबार में हाजर हो कर विशेष तौर पर यह विनती की थी कि

गुरू दरबार की ओर से उसको नगर गोइंदवाल बसाने में मदद दी जाय । इस कार्य को गुरू अंगद देव जी ने (गुरू) अमरदास जी को सौंप दिया था । वास्तविकता यह है कि गुरू अमरदास जी को सरगर्म सहायता और सिखों के संरक्षण के बिना गोइंदा इस नगर को बसा ही नहीं सकता था ।

गोइंदा गुरू घर का अनन्य श्रद्धालु हो गया था । गोइंदे ने उस नगर में गुरू अमरदास जी के लिए स्वयं अपनी ओर से सुंदर निवास स्थान बनवा कर भेंट किया था । पर गोइंदे की मृत्यु हो जाने के पश्चात उसकी औलाद अच्छी न निकली । उधर सैद्धांतिक मत भेदों के कारण ब्राहमण और उच्च जातीय जाति अभिमानी सिखी लहर से खार खाने लग गये थे। नगर में जितना भी निर्माण कार्य होना था, उसके लिए सिखों ने जमीन गोइंदे से अथवा उसके लड़कों से मोल ली थी । यहां तक कि बाउली वाली धरती भी सिख संगत ने खरीदी थी । यह बात अलग है कि हरीपुर के श्रद्धालु सिख राजा ने भारी मात्र में इमारती लकड़ी गुरू जी को श्रद्धा में भेजी थी और गोइंदवाल में निर्माण का कार्य करवा रहे किसी व्यक्ति को लकड़ी की कमी का सामना नहीं करना पड़ा । फिर सिखों को ही नहीं, नगर में मकान बनाने वाले दूसरे लोगों को भी गुरू जी ने यह लकड़ी मुफ्त बांट दी थी ।

वास्तव में जाति अभिमानी, सिखी लहर की चढ़दीकला देखकर और सैद्धांतिक मतभेदों से बहुत परेशान थे । आस पास के इलाके में गुरू नानक मत को मानने वालों की संख्या बहुत बढ़ चुकी थी । गोइंदवाल तो वैसे ही सिख नगर के रूप में बन रहा था । सिखों द्वारा आए दिन बढ़चढ़ कर समारोह व सम्मेलन होने लगे । लंगर और बाउली ने तो जाति अभिमानियों को बहुत ही परेशान कर रखा था । और कोई पेश न जाती देख कर ब्राहमणों तथा अन्य जाति अभिमानियों ने गोइंदे के लड़कों को जा भड़काया । गोइंदे के लड़के गुरू अमरदास जी के परोपकार को भूल कर, गुरू घर के साथ खार खाने लगे । एक लड़का

तो सरकारी खजाना लूटने के अपराध में शाही फौजों के आड़े हाथ आ गया था और उसको शाही फौज ने मार कर उसकी किये की सजा दी थी ।

दूसरा लड़का जों गोइदे की जगह नगर का चौधरी बना था, उस समय गुरू अमरदास जी ने सेना से बचा लिया था । पर यह लड़का अकृतघ्न जाति अभिमानियों के बहकावे में आ गया । उनकी कुमंत्रणा पर इसने लाहौर की सरकार को गुरू अमरदास जी के विरूद्ध शिकायत दर्ज करवा दी ।

लाहौर का गवर्नर **खिजर ख्वार्जा** खान था । वह स्वयं जांच के लिए गोइंदवाल आया । आस पास से बहुत लोग एकत्र करके जब वास्तविकता का पता करवाया गया तो मरवाहे चौधरी का मुकदमा खारिज कर दिया गया । आम लोगों ने गुरू महाराज की ऊंची रूहानी तालीम, समाज सुधार, परोपकार भरे कार्यो पर उनके ऊंचे व निर्मल व्यक्तित्व की प्रशंसा की । साथ में आया फौजदार, ताहिर बेग, गुरू साहिब से प्रभावित हो कर सिंघ सज गया।

इधर से जलील होने पर मरवाह चौधरी ने जाति अभिमानियों के उकसावे में आ कर, अकबर बादशाह के दरबार की ओर मुंह किया । जमाने के रिवाज़ के मुताबिक, अपने आप को बिल्कुल हीन तथा दीन घोषित कर के, वह बादशाह के पास आ कर फर्यादी बना । इस काम के लिए चौधरी ने अपने एक बुद्धिमान तथा चतुर कर्मचारी को साथ लिया। उसने बादशाह के पास इस प्रकार की अपील करने के लिए विधिपूर्वक अपने मुलाजम को नीला, काला मैला और गंदगी से भरा हुआ चोला पहना दिया । रास्ते में ही यह चतुर तथा बातूनी कर्मचारी, अपने मालिक का पक्ष साधने के लिए, गुरू अमरदास जी की निंदा करने के लिए मनघड़ंत कहानियां सुना-सुना कर, रिहर्सल करता हुआ गया । चतुर सेवक ने, मर्यादा के अनुसार व्यवहार करके, रो-रो कर अपने स्वामी, मरवाहे चौधरी का दावा अकबर के सामने पेश किया । अकबर ने सारा

मामला सुना । गवर्नर लाहौर की मौके पर की गयी जांच का विवरण भी प्राप्त किया । अपने जासूस अहलकारों से भी गुरू अमरदास जी के बारे में सारी घटनाओं की सूचना प्राप्त की । गुरू नानक मत के सिद्धांत और जीवन पद्धति के बारे में भी जानकारी प्राप्त की । पूरी जांच के पश्चात, चौधरी अपने चतुर कर्मचारी सहित झूठा सिद्ध हुआ । अकबर ने दोनों को फिटकार डाली और जलील करके अपनी कचैहरी में से निकाल दिया । राज दरबार से दोनों का मुंह काला करके निकाल दिया गया । लोगों ने दोनों पर खूब लाहनतें डालीं । वह जलील हो कर वापिस गोइंदवाल चला आया । आम लोगों ने इन दोनों को मुंह लगाने तक से इनकार कर दिया । इतनी फटकार और मानसिक तौर पर हुई जलालत के कारण, मरवाह चौधरी बीमार हो गया । कुछ खा-पी न सके । उधर से भूख प्यास परेशान करे, पर अंदर कुछ न जाये। कोई संबंधी मुंह लगाने को तैयार नहीं था । घर की स्त्री तथा भतीजों ने घर ला कर, उसे लंबा डाल दिया । इस सारी घटना को गुरू राम दास जी ने **गउड़ी की वार** में इस प्रकार दर्ज किया है ।

मलु जूई भरिआ नीला काला खिधोलड़ा,
तिनि वेमुखि वेमुखै नो पाइआ ।।
पासि न देई कोई बहणि, जगत महि गूह पड़ि,
सगवी मलु लाइि मनमुखु आइआ ।।
पराई जो निंदा चुगली नो वेमुखु करिकै भेजिआ,
ओथै भी मुहु काला दुहा वेमुखां दा कराइआ ।।
तड़ सुणिआ सभतु जगत विचि भाई,
वेमुखु सणै नफरै पउली पउदी,
फावा होइकै उठि घरि आइआ ।।
अगै संगती कुड़मी वेमुखु रलणा न मिलै,
तां वहुटी भतीजी, फिरि आणि घरि पाइआ ।।
हलतु पलतु दोवै गए, नित भुखा कूके तिहाइआ ।।
धनु धनु सुआमी करता पुरखु है,
जिनि निआउ सचु बहि आपि कराइआ ।।

जो निंदा करे सतिगुर पूरे की, सो साचै मारि पचाइआ ।।
ऐहु अखरु तिनि आखिआ, जिनि जगतु सभु उपाइआ ।।

(गउड़ी की वार महला ४, पृ ३०६)

भावार्थ : बेमुख (मरवाहे चौधरी) ने अपने बेमुख (नौकर) को मैल और जूओं से भरा हुआ नीला, काला गोदड़ा पहना दिया । संसार में उसको कोई अपने पास नहीं बैठने नहीं देवे । बल्कि संसार में उस पर और गंदगी पड़ गयी और अधिक मैल लगा कर वह मनमुख वापिस आ गया ।

उस नौकर को पराई निंदा तथा चुगलियों के कारण गुरू से बेमुख करके भेजा गया था, पर वहां पर भी दोनों बेमुख (मरवाहे चौधरी तथा उसके कर्मचारी का) मुंह काला किया गया । हे भाई, सारे संसार में सभी दिशा में जल्दी ही यह खबर सुनी गयी कि बेमुख (मरवाहे चौधरी) को अपने कर्मचारी नौकर सहित अच्छे जूते पड़े । जूतों की मार से पगला हुआ वह वापिस अपने घर को आ गया ।

घर पहुंचने पर आगे से संगत ने, उसके रिश्तेदारों व समधियों ने बेमुख मरवाहे चौधरी को, अपने में मिलाने से इंकार कर दिया । उसे बिरादरी से निकाल दिया । इस प्रकार मरवाहे चौधरी को बहुत जलील होना पड़ा । तब उसकी स्त्री तथा भतीजों ने मरवाहे को उठा कर, घर ला कर, खटिया पर डाल दिया । पूरे सतगुरू की निंदा तथा चुगली करने के पापों के कारण, उसके लोक-परलोक दोनों चले गये । उसको एक ऐसा घातक रोग हो गया कि अन्न-पानी पचना बंद हो गया । जिसके कारण नित्य ही वह भूखा-प्यासा रह कर चीखें मारने लगा ।

सृजनहार परमेश्वर धन्य है जिसने मानो, स्वयं बैठकर सच्चा न्याय करवाया है । जो व्यक्ति पूरे सतगुरू की निंदा करता है, उसको सच्चा परमेश्वर स्वयं किये का फल दे कर, ख्वार करता है । सत्य मानो, यह न्याय के अक्षर वहीं प्रभु कहता है, जिसने स्वयं सारा संसार पैदा किया है ।

इस प्रकार जाति अभिमानियों का विरोध और साजिश कामयाब न हो सकी । बल्कि मरवाहे चौधरी की जलालत, उनके लिए बड़ी नमोशी का कारण बनी ।

(ग) स्थानीय मुसलमानों द्वारा विरोध

ज्यों-ज्यों सिखी का प्रचार बढ़ता जा रहा था और अधिक से अधिक लोग सिखी धारण कर रहे थे, त्यों-त्यों शेख फते की गद्दी वाले सरवरियों की भी सिखी के विरूद्ध खिलाफत बढ़ती ही जा रही थी । माझा में तरन-तारन से कोई पांच मील की दूरी पर इस गद्दी का प्रमुख केंद्र स्थित था । इस गद्दी के श्रद्धालु *सरवरिए* कहलाते थे । श्रद्धालुओं में हिंदू और मुसलमान दोनों थे । हिंदुओं से धर्मांतरित हुए श्रद्धालुओं के लिए यह आवश्यक नहीं था कि वे हिंदू धर्म को एकदम त्याग दें । भेद की बात तो यह थी कि सरवरिए हिंदू इस गद्दी द्वारा प्रचारित रीतियों के कारण आधे-अधूरे तो मुसलमान बन ही जाते थे । सरवरिए इस प्रकार घुमा-फिराकर चतुराई से इस्लाम का प्रचार करते थे ।

गुरू अमरदास जी द्वारा चलाई गई सिखी की लहर के कारण हिंदू ही नहीं अनेकों मुसलमान भी सिख धर्म के अनुयाई बन रहे थे। यह बात सरवरियों की गद्दी वालों को बहुत खटकने लगी थी । गुरू अंगद देव जी ने अपना प्रमुख केंद्र करतारपुर, (रावी नदी के किनारे) के स्थान पर खडूर साहिब को बनाया था जो सरवरियों के अड्डे से बहुत समीप होने के कारण क्षेत्र की आम जनता और सरवरियों पर भी हावी होने लग गया था । अरोड़े हिंदुओं में से जिन लोगों ने इस्लाम धारण किया था, वे खोजे परिवार, इस नगर में आ बसे थे । ये खोजे मूल रूप से सरवरिए ही थे । ये एक स्वाभाविक बात थी कि सरवरियों के धार्मिक नेता खोजे मुसलमानों को गुरू अमरदास जी का जोरदार विरोध करने की प्रेरणा देते । राज्य-बल मुसलमानों के हाथ में होने के कारण इन खोजों के हौंसले भी बहुत बढ़े हुए थे ।

सिख-विरोधी क्षत्रियों व ब्राहमणों ने भी खोजों को सिखों के विरुद्ध भड़काने में काफी योगदान दिया । जब तक गोइंदवाल में गुरू घर की

बाउली (जलकुंड) नहीं बनी थी, सिख भी गोइंदवाल के पुराने कूएं से पानी भर कर लाते थे । स्पष्ट तौर पर झगड़ा शुरू करने का कोई बहाना खोजों के पास बन नहीं रहा था । इस कारण वे खुले आम ज्यादतियां करने पर उतर आए । उन्होंने कूएं पर पानी भरने गए पनिहारी सिखों के घड़े, पत्थर मार कर तोड़ने शुरू कर दिए । चमड़े की मश्कों से पानी भरकर लाने वाले सिखों की मश्कों को तीर मार कर फाड़ना शुरू कर दिया । गुरू अमरदास जी ने सिखों को इस समय सीधे तौर पर झगड़ा न करने की प्रेरणा दी । खोजों को भी तर्क व प्यार से समझाने का प्रयास किया गया पर इन पर भद्र तरीकों का कोई असर होता प्रतीत नहीं हो रहा था ।

इन दिनों में सन्यासी साधुओं का एक टोला गोइंदवाल आ निकला । ये साधु शस्त्रधारी थे । जब कुछ सन्यासी साधु कूएं से पानी भरने को गए, तो बिगड़े हुए खोजों के लड़कों ने इनके बर्तनों पर गुलेलों से पत्थर मारने शुरू कर दिए । इच्छा ईश्वर की, एक पत्थर सन्यासी साधु की आंख में जा लगा । साधु लोग भी शस्त्रधारी व शरारती थे । झगड़ा बहुत बढ़ गया । दोनों ओर से तीर-तलवारों का प्रयोग हुआ, पर सन्यासी साधुओं के सामने खोजों का बस चला नहीं । वैसे दोनों पक्षों का काफी जानी नुक्सान भी हुआ । इस तरह खोजों को काफी गुस्सा आया । इस घटना के पश्चात कुछ समय तक खोजे स्वयं ही सिखों के साथ झगड़ा करने से हट गए और भद्र व्यवहार करते हुए विचरण करने लगे ।

बहुत लंबी अवधि तक भद्र बन कर रहना खोजों के बस की बात नहीं थी । खोजों के युवकों ने वारिसशाह की कहावत *'वारसशाह न आदतां जांदीआं ने भावें कटीए पोरियां-पोरियां जी'* (वारसशाह के अनुसार चाहे बोटी-बोटी कर दो, पर पुरानी आदतें जाती नहीं) को साकार कर दिखलाया । हुआ क्या कि शाही खजाना लाद कर दिल्ली ले जाया जा रहा था । बहुत जोर की आंधी आई । शाही खजाने से लदी एक खच्चर अपने झुंड से अलग होकर खोजों के मुहल्ले में घुस आई । खोजों ने

खजाने से लदी इस खच्चर को चोरी करने की नीयत से अपनी हवेली में खींच कर बंधक बना लिया । चोरी करने के साथ-साथ उनका इरादा सीनाजोरी का भी था । उनका कुटिल इरादा इस चोरी को सिखों के माथे मढ़ने का था । खजाने से लदी खच्चर गुम हो जाना शाही सेना के लिए इज्जत का सवाल था । खच्चर पंख लगाकर कहीं उड़ तो गई नहीं थी । खोजों ने अपनी कुटिल नीति के अनुसार शाही सेना को सिखों के विरूद्ध भड़काया और कहा कि खच्चर को सिखों में से किसी ने बंधक बना कर चुरा लिया है । नगर में वैसे भी सिख बहुसंख्य थे । सेना ने शहर की तलाशी लेनी शुरू कर दी । पर अंतत: बंधक बनी खच्चर ने ही शाही सेनाओं को पुकारा और अपने गर्दभ-स्वभाव के अनुसार उसने हवेली में से रेंकना शुरू कर दिया । चुराया गया खजाना भी खोजों की हवेली से बरामद हो गया । इस तथाकथित शुभ कार्य में गोइंदे के एक लड़के ने भी खोजों का पूरा साथ दिया था । शाही सेना ने खोजे के लड़के सहित सभी शरारती लड़कों को बांध लिया और उचित सजाएं दीं । कइयों के तो उन्होंने हाथ पैर काट दिए और गोइंदे मरवाहा के एक लड़के को तो उन्होंने जान से ही मार दिया । गोइंदे की पत्नी दूसरे लड़के को छिपा कर गुरू अमरदास जी की शरण में ले कर चली गई थी और इस तरह वह सेना के हाथों मरने से बच गया । इस तरह शेख-खोजों को सेना ने अच्छी तरह सबक सिखा कर दरुस्त कर दिया । इस घटना से खोजे इतने ज़लील हुए कि शहर में मुंह दिखाने लायक नहीं रहे और शनै: शनै: नगर छोड़कर फतिआबाद और घाणी-घरोटी आदि स्थानों पर स्थानांतरित हो गए । इस तरह वे *जैसी करनी, वैसी भरनी* भुगत कर सिखों के गले से उतर गए ।

(घ)हकूमत को गुरू अमरदास जी के विरूद्ध शिकायतें और दावा ।

ब्राहमणी मत के नेताओं का गुरू घर के प्रभाव के सामने पतन होने लगा । वे गुरू घर को हानि पहुंचाने की कई साजिशों में नाकामयाब हो गये । अब उन्होंने छिप-छिप कर साजिशें करने की नीति छोड़कर

सिख धर्म का खुला तथा सीधा विरोध करने की नीति अपनाई । उन्होंने एक विस्तृत शिकायत-नामा तैयार करके गुरू अमरदास जी के विरूद्ध बादशाह के पास दावा दरज करवा दिया । इस में मुख्य बात यह थी कि गुरू अमरदास जी ने एक नया मत चला दिया है जो हर प्रकार के ब्राहमणी मत के सिद्धांतों का बहुत खुला विरोध करता है । शिकायतनामे में लिखा गया कि लंगर में सब को *प्रशादा* सेवन करवाने से और बाउली (जलकुंड) के सार्वजनिक प्रयोग द्वारा जाति भेद को समाप्त किया जा रहा है । इससे ब्राहमणी मत संकट में फंसता जा रहा है । तीर्थ यात्राओं तथा गंगा आदि नदियों के स्नानों को अर्थहीन समझने का प्रचार करने से, हमारी स्थिति गुरू अमरदास जी द्वारा बहुत खराब की जा रही है । हमारा लगभग कोई ऐसा नियम नहीं, जिसका ये खुला विरोध न करते हों । कुछ नियमों का तो खुला विरोध किया जाता है और कुछ नियमों के बारे में ऐसी दलीलें दी जाती हैं कि हमें उपहास का सामना करना पड़ जाता है । *गायत्री* को सूर्य देवता की उपासना कह कर, लोगों को छुड़वाया जा रहा है । हमारी प्रचीन रीतियों का खंडन ही नहीं किया जा रहा, वेदों तक को हल्का-फुल्का करार कर दिया है । गुरू जी *देव बोली* संस्कृत की महानता को मानने की जगह सभी बोलियों को ही परमेश्वर की बोली मान रहे हैं । गुरू जी हमारे द्वारा प्रचारित विशेष तिथियों, दिनों व वारों की मान्यताओं को मानना महामूर्खता बताते हैं । सब से बढ़ कर तो हमारा दिल इस बात से दुखी हुआ है कि इन्होंने ब्राहमणों की कोई विशेष 'पद-पदवी' बिल्कुल ही नहीं माना है और खुले आम हमें बेकार और निखट्टू कह कर अपमानित कर रहे हैं । यजमानों से वेद रीतियों के अनुसार हम दान दक्षिणा प्राप्त करते हैं तो उनके घरों को पवित्र करने के लिए उनके यहां भेजन सेवन करते हैं । पर गुरू जी खुले आम प्रचार कर रहे हैं कि हम धर्मात्मा एवं अभिजात कैसे कहलवा सकते हैं । वे कहते हैं कि हम श्रमहीन रह कर, दूसरों के घर भोजन पा कर, उन पर भार डाल रहे हैं । लोगों को केवल गुरबाणी पर निश्चय करने का उपदेश

दे रहे है। । इनकी बाणी में ऐसी ऐसी बातें लिखी हैं, जिनको सुन-सुन कर हम दुखी हो गये हैं। हमारी तो इन्होंने कमर ही तोड़ दी है । कम तो तुम्हारे इस्लामवालों के साथ भी नहीं करते पर उस के बारे में तो आप जैसे उचित समझें, करें । हमारी विनती तो यही है कि कम से कम ऐसा प्रचार बंद करवा कर हमारा क्लेश तो मिटाओ । आप हमारे बादशाह हो और हम आपकी प्रजा हैं । इसी संबंध के कारण हम विनती करते हैं कि हमें गुरू अमरदास जी के प्रचार से बचाया जाय ।

अकबर के भाई, मिर्जा मुहम्मद हकीम, शाह काबुल ने पंजाब काबू में करने के लिए आक्रमण करने का इरादा बनाया था । उस सिलसिले में इस बगावत को दबाने के लिए अक्तूबर सन् 1566 में अकबर को लाहौर आना पड़ा । बगावत को दबाने के पश्चात अकबर कुछ समय के लिए लाहौर रूक गया । ब्राहमणों ने सुअवसर जान कर, यह शिकायतनामा और अपनी विनती, अकबर के पास रखी ।

अकबर उस समय तक गुरू अमरदास जी के बारे में जरूरी जानकारी प्राप्त कर चुका था । वह था भी बड़ा नीतिवान । अकबर ने गुरू अमरदास जी के पास शाही अहिलकार भेजे और गुरू अमरदास जी के विरूद्ध दर्ज हुए दावे की जानकारी दी । गुरूजी से विनती की गई कि ब्राहमणों की शिकायतों का निर्णय करने के लिए गुरू जी, अपने किसी प्रतिनिधि को भेजें या यदि उचित समझें, तो स्वयं आ कर दर्शन दें ।

गुरु अमरदास जी ने (गुरू) रामदास जी को ब्रहमणों के शिकायतनामे से निपटने के लिए लाहौर भेजा । भाई बुल्ला, भाई बुड्ढा तथा भाई किदारी को भी (गुरू) रामदास जी के साथ लाहौर भेजा गया ।

(गुरू) रामदास जी ने अकबर के दरबार में ब्राहमणों के सामने उनके शिकायतनामे की एक-एक शिकायत पर गुरमत के दृष्टिकोण को बड़ी दलील से व निर्भय हो कर प्रस्तुत किया । ब्राहमणों की एक-एक मद को लेकर, सब के सम्मुख उनकी शिकायतों व दलीलों को तार-तार कर दिया । ब्राहमणों को अकबर तथा उसके विद्वान दरबारियों के सामने

बिल्कुल निरूत्तर कर दिया गया । ब्राहमणों को बहुत नमोशी हुई । अकबर तथा उसके दरबारी भी (गुरू) रामदास जी की ओर से स्पष्ट किये गये सिख सिद्धांतों तथा जीवन पद्धति से बहुत प्रभावित हुए । अकबर (गुरू) रामदास जी की धर्म संबंधी व्याख्या से इतना प्रभावित हुआ कि उसने मन ही मन गोइंदवाल जा कर गुरू अमरदास जी के दर्शन करने का इरादा बना लिया । अकबर ने अपना निर्णय देते समय शिकायती ब्राहमणों को बहुत फटकार मारी । उन्हें स्पष्ट कह दिया कि गुरू अमरदास जी साक्षात परमेश्वर का ही रूप हैं । उनके सिद्धांत सारी मानवता के भले के लिए हैं। तुम्हारे शिकायत-नामे का आधार, केवल तुम्हारे निजी संकीर्ण स्वार्थ हैं । शिकायती ब्राहमणों को मुंह छिपाने के लिए जगह नहीं थी मिल रही । इन स्वार्थियों तथा ईर्ष्यालु लोगों में सीता माता जैसा बल कहां था कि धरती को फटने के लिए विनती कर पाते । इस धरती में समा कर अपना काला मुंह लोगों की दृष्टि से छिपा पाते ।

दिल्ली वापिस जाने से पहले, अकबर ने गुरू अमरदास जी के गोइंदवाल में दर्शन करने का इरादा बनाया । टोडर मल ने भी अकबर को गुरू जी के दर्शन करने तथा आशीष लेने की प्रेरणा की । शाही रवायत के अनुसार गोइंदवाल के बाहर की ओर अकबर जब पैदल चल कर गुरू घर की ओर जा रहा था तो शाही कर्मचारियों ने अकबर के रास्ते पर रेश्मी गलीचा बिछा दिया । इनको अकबर ने एक दम देखते ही उठवा दिया । उसके मन में गुरू साहिब के लिए इतनी श्रद्धा तथा सम्मान पैदा हो चुका था कि वह उस अद्वितीय महापुरूष के पास पूर्ण श्रद्धा तथा नम्रता सहित जाना चाहता था, ताकि उस महापुरूष से धर्म का शुभ उपदेश और आशीर्वाद प्राप्त हो सके ।

आगे गुरू अमरदास जी के नियम भी सब के लिए बराबर और साझे थे । अन्य श्रद्धालुओं की तरह अकबर के लिए भी लंगर की पंक्ति में सब के बराबर बैठ कर प्रसाद सेवन करना जरूरी था । अकबर ने भी पूर्ण श्रद्धा और नम्रता से लंगर में सब के साथ बैठकर प्रसाद सेवन किया । (गुरू) रामदास जी से जो कुछ भी गुरू अमरदास जी के बारे में सुना था,

सब प्रत्यक्ष देखा । अकबर ने गुरू साहिब से अनेकों आत्मिक प्रश्नों का उत्तर पूछा और गुरू साहिबान के उपदेशों से वह बहुत ही प्रभावित हुआ। गुरू के लंगर का तो उसके मन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा । यहां सारी मानवता की बराबरी का सिद्धांत, व्यवहारिक रूप में लागू था। लंगर तैयार करने और सेवन करने करवाने में, सब को बराबर का अधिकार था । फिर यह देख कर कि लंगर सब गुरसिखों के दसवंध द्वारा चलता है, और लंगर के लिए गुरू अमरदास जी ने अकबर से किसी प्रकार की जागीर लेने से इंकार कर दिया है, अकबर गुरू घर से बहुत ही प्रभावित हुआ । इस अवसर पर गुरू अमरदास जी ने अकबर को यह उपदेश भी दिया कि वह अपने राज्य में हिंदू तथा मुसलमान सब के साथ एक सा बर्ताव करे और हिंदुओं से जज़िआ तथा तीर्थ टैक्स वसूल करने का अत्याचार न होने दे। अकबर वापिस जाते समय झबाल परगना के बारां गावों के पट्टे गुरू घर के नाम लिखवा कर अपनी ओर से श्रद्धा भेंट कर गया ।

(झ) गुरू जी का संगठित प्रचारक आंदोलन ।

गुरू अमरदास जी के समय सिख मत का प्रचार बड़ी तेजी से दूर दूर के इलाकों तक हो चुका था । प्रचार की समस्वरता, एकरूपता के लिए गुरू जी ने इस काम को एक बहुत ही संगठित रूप से करने का निश्चय किया था ।

गुरू जी ने अलग अलग इलाकों में, *जीवन तथा करनी* वाले, खास खास गुरसिखों को, जो सिखी के ज्ञान से भी भरपूर थे, जत्थेबंदक ढंग से सिखी प्रचार करने के लिए नियुक्त किया था । अलग अलग प्रचीन संदर्भो में *22 मंजियां और 52 पीढ़ियां* कायम करने का वर्णन आता है । *मंजीदार* एक जीवन तथा करनी वाला गुरमत ज्ञान से भरपूर गुरसिख हुआ करता था, जो गुरू जी द्वारा निर्धारित इलाके में प्रचार का मजबूत केन्द्र बना कर सिख मत का प्रचार करता था । सभी *मंजीदारों* को गुरू अमरदास जी स्वयं नियुक्त करते थे । यह *मंजियां* इस प्रकार उ न्होंने अपने इलाके

के प्रचारक केंद्र थीं । वहां गुरबाणी सिद्धांतों का खुला प्रचार होता और सिख जीवन पद्धति दृढ़ कराने का पूरा प्रबंध हुआ करता था । सिखी मार्ग को समझाने तथा व्यवहार में लाने के लिए भी प्रचारक बड़े उत्साह से परिश्रम करते थे ।

ये सिखी के *क्षेत्रीय सतसंग केन्द्र थे ।* इन जगहों पर लोगों में सिखी संबंधी संभावित शंकाओं का समाधान किया जाता था । इन केन्द्रों के द्वारा सिखी सिद्धांतों तथा सिखी रीति को *निरोल और खालस* रखने में मदद मिलती थी । इन केद्रों के कारण, पराधर्मी लोग गुरबाणी में मिलावट पैदा करने का साहस नहीं थे कर सकते । यह मंजीदार क्षेत्र की संगत सहित साल में कम से कम दो अवसरों पर गोइंदवाल साहिब गुरू जी के दर्शनार्थ आते थे । सिखी सिद्धांतों संबंधी पड़े सभी भुलेखों तथा शंकाओं को गुरू अमरदास जी से निवृत करवाते थे । ये मंजीदार सिखी प्रचार के बारे में अपनी सेवाओं की आवश्यक जानकारी, गुरू साहिब को देते थे और साथ ही अपने अपने क्षेत्रों में पेश आ रही कठिनाइयों को निपटने के लिए गुरू जी से मार्गदर्शन प्राप्त करते थे । स्वाभाविक है कि इस प्रकार के प्रचारक आंदोलन के द्वारा सिखी की एकसुरता, एकरूपता, विशुद्धता आदि कायम होती थी । केवल मिश्रित विचारधारा तथा रीतियों से ही सिख कौम को बचाने की बात ही पूरी नहीं थी होती, बल्कि इस से समूह मुखी प्रचारकों में प्रचार करने के लिए भारी उत्साह पैदा होता था ।

प्राचीन तथा नवीन संदर्भो में इस प्रकार की *22मंजियों तथा 52 पीढ़ियों* की स्थापना का उल्लेख है । पीढ़े वास्वत में *मंजीदारों* के प्रबंध में एक प्रकार के *उप केन्द्र* ही थे । **ज्ञानी प्रताप सिंघ जी के अनुसार** कुछ विद्वानों का विचार है कि सिख धर्म की प्रचारक स्त्रियों को *52पीढ़े* प्रदान किये गये थे । यह बात भी समझ लेनी चाहिए कि 52 *पीढ़ों* के सब टिकाने और नामों के सही इतिहासिक विवरण तो कहीं रहे, *22मंजियों* के पूरे टिकाने, मंजीदारों के नाम, सेवा तथा प्रचार करने के सन संवत आदि की भरोसे योग्य जानकारी इतिहासिक रूप में उपलब्ध नहीं हैं ।

अलग अलग संदर्भों में *बाईस मंजीदारों* के अलग अलग नाम तथा पते टिकाने दिये गये हैं । महिमा प्रकाश, महान कोश, गुरद्वारा दर्शन (ज्ञानी ठाकुर सिंघ), तारीखे पंजाब (कन्हइया लाल) तथा गोइंदवाल के गुरद्वारा हवेली साहिब के सुनेहरी पन्ने में दर्ज **मंजीदारों** के नाम तथा पते एक दूसरे से मेल नहीं खाते । **भाई गुरदास जी की वार नंबर 11 की पउड़ी संख्या 15 में और बाबा मनी सिंघ की *सिखां दी भगत माल* और कवी संतोख सिंघ के *गुरप्रताप सूरज*** में गुरू अमरदास जी के कई मुखी सिखों के नाम का वर्णन आता है । आगे नये लिखारियों ने भी प्रचीन संदर्भों में से किसी एक को आधार बना कर 22 मंजियों का विवरण दे दिया है ।

प्रसिद्ध विद्वान **भाई साहिब काहन सिंघ नाभा ने** (1) अल्ला यार (लाहौर) (2) सच्चनसच्च (3) साधारण (गोइंदवाल) (4) सावण मल(गोइंदवाल) (5) सुखण (धमियाल, पोठोहार) (6) हंदाल (7) केदारी (8) खेड़ा (9) गंगू शाह (गढ़शंकर) (10) दरबारी (11) पारो (12) फेरा (मीरपुरी जम्मू), (13) बूआ (श्री हरगोबिंद पुर) (14)बेणी, गांव चूहणियां(लहौर)(15)महेशा(सुल्तानपुर)(16) माईदास (नरोली) (17) माणक चंद (वैरोवाल) (18) मथो मुरारी (गांव खाई) लाहौर (19) राजा राम (गांव सधमा,जलंधर) (20) रंग शाह (गांव मलधोते जलंधर) (21) रोग दास (घडूआं) (22) लालो (डला) नाम के 22 मंजीदारों का वर्णन किया है ।

महिमा प्रकाश में (1) सावण मल, (2) सचन सच, (3) लालू, (4) महेशा धीर (5) भाट (सुलतानपुर), (6) पारो (डला), (7) खाना छुरा (डला), (8) फिरा कचारा (मालवा)(9) गंग दास (गांव घाघों) (10) प्रेमा(बहिरामपुर) (11) बीबी भागो (काबुल) (12) माणकचंद जीवड़ा वैरोवाल, (13) माईदास (नारली) (14) खेडा सोएरी (खेम करण) (15) मथो मुरारी, (16) हंदाल (जंडियाला), (17) साधारन लुहार, (18) भले बीबे ने, (19) दुरगो भंभी (मेहड़ा ग्राम), (20) भीखा भाट सुलतान पुर, (21) केशो पंडित, (22) साइदास गोसाई आदि

22 मंजीदारों का वर्णन है ।

गोइंदवाल साहिब के गुरद्वारा हवेली साहिब के बरामदे में लगी सुनेहरी तस्वीर में (1) पारो जुलका (डला), (2) लालू बुद्धूवार, (3) महेशा धीर सुलतानपुर, (4) माईदास बैरागी, (5) माणकदास जीवड़ा (वैरोवाल), (6) सावण मल (वैरोवाल), (7) मल जी सेवा, (8) हंदाल जट (जंडियाला), (9) निसच (जबरां विच), (10) गंगू खतरी (घघों गांव), (11) साधवरन लुहार (बकाला), (12) मथो मुरारी, (13) खेड़ा सोइरी (खेमकरण), (14) फिरिआ, (15) कटारा (मालवा), (16) सांइदास गुसाई, (17) दिते दे भले (जमदोह) (18) माई सेवा (काबुल), (19) दुरगो पंडित (महेड़ा), (20) जीत बंगाली, (21) बीबी भागो (कश्मीर), (22) बलू नाई आदि के नाम बाईस मंजीदारों का विवरण दिया गया है ।

भिन्न-भिन्न लेखकों द्वारा भिन्न-भिन्न नाम पते देने के कारण अनेकों नये खोजी बहुत दुविधा में फंसे हुए हैं । कई प्रकार की शंकाएं खड़ी की जाती रही हैं । अलग-अलग सूचियों में से तेरह नाम ऐसे हैं जो लगभग हर एक सूची में हैं । हां, इन के भी पते व टिकाने आपस में मेल नहीं खा रहे । सारे बजुर्गों के नाम 40 से ऊपर बन जाते हैं । कुछ सज्जनों को इस बात पर शंका हो गयी है कि उपरोक्त कुछ एक गांवों तथा नगरों में आज इन *मंजियों के मंजीदारों* का कोई पता टिकाना या निशानी नहीं मिलती है । कुछेक गांव ऐसे हैं जो बसे ही नहीं या बाद में बसे थे । फिर कई गांवों में दो या तीन मंजीदारों का जिक्र आ रहा है ।

उपरोक्त सब शंकाएं मामूली सी हैं या निर्मूल हैं । यह बात जरूर समझ लेनी चाहिए कि ऐतिहासिक तौर पर 22 मंजियों, इनके मंजीदारों गांवो, नगरों या क्षेत्रों और सन संवत के विवरण चाहे आज न मिल सकें, पर यथार्थ वादी वृत्ति से देखने पर ऐसे मंजीदारों के अस्तित्व और उनकी प्रचार सेवाओं की स्पष्ट झलक दिखाती प्रतीत होती है । गुरू अमरदास जी ने लगभग 22 वर्ष गुरगद्दी की जिम्मेवारी संभाली थी । इतने लंबे

अर्से में अनेकों नये प्रचारकों का मैदान में आना और पुरानों का गुजर जाना, बड़ा स्वाभाविक था । फिर यह भी जरूरी नहीं कि सब *मंजीदार* एक दिन ही नियुक्त कर दिये गये हों । अवसर तथा आवश्यकता के अनुसार जब जब नाम कमाई वाले अधिकारी सज्जन प्रचार के लिए सामने आते थे, गुरू साहिब द्वारा उन्हें प्रचार केन्द्र खोलने का सम्मान दिया जाता था । एक ही गांव के साथ यदि दो या तीन प्रचारक संबंधित सिद्ध हों तो इससे भी भ्रमित होने की कोई बात नहीं हैं । लिखारियों ने कई जगह पर मंजीदारों के पैतृक गांवों का वर्णन कर दिया है और कई जगह पर उनके प्रचारक क्षेत्रों का जिक्र किया है । फिर समय के अनुसार कई बार पुराने गांवों की जगह पर नये गांव भी बस जाते हैं और नाम भी बदल सकते हैं । अवसर के अनुसार लेखक पुराना या नया नाम लिख सकते हैं । किसी *मंजीदार* के कालवास हो जाने पर नया *मंजीदार* भी तो अवश्य नियुक्त किया जाता था । यह भी संभव है कि पहले पहल मंजीदारों की संख्या 22 रही हो और बाद में और अधिक बढ़ गयी हो ।

बाद में जा कर या आज के समय में, किसी विशेष जमींदार की अंश संतान में सिखी प्रचार की कमी के कारण, यदि सिखी रीतियां तथा सिख जीवन पद्धति न मिलती हो, तो भी भ्रमित होने की आवश्यकता नहीं है । अपने अपने समय में उन मंजीदारों ने बहुत बढ़िया काम किया था । बहुत समय के पश्चात, यदि प्रचार में कमी आ जाने के कारण उनकी अंश में से सिखी अलोप हो गयी हो, तो इस से *मंजीदारो* की प्रचार सेवाओं की महानता किसी प्रकार कम नहीं हो सकती । इन *मंजीदारों* ने वास्तव में इतने जोर तथा उत्साह से काम किया था कि बहुत कम गांव तथा नगर ही ऐसे रह गये थे जिनमें कुछ न कुछ गिनती में सिख न बन गये हों । कई इलाके तो लगभग समूचे तौर पर ही सिखी के झंडे के नीचे आ गये थे । गुरू अमरदास जी और उनके *जीवन करणी वाले मंजीदारों* के द्वारा सिखी का प्रचार इतना बढ़ा था कि गुरू रामदास जी ने

अपने समय में *22 मंजीदारों की* जगह अनेकों प्रचारक नियुक्ति किये थे । इनको *मसंद* कहा जाता था । इन 22 प्रचारकों की मारो मार का ही नतीजा था कि गुरू रामदास जी के समय में यह कार्य अब केवल 22 व्यक्तियों से नियंत्रित नहीं हो सकता था । इसी कारण दर्जनों ऐसे व्यक्ति, जो ऊंचे व निर्मल व्यवहारिक जीवन वाले थे और गुरमत ज्ञान से भरपूर थे, गुरू रामदास जी की ओर से अलग अलग क्षेत्रों में मसंद नियुक्त किये गये थे ।

अब कुछ एक मंजीदारों के साथ संबंधित कुछ टिप्पणियां निम्नानुसार दी जाती हैं ताकि इन मसंदों के बारे में कुछेक जानकारी प्राप्त हो सके और कुछ गुरमत उपदेश तथा गुरमत के सिद्धांत दृढ़ हो सकें ।

(1) भाई अल्लायार जी:

आप पठान थे और दिल्ली व लाहौर में घोड़ों का व्यापार करते थे। दिल्ली से लाहौर आते हुए आपका संपर्क भाई पारो जी के साथ हुआ । इनके सिखी के प्रति समर्पण व विश्वास से प्रभावित हो कर भाई अल्लायार जी गोइंदवाल में गुरू जी के पास आए और सिखी धारण की । आप इतने आदर्श जीवन तथा *करनी* वाले सिख बने कि सिखी प्रचार के लिए आपको गुरू जी की ओर से *मंजीदार* नियुक्त कर दिया गया । आपका नाम *अल्लाशाह* करके भी लिखा मिलता है ।

आपके जीवन-काल से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि उस समय केवल हिंदू ही नहीं, मुसलमान भाई भी तेजी से सिखी में अंतरण कर रहे थे । अल्लायार जी ने केवल स्वयं ही सिखी धारण नहीं की, बल्कि *मंजीदार* प्रचारक बन कर सिखी के भरपूर प्रचार द्वारा औरों को सिखी के दायरे में लाए । यह भी स्पष्ट है कि सिख मत का दर, हर एक इनसान के लिए खुला था और हर एक इनसान को सिखी में शामिल होने का अधिकार था ।

(2) भाई पारो जुल्का

आप डलानगर के रहने वाले जुल्का खत्रीय जाति से संबंधित थे । आपने गुरु अंगद देव जी के समय में सिखी में प्रवेश किया था । आप इतने ऊंचे व निर्मल जीवन वाले हुए कि गुरू घर द्वारा आपको *परमहंस* की पदवी दी गई । आपने गोइंदवाल की *बाउली* (जलकुंड) की सेवा में भी बहुत सहयोग दिया था । आप इतने समर्पित पुरुष थे कि तूफान तथा अंधड़ भी आपको अपने कार्यक्रम से नहीं थे रोक सकते । आप घोड़े पर सवार हुए ही, नदी पार करके गोइंदवाल आ जाते थे । आप इतने कर्मठ तथा निर्मल जीवन वाले थे कि अच्छे से अच्छा आदर्श पुरुष भी आप के सामने फीका पड़ जाता था । गुरु जी ने एक बार सिखों के लिए उच्च जीवन के पद चिन्ह स्थापित करने के लिए, पारो जी को अपने बाद, गुरगद्दी देने का इरादा प्रकट किया । भाई पारो जी ने हाथ जोड़ कर सिखी के दान की याचना की और सारी संगत में गुरु जी को विनय कर दी कि गुरगद्दी की भारी जिम्मेवारी उठा सकने में वे असमर्थ हैं ।

पारो जी ने अपने व्यवहारिक जीवन द्वारा सभी सिखों के सामने कितना ऊंचा तथा अनुकरणीय आदर्श रखा ! यदि पारो जी जैसा महान निर्मल आध्यात्मिक जीवन वाला वाला व्यक्ति अपने आपको गुरगद्दी के योग्य नहीं समझता तो आम व्यक्ति भला ऐसा सोचने का साहस कैसे कर सकता है ।

(3)भाई सच्चन सच जी

आप गांव मंदर जिला लाहौर के ब्राहमण थे । लंगर और गुरु घर की हर प्रकार की सेवा पूर्ण तौर पर निष्काम हो कर किया करते थे । आपको अंबाला के क्षेत्र में सिख धर्म के प्रचार के लिए *मंजीदार* नियुक्त किया गया था । गुरु आज्ञा के अनुसार सच्चन सच्च ने, हरीपुर कांगड़ा की रानी, जो कि पागल हो जाने के कारण राजा द्वारा छोड़ दी गई थी, के साथ विवाह करवाया था । गुरु घर में आश्रय पाकर वह रानी केवल

अरोग्य ही नहीं हुई, बल्कि अपने पति सच्चन सच्च के संग मिल कर आयुपर्यंत सिख मत का प्रचार भी करती रही।

सच्चन सच्च जी ने जहां सिखी का भरपूर प्रचार किया था, वहीं दूसरी जाति की मानसिक रूप से विक्षिप्त स्त्री के साथ विवाह करके(वह भी पुनर्विवाह) समाज सुधार की सुंदर मिसाल पेश की थी।

(4) भाई सावण मल जी

आप गुरू अमरदास जी के भतीजे थे । आपका गोइंदवाल नगर के निर्माण तथा विकास में बहुत हाथ था । आपका प्रचार क्षेत्र कांगड़ा, हरीपुर, कुल्लू, सुकेत आदि पहाड़ी क्षेत्र था । एक बार आप हरीपुर के क्षेत्र में प्रचार कर रहे थे कि एकादशी आ गयी । सब लोगों ने व्रत रखा था क्योकि वैरागी साधुओं का उस इलाके में भारी प्रभाव था । आप ने न केवल स्वंय व्रत रखने से बगावत की बल्कि दूसरे लोगों को इस भ्रम व कर्म कांड से पीछा छुडाने की जोरदार प्रेरणा की । हरीपुर में व्रत आदि कर्मकांडों के विरूद्ध बड़ी दलेरी से खुले आम प्रचार किया । राजा ने राज दरबार में बुला भेजा । आपने गुरमत की सुंदर व्याख्या द्वारा कर्म कांडों का पूर्ण खंडन करके, राजा और अमीरों वजीरों को गुरमत का धारणी बना दिया । राजा के मन में गुरू घर के प्रति इतनी श्रद्धा और प्यार उत्पन्न हुआ कि सिखी नगर गोइंदवाल के निर्माण हेतु उसने बहुत भारी मात्रा में इमारती लकडी भेजने की सेवा की, जो उस समय गोइंदवाल के विकास के लिए बहुत आवश्यक थी । कुछ समय के पश्चात राजा सभी अमीरों-वजीरों तथा रानियों सहित गुरू जी के दर्शन करने को गोइंदवाल साहिब हाजिर हुआ ।

भाई सावण मल जी की साखी से स्पष्ट होता है कि सिख प्रचारक बड़े विद्वान, जीवन वाले और प्रभावशाली हुआ करते थे। नये क्षेत्रों में भी बड़े भरोसे और साहस से गुरमत का प्रचार करते थे । सिख प्रचारक निजी पूजा करवाने की जगह सभी जिज्ञासुओं को, सतगुरू जी के साथ जोड़ते थे । सिखी धारण करने वाले केवल आम लोग ही नहीं थे, बल्कि राजा

महाराजा भी सिखी की महानता को पहचानने के पश्चात, सिखी में प्रवेश हुए।

(5) भाई गंगूशाह जी ।

आप गढ़ शंकर के रहने वाले थे और लाहौर में अपने लेन-देन का व्यापार करते थे। कारोबार के मंदा पड़ जाने पर आप गुरू जी से आशीर्वाद और आदेश ले कर दिल्ली चले गये । कुद दिनों में ही बहुत लाभ कमाया । धन की बहुतायात ने मति मार दी । गुरू और करतार को भूल गये । जरूरतमंद की मदद करने से मुंह मोड़ लिया । करनी करतार की, व्यापार का दुबारा भट्ठा बैठ गया । पर अब *दुख दारू* बन गया था। माया का साथ छूटने के कारण सुरति टिकाने आ गयी । आपको अपने जीवन अनुभव से यह बात समझ आ गयी कि माया आने जाने वाली वस्तु है और इसके नशे में विवेक खो देना उचित नहीं है । आप पश्चाताप करने के लिए पुन: गोइंदवाल साहिब आ गये पर गुरू साहिबान के सामने आने की जगह अरसे तक लगन तथा श्रद्धा से, नम्रता सहित लंगर आदि की सेवा में जुटे रहे । सेवा तथा सुमिरन ही आपने जीवन का ध्येय बना लिया । आप की आत्मा निर्मल हो गयी । भाई गंगू शाह जी का प्रसिद्ध स्थान खरड़ तहसील के दाऊ गांव में है । आपने नाहन तथा सिरमौर के क्षेत्र में सिख मत का प्रचार किया था ।

भाई गंगू शाह जी की साखी के द्वारा माया के क्षण भंगुर होने की उदाहरण सामने आ जाती है । यह बात भी समझ आ जाती है कि बहुत अवसरों पर दु:ख आत्मिक निर्माण अथवा इलाज का काम दे जाता है । भाई साहिब के जीवन से यह बात भी साफ हो जाती है कि सच्चे दिल से पश्चाताप करने से, धर्म का पल्लू पकड़ने से, परमेश्वर हमारे गुनाह क्षमा कर देता है ।

(6) भाई बेणी जी :

आप चूहणीआ जिला लाहौर के रहने वाले थे । आप बड़े विद्वान पंडित थे । विद्वानों के साथ शास्त्रार्थ करना आप की विशेषता सी हो गयी थी । हर विद्वान के साथ शास्त्रार्थ के समय शर्त यह हुआ करती थी कि

दोनों में से जो भी हार जाय, वह सारी पुस्तकें दूसरे को दे दे । उनके पास बेशुमार पुस्तकें हो गयी थीं जो वे ऊंठो पर लादे फिरते थे । लाहौर से विद्वानों को हराते हुए काशी तक जा निकले थे । इतना पुस्तक पाठ तथा शास्त्रार्थ भी उनके मन में उल्लास तथा शांति पैदा नहीं कर सके । गोइंदवाल में गुरू साहिब से संपर्क होने पर इनका विद्या संबंधी अहंकार दूर हो गया । आप ने सिखी धारण की । *मंजीदार* बनकर आपने सिखी का बहुत प्रचार किया ।

बेणी जी की साखी के द्वारा यह गुरमत सिद्धांत भी परिपक्व हो जाता है कि ***केवल मात्र*** पुस्तकों के पाठ द्वारा विद्या अभिमान ही पैदा होता है । परमेश्वर प्राप्ति की राह में भारी रूकावट बनता है । आदर्श जीवन के लिए शुभ व्यवहार और ईश्वरीय गुणों का जीवन में उतारना, बहुत आवश्यक है । जीवन में ईश्वरीय गुणों का उदय व विकास सतगुरू की संगत द्वारा ही हो सकता है ।

(7) भाई माईदास जी :

आप माझे के नरोली ग्राम के वासी थे । सिख बनने से पहले आप वैष्णव मत के धारणी थे । हर प्रकार के कर्म कांडो और सुच्च जूठ के वहमों में बुरी तरह फंसे हुऐ थे । जाति पात के भेद भाव आपके मत की जी-जान थे । कर्म कांडों की छटा इनके सिर से उतारनी बड़ी कठिन सी बात थी । फिर कर्म कांडों से संबंधित सूक्ष्म अहं से छुटकारा भी कठिन हो गया था । गुरू जी ने, भाई माईदास को एक व्यवहारिक जीवन वाले तथा आत्मज्ञानी गुरसिख, भाई माणक चंद जी की संगत करने को कहा । परिणाम यह हुआ कि आपने सब प्रकार के कर्मकांड और अहं का पूर्ण त्याग करके सिखी में प्रवेश कर लिया । आप सिख जीवन शैली के अनुसार जीवन व्यतीत करने लगे । गुरसिखी की कमाई करने पर अधिकारी परुष जान कर, गुरू अमरदास जी ने आपको *मंजी* प्रदान करके सिख मत का प्रचार करने का आदेश दिया ।

भाई माईदास जी की साखी से सिद्ध होता है कि गुर उपदेश तथा सत्संग द्वारा हम अपने जीवन में दैवी गुण उत्पन्न करके सिखी की

कमाई कर सकते हैं । सिखी में स्वीकार्य होने के लिए आवश्यकता है कि पराधर्मों के निरर्थक कर्मकांडों का त्याग किया जाये ।

(8) भाई माणक चंद जी :

आप जिला अमृतसर के वैरोवाल गांव के निवासी थे । आप ब्रहम ज्ञानी थे और जीवन मृत्यु सब परमेश्वर के हाथ मानते थे । *बाउली* की खुदाई के समय आपने बहुत सेवा की । बाउली के नीचे सख्त कड़ (कड़ा पत्थर) आ गया जिसको तोड़ना बहुत कठिन था । छैनी हथोड़े से कड़ तोड़ते समय पानी का दबाव एक दम फूट पड़ने पर, डूब कर मरने का भारी खतरा था । पर बाउली बनाने के लिए और कोई चारा भी नहीं था। गुरू आदेशानुसार भाई माणक चंद जी ने बहुत बड़ा खतरा मोल ले कर कड़ तोड़ ही लिया पर बाउली में एक दम पानी भर जाने के कारण आप पानी में डूब गये । सारी संगत ने ऐसा महसूस किया कि भाई माणक चंद जी डूब कर मर गये हैं । पानी में से आपका शरीर बाहर निकलवा कर गुरू जी ने पेट में से पानी निकलवाया और इलाज करवाया तो आप स्वस्थ हो कर संगत के सामने पेश हुए ।

भाई माणक चंद जी की साखी यह दृढ़ करवाती है कि गुरसिख जीवन तथा मृत्यु, सब को परमेश्वर के वश में मान कर जीवन व्यतीत करे । गुरू घर की सेवा, जान तली पर रख कर सरंजाम चढ़ाने वाले गुरसिख ही दूसरों के लिए सेवा के पद चिन्ह स्थापित कर सकते हैं । सिखी की व्यवहारिक कमाई वाले भाई माणक चंद जैसे गुरमुख ही भाई माईदास जैसे पराधर्मियों को निरर्थक तथा थोथे सिद्धांतों के कीचड़ में से निकाल कर सिखी के संग जोड़ सकते थे ।

(9) बीबी मथो तथा भाई मुरारी ।

भाई मुरारी का पहला नाम प्रेमा था । आप लाहौर के गांव खाई के वासी थे । बुरी संगत और व्यभिचारी जीवन के फलस्वरूप शरीर कोहड़ी हो गया । गुरू अमरदास जी की शरण में आ कर जीवन ही नहीं पलटा, बल्कि कोहड़ का रोग भी दूर हो गया । प्रेमा जी बहुत ही ऊंचे निर्मल व पवित्र जीवन वाले हो गये । गुरू अमरदास जी उनको अपना बेटा कह

कर संबोधित करते थे । उनका नाम अब मुरारी जी प्रसिद्ध हो गया था। गुरू जी ने एक बार संगत में यह आदेश दिया कि कोई प्रेमा जी के संग अपनी कन्या का विवाह कर दे । शीहां जी ने गुरू आदेशों के अनुसार जाति पात खानदान, आर्थिक दशा आदि सब को नजरअंदाज करके, अपनी लड़की मथो का विवाह मुरारी जी के साथ कर दिया । मथो की माता जी को पहले तो यह सुझाव ठीक न लगा, पर गुरू साहिब के समझाने से उसने भी सिख रीति के अनुसार अपनी कन्या का विवाह मुरारी जी से करना स्वीकार कर लिया । यह सौभाग्य जोड़ी बहुत ही सिखी जीवन वाली हुई । सतगुरू साहिबान ने इन दोनों को प्रचार के लिए *मंजी* प्रदान की । दोनों पति पत्नी ने सिखी का बहुत प्रचार किया ।

बीबी मथो तथा मुरारी जी की साखी सिख मत के कई पहलुओं पर प्रकाश डालती है। बड़े से बड़े दुश्कर्मी भी, सिखी में आ कर नेक और उच्च जीवन वाले बन सकते हैं । अनंद कारज या रिश्तों के लिए जाति पात, खानदानी, तथा आर्थिक स्थिति के आधार आदि अच्छे नहीं इनकी जगह पर लड़के के गुण, स्वभाव, आचरण, स्वास्थ्य व आयु आदि का मेल जांचना परखना चाहिए।

(10) भाई लालू जी ।

आप डले के निवासी थे और एक माने हुए वैद्य भी थे । *तेइऐ ताप* या *वारी के बुखार* का इलाज करने के सिद्धहस्त थे । आप बहुत ऊंचे गुरसिखी जीवन वाले थे । आप को भी सिखी प्रचार की *मंजी* प्रदान की गयी थी ।

भाई लालू जी सिखी प्रचार के लिए गुरबाणी सिद्धांतों को समझाने के साथ साथ लोगों के शारीरिक रोगों का इलाज करने का परोपकार भी करते थे । इस ढंग से प्रचार करने में आप को भारी सफलता मिलती थी ।

गुरू अमरदास जी के साथ सिखों की हुई कई छोटी छोटी वार्ताओं के संकेत पुरातन अभिलेखों में मिलते हैं जिन का पूर्ण विवरण आम तौर

पर उपलब्ध नहीं है । परंतु इन वार्ताओं के द्वारा भी गुरू अमरदास जी द्वारा दृढ़ करवाये गये उपदेशों तथा सिखी सिद्धांतों पर ही प्रकाश डलता है ।

भाई दीपा, नगउरी, रामू तथा उग्रसैन जी को आत्मिक कल्याण के लिए रोजाना अमृत बेला में उठने तथा शौच स्नान आदि करके बाणी के पाठ विचार में जुड़ने का उपदेश दिया।

भाई पृथामल तथा तुलसा जी, जो भल्ला जाति के क्षत्रीय थे, ने जब गुरू अमरदास जी को एक ही जाति से संबंधित होने की बात की तो गुरू जी ने उनके मिथ्या अहंकार का खंडन कर दिया। गुरू जी ने कहा कि न तो सिख सतगुरू साहिबान की कोई जाति होती है और न ही उनके गुरसिखों की । **महानता भजन बंदगी तथा नेक जीवन में है, जाति भेद में नहीं ।**

गुरू अमरदास जी से भाई रामू, मोहन, मल, अमरू तथा गोपीदास ने भजन बंदगी में पूरा आनन्द न आने का कारण पूछा तो आप ने कहा कि अहं रोग के कारण ऐसा होता है । इसी प्रकार भाई मलण को अहंकार निवारण हेतु गरीब, दुखिये, तथा जरूरतमंद की सेवा करने की प्रेरणा की।

डले के भाई सहारू, गंगू तथा भागू को गुरू जी ने मठों, मसाणों, कब्रों आदि की पूजा आदि से हटा कर एक परमेश्वर की प्रेमाभक्ति का उपदेश दिया । धर्म, मेहनत की कमाई तथा बांट कर खाने की बात को दृढ़ करवाया ।

भाई बूला जी को, जो गुरबाणी के बहुत बढ़िया कथावाचक थे, गुरू जी ने यह आदेश दिया था कि आप अधिक से अधिक गुरबाणी की पोथियां या गुटके लिख कर सिखों में बाणी के प्रचार हेतु बांटो।

भाई खान छुरा, बेग पासी नंद सूदन, उगरू, तारू झंडा तथा जगाधरनी को उदासी, जोगी तथा सन्यासी मत को खंडन करने वाला उपदेश दिया । **सभी प्रकार के धर्मों में से ग्रहस्थ धर्म को आदर्श तथा उत्तम बताया ।** ग्रहस्थ के कर्तव्य निभाते हुए नाम जपने तथा बांट कर खाने की ताकीद की ।

भाई फिरिआ तथा कटारा दुआबे के निवासी थे । उनके इलाके में जोगियों के जंत्रों मंत्रों तथा पाखंडों के कारण लोग भयभीत थे । इन दोनों ने तगड़े तथा निर्भय हो कर, जोगियों के निरर्थक सिद्धांतों तथा बेकार के कर्मकांडीय जीवन का खंडन करके गुरमत प्रचार करने की ताकीद की । जोगियों के मठों के मुकाबले, सिख मत के प्रचार के लिए खुलेआम धर्मशाला स्थापित करने का उपदेश दिया ।

(च) नगर अमृतसर (चक रामदास) की स्थापना।

गुरू अमरदास जी ने माझा के गांव में भरपूर प्रचार किया था। आप उस सारे इलाके से अच्छी तरह वाकिफ थे । सिखों की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही थी । दूर दर्शी सतगुरू अमरदास जी ने, निकट भविष्य में माझे के बिल्कुल बीच के इलाके में, सिखी प्रचार के एक और बड़े केन्द्र को स्थापित करने की आवश्यकता को महसूस कर लिया था ।

यह ठीक है कि नगर अमृतसर का निर्माण तथा विकास, गुरू रामदास तथा गुरू अरजन देव जी ने किया, पर इस के लिए जगह का चुनाव तथा योजना क्रम गुरू अमरदास जी ने बनाया था । गुरू अमरदास जी ने गुंमटाला, तुंग सुलतान विंड तथा गिलवाली आदि गांवों के पंच तथा मुखिये बुलवा कर *मोढ़ी* गढ़वाकर गुरू चक नगर का निर्माण तथा विकास की सेवा सौंप दी । इस प्रकार जून सन 1570 को नगर गुरू चक बसना आरंभ हो गया जो बाद में जा कर अमृतसर नाम से प्रसिद्ध हो गया ।

ज्यों ही लोगों को पता चला कि जल्दी ही सिखधर्म का प्रचारक केन्द्र गुरू चक की ओर आने वाला है तो सिखों के अलावा और लोगों ने भी रोजगार, व्यापार आदि के बढ़िया अवसरों को दृष्टि में रख कर यहां, बसना शुरू कर दिया । मकान, दुकानें तथा बाजार बनने लग गये। (गुरू) रामदास जी तो गुरू के चक ही आ गये थे। आपने अपनी निगरानी में नगर के निर्माण तथा विकास के काम को पूरे जोर से करवाना शुरू कर दिया । नगर के पूर्ण विकास को दृष्टि में रखते हुए, तुंग गांव के

जिमींदारों से सन 1577 को पांच सौ बीघे और जमीन खरीद ली गयी और पट्टा करवा लिया गया ।

धीरे धीरे सिखों का आना जाना और बढ़ता गया । बढ़ती संख्या को ध्यान में रखकर गुरू रामदास जी ने गुरू के चक से बाहर की ओर सरोवर बनवा दिया । बाद में सरोवर के बीचों बीच धर्म के महान *हरिमंदिर* का निर्माण किया । केवल नये सरोवरों तथा धर्म स्थानों में ही बढ़ोत्तरी नहीं हुई, व्यापार आदि के दृष्टिकोण से भी यह नगर पंजाब का चोटी का नगर बन गया ।

आज इस नगर की सारे संसार में चर्चा है । सिख जगत का तो यह महान केन्द्र बन गया है । याद रहे कि इस जगह का चुनाव आदि गुरू अमरदास जी ने किया था और इस नगर का बहुमुखी विकास गुरू अमरदास जी की दीर्घदर्शिता का खूबसूरत प्रमाण है ।

(ञ) गुरगद्दी हेतु (गुरू) रामदास जी का चुनाव :

एक हिसाब से (गुरू) रामदास जी पिछले 33 वर्ष से गुरू अमरदास जी से संबंधित थे। (गुरू) रामदास जी 7 वर्ष की आयु में सन 1541 में गुरू अमर दास जी के घनिष्ठ संपर्क में उस समय आए जबकि गुरू अमरदास जी को गुरू अंगद देव जी से गुदगद्दी की जिम्मेवारी नहीं मिली थी । सन 1553 में बीबी भानी जी का विवाह (गुरू) रामदास जी के साथ किया गया । सन 1553 से सन 1574 तक के लगभग 21 वर्षो के समय में, जब कि दुनियावी दृष्टिकोण से आप गुरू अमरदास जी के जमाई थे, गुरू घर की आप जी ने खूब सेवा की थी । रिश्ते में आप गुरू अमरदास जी के दामाद थे, पर आप ने गुरू अमरदास जी की सेवा एक श्रद्धावान सिख के तौर पर पूर्ण प्रेम से की थी । आपका व्यवहारिक जीवन जी-जान लगाकर हाथों से सेवा करने का स्वभाव, नम्रता, विद्वता, मृदुलता आदि गुण किसी से भी भूले हुए नहीं थे । ब्राहमणों के शिकायतनामे के संबंध में (गुरू) रामदास जी को अकबर के दरबार में सिख मत की व्याख्या के लिए भेजा गया था । आप ने अपनी विद्वताा,

गंभीरता, मिठास तथा साहस द्वारा हर एक के मन पर सिखी का गहरा प्रभाव डाल कर, अपने गुणों द्वारा सिखी के प्रति कायल कर लिया था ।

(गुरू) रामदास जीं में सभी दैवी गुण मौजूद थे और साथ ही सतगुरू अमरदास जी की पूर्ण प्रसन्नता तथा कृपा भी आपको प्राप्त थी । सिखी की कमाई में आप, अपनी मिसाल आप थे । गुरगद्दी के लिए संगत में से किसी ने कभी भी गुरू अमरदास जी के साहिबाजादों बाबा मोहन जी तथा बाबा मोहरी जी को योग्य नहीं समझा था । बाबा मोहन जीं की रुचि पराधर्मी साधुओं की तरह घटिया किस्म के त्याग वाली थी और मोहरी जी संसार के कामों में कुछ अधिक व्यस्त थे : गुरू अमरदास जी के दूसरे दामाद भाई रामा जी सांसारिक कार विहार में बड़े निपुण थे और अच्छे विद्वान भी थे, पर सिखी की कमाई के मामले में गुरू पर विश्वास रखने की जगह अपनी बुद्धि पर विश्वास रखते थे और अंदर ही अंदर अहं के हाथों मार खा रहे थे । ज़ाहिरा तौर पर आप भी सतिगुरू अमरदास जी के बहुत आज्ञाकारी और श्रद्धावान सिख थे ।

ज्यों-ज्यों गुरू अमरदास जी वृद्ध होते जा रहे थे सिख संगत की दृष्टि गुरगद्दी की अगली जिम्मेवारी के लिए (गुरू) रामदास जी तथा भाई रामा जी पर पड़ रही थी । सतगुरू साहिबान ने संगत के प्रति दोनों के गुरसिखी जीवन की कमाई के स्तर को जाहिर करने हेतु एक दिन दोनों को संगत में बुलवा कर भेजा । गुरू जी ने दोनों को आज्ञा की कि शाम के दीवान में गुरू जी के आसन के लिए *बाउली* के पास दो अलग अलग मंच बनाये जायं । एक मंच राम जी बनायें और दूसरा (गुरू) रामदास जी । दोनों ने सारा दिन लगा कर अपने अपने मंच बनाये । शाम को गुरू अमरदास जी ने दोनों मंचों की जांच करके, कमियां निकालीं और दोनों मंच गिरवा दिये । मंच दुबारा ठीक ढंग से बनवाने की हिदायत दी । दूसरी बार भी मंच बन जाने पर गुरू अमरदास जी द्वारा त्रुटियां निकाल दी गई । तीसरी बार फिर दोनों ने सतगुरू साहिबान के आदेश के अनुसार मंच बना दिये पर गुरू जी ने पहले की भांति इस बार भी दोनों

मंचों में नुक्स निकाल दिये । अब रामा जी से रहा नहीं गया । उनके विचार के अनुसार उनका मंच पूरी तरह से गुरू साहिब के आदेशानुसार बना था । पर गुरू अमरदास जी अपनी बड़ी आयु हो जाने के कारण शायद याद्दाश्त की कमजोरी का शिकार हो कर मंच को रद्द कर रहे हैं । भाई रामा जी ने और नया मंच बनाने से इनकार कर दिया । अब अकेले (गुरू) रामदास जी मंच बनाने लगे । उन्होंने दिन भर मंच बनाने और गुरू अमरदास जी ने शाम को जांच कर के, उन्हें रद्द कर देना और साथ ही कुछ झाड़ लगा देनी । सावतें दिन तक यही सिलसिला चलता रहा । सातवें दिन मंच रद्द होने के समय (गुरू) रामदास जी, अति नम्रता सहित घिघिया कर, गुरू अमरदास जी को कहने लगे, कि आप मेरे पर कृपा करें और ऐसा बल प्रदान करें कि मैं आपकी मर्जी के अनुसार मंच बना सकूं । मैं अलपग अल्पबुद्धि जीव, आपके आदेश को समझने से असमर्थ रहा हूं और आप की मर्जी के अनुसार काम न कर सकने के कारण आपके लिए दुख तथा कठिनाई पैदा करता रहा हूं ।

गुरू अमरदास जी गद-गद हो गये । सारी संगत के सामने गुरू अमरदास जी ने (गुरू) रामदास जी को स्वयं प्रणाम कर दिया । उन्हें गुरू घर की मर्यादा के अनुसार अपना गद्दीनशीं स्थापित कर दिया । सारी संगत को भी, गुरू रामदास जी के आगे शीश झुकाने की हिदायत कर दी । बाबा मोहन जी तथा मोहरी जी वहां पर मौजूद थे । बाबा मोहरी जी ने पिता गुरू जी का आदेश मानकर गुरू रामदास जी को शीश झुका दिया ।

गुरू का आदेश मानने तथा सेवा करने का असली गुरसिखी ढंग गुरू रामदास जी ने अपने जीवन की इस महान घटना द्वारा सब को सिखा दिया । सिखी की प्राप्ति के लिए गुरू के हुकम को पूरी तरह से सति सति करके मानने की आवश्यकता है । मन की मति द्वारा मिलावट के आदेश को मानना सिखी नहीं है ।

7. गुरू अमरदास जी का ज्योति में विलीन होना ।

१ सितम्बर १५७४ तदनुसार भाद्रव सुदी १५, संवत १६३१ अथवा १ असु संवत १६३१ को गुरू अमरदास जी ज्योति में विलीन हो गये ।

गुरू जी ने ज्योति में विलीन होने से पहले अपने परिवार के सभी जीवों को और संगत को एकत्र किया और कुछ विशेष उपदेश दिया । इन उपदेशों को उनके पड़पौते सुंदर जी ने रामकली राग में *सदु* के शीर्षक से छः पउड़ियों की एक रचना द्वारा बहुत सुंदर शब्दों में बयान किया है । बाबा सुंदर जी, बाबा अनंद जी के सपुत्र तथा बाबा मोहर जी के पोते थे। छः पउड़ियों की यह बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंक ९२३ व ९२४ पर अंकित है । यथा :

ੴ (१ओऽअंकार) सतिगुर प्रसादि

रामकली सदु

जगि दाता सोइ भगति वछलु तिहु लोइ जीउ ।।
गुर सबदि समावए अवरु न जाणै काइ जीउ ।।
अवरो न जाणहि सबदि गुर कै एकु नामु धिआवहे ।।
परसादि नानक गुरू अंगद, परम पदवी पावहे ।।
आइआ हकारा चलणवारा हरि रामनामि समाइआ ।।
जगि अमरु अटलु अतोलु ठाकुरु भगति ते हरि पाइआ ।।१।।
हरि भाणा गुर भाइआ गुरु जावै हरिप्रभ पासि जीउ ।।
सतिगुर करे हरि पहि बेनती, मेरी पैज रखहु अरदासि जीउ ।।
पैज राखहु हरि जनह केरी हरि देहु नामु निरंजनो ।।
अंति चलदिआं होइ बेली जमदूत कालु निरांजनो ।।
सतिगुरू की बेनती पाई, हरि प्रभि सुणी अरदासि जीउ ।।
हरि धारि किरपा सतिगुरु मिलाइआ धनुधनु कहै साबासि जीउ।।२।।
मेरे सिख सुणहु पुत भाईहो, मेरै हरि भाणा आउ मै पासि जीउ।।
हरि भाणा गुर भाइआ, मेरा हरि प्रभु करे साबासि जीउ ।।
भगतु सतिगुरु पुरखु सोई, जिसु हरि प्रभ भाणा भावए ।।
आनंद अनहद वजहि वाजे, हरि आपि गलि मेलावऐ ।।
तुसी पुत भाई परवार मेरा, मनि वेखहु करि निरजासि जीउ ।।
धुरि लिखिआ परवाणा फिरै नाही गुरु जाइ हरि प्रभ पासि जीउ ।।३।।
सतिगुरि भाणै आपणै बहि परवारु सदाइआ ।।

मत मै पिछै कोई रोवसी सो मै मूलि न भाइआ ।।
मितु पैझे मितु बिगसै जिसु मित की पैज भावए ।।
तुसी वीचारि देखहु पुत भाई हरि सतिगुरू पैनावए ।।
सतिगुरू परतखि होदै बहि राजु आपि टिकाइआ ।।
सभ सिख बंधप पुत भाई, रामदास पैरी पाइआ ।।४।।
अंते सतिगुरु बोलिआ, मै पिछै कीरतन करिअहु निरबाणु जीउ ।।
केसो गोपाल पंडित सदिअहु हरि हरि कथा पड़हि पुराणु जीउ ।।
हरि कथा पड़ीऐ हरिनामु सुणीऐ बेबाणु हरि रंगु गुर भावए ।।
पिंडु पतलि किरिआ दीवा फुल, हरि सरि पावए।।
हरि भाइआ सतिगुरु बोलिआ हरि मिलिआ पुरखु सुजाण जीउ ।।
रामदास सोढी तिलकु दीआ गुर सबदु सचु नीसाणु जीउ ।।५।।
सतिगुरु पुरखु जि बोलिआ गुरसिखा मंनि लई रजाइ जीउ ।।
मोहरी पुतु सनमुखु होइआ रामदासै पेरी पाइ जीउ ।।
सभ पवै पैरी सतिगुरू केरी, जिथै गुरू आपु राखिआ ।।
कोई करि बखीली निवै नाही, फिरि सतिगुरू आणि निवाइआ ।।
हरि गुरहि भाणा दीई वडिआई धुरि लिखिआ लेखु रजाइ जीउ।।
कहै सुंदरु सुणहु संतहु, सभु जगतु पैरी पाइ जीउ ।।६।। (पृ ९२३-२४)

उपरोक्त बाणी के भावार्थ इस प्रकार हैं : परमेश्वर सभी जीवों को *दात* देने वाला और भक्तों को प्यार करने वाला है । गुरू अमरदास जी सतिगुरू के उपदेश के द्वारा सदा ही ऐसे परमेश्वर के प्यार में लीन रहे । वे वास्तव में परमेश्वर के अतिरिक्त और किसी से संबंध नहीं थे रखते । गुरू के उपदेश के कारण गुरू अमरदास जी परमेश्वर तुल्य और किसी को नहीं मानते थे और केवल उसी परमेश्वर के प्यार तथा नाम में लिव जोड़े रखते थे । वे गुरू नानक देव जी तथा गुरू अंगद देव जी की कृपा द्वारा उच्च आत्मिक अवस्था को प्राप्त हुए थे । गुरू अमरदास जी सदा प्रभु के प्यार में जुड़े रहते थे और उन्होंने संसार में रहते हुए अमर, अटल तथा अनंत प्रभु को भक्ति के द्वारा पाया था । आप को प्रभु के घर से निमंत्रण आ गया।

प्रभु की इच्छा गुरू अमरदास जी को प्यारी लगी और आप चलने को तैयार हो गये । गुरू अमरदास जी ने परमेश्वर के सम्मुख अरदास की कि वह उनकी लाज रखे और माया से निरमोह करने वाला अपना नाम

प्रदान करे । परमेश्वर का प्यार या नाम यमदूतों और काल का नाश करता है और अंत समय मनुष्य का सच्चा साथी बनता है । प्रभु ने कृपा करके उनको अपने प्यार में जोड़ लिया और उनके सुकृत्य की प्रशंसा की ।

गुरू अमरदास जी ने सारी सिख संगत तथा संतान आदि को कहा कि परमेश्वर अपनी इच्छा के अनुसार मुझे अपने पास बुला रहा है और उसकी इच्छा मुझे मीठी लग रही है । गुरू अमरदास जी ने सब को समझाया कि केवल वही मनुष्य सच्चा भक्त तथा प्रभु को जानने वाला समझा जा सकता है जो उसके *भाणे* यानी आज्ञा को मीठा करके मानता हो । ऐसे मनुष्य के मन में सच्चा तथा सदा रहने वाला आनंद पैदा हो जाता है और प्रभु उसको स्वीकार करता है । गुरू जी ने सब को समझाते हुए कहा कि उन्हें यह वास्तविकता भी मन में समझ लेनी चाहिए कि प्रभु का हुकम टाला या पलटा नहीं जा सकता।

गुरू अमरदास जी ने परिवार के सभी जीवों को अपने पास बुलवा कर यह शिक्षा दी- **"मेरे देहांत के पश्चात किसी का वियोग में रोना बिल्कुल उचित नहीं, क्योंकि मुझे ऐसे रोने वाले लोग अच्छे नहीं लगते हैं । सच्चे मित्र के मन में अपने मित्र को आदर तथा सम्मान मिला देख कर सदा खुशी होती है, इसलिए मुझे इस समय अकाल पुरख द्वारा आदर तथा प्यार मिलने पर तुम सब को उल्लास होना चाहिए** । इस उपदेश के पश्चात गुरू अमरदास जी ने अपनी जागृत अवस्था में ही गुरू रामदास जी को गुरगद्दी पर बिठा दिया और अपने रिश्तेदारों, संबंधियों तथा सिख संगत को गुरू रामदास जी के आगे शीश झुकाने की आज्ञा की।

अंत समय गुरू अमरदास जी ने सब को यह उपदेश दिया- "मेरे देहांत के पश्चात तुम केवल प्रभु का विशुद्ध यश-गायन अर्थात कीर्तन करना और केवल प्रभु की जानकारी रखने वाले विद्वानों को बुला कर उनसे केवल प्रभु यश रूपी पुराण पढ़ना । सब को यह समझ लेना चाहिए कि मेरे देहांत के पश्चात आप सब को प्रभुयश की कथा पढ़नी चाहिए और प्रभु का नाम ही सुनना चाहिए । *बबाण* निकालने की जगह

अपने मन में केवल प्रभु का प्यार ही पैदा करना चाहिए। पिंड पत्तल, किरिआ, दीवा तथा फूल-अस्थियां उठा कर दरिया में डालना, सब पोप लीला है और निरर्थक है । इन कर्म कांडों की जगह मनुष्य को सतसंग के द्वारा अपने आत्मिक जीवन का निर्माण करना चाहिए । गुरू अमरदास जी तो प्यारे प्रभु को मिल गये और आपने श्री गुरू राम दास जी को गुरगद्दी और गुरू शबद प्रदान कर दिया ।

सभी गुरसिखों ने गुरू अमरदास जी का आदेश मान लिया । बाबा मोहरी जी ने भी गुरू रामदास जी के चरणों पर शीश झुकाया और सम्मान प्रकट किया । गुरू अमरदास जी ने गुरू रामदास जी में अपनी ज्योति टिका दी और सारी संगत ने गुरू रामदास जी के चरणों पर शीश झुकाया । यदि कोई व्यक्ति गुरू साहिब के सम्मुख शीश झुकाने में हिचकिचा रहा था तो उसको भी गुरू अमरदास जी ने ला कर गुरू रामदास जी के पैरों पर प्यार से झुका दिया। सुंदर जी कहते हैं कि परमेश्वर और गुरू अमरदास जी की प्रसन्नता इसी में थी कि गुरू रामदास जी को गुरियाई की महानता मिले और इस प्रकार सारा सिख संसार गुरू रामदास जी के पैरों में पड़ गया ।

गुरू अमरदास जी का स्पष्ट उपदेश तो यही था कि मृत्यु के पश्चात किरिआ करना तथा रोना धोना उचित नहीं है । दीवा वटी के कर्म-कांड की जगह पर नाम का आश्रय लेना चाहिए । शरीर के संस्कार के पश्चात बची हुई अस्थियों को हरिद्वार आदि ले जाना मनमत है । *बड़ा* करना अर्थात *वड्डा करना* या *बबाण* निकालना भी गुरमत से विचलित होने वाली बात है । सब से उत्तम रीति, संगत एकत्र करके कीर्तन करना तथा नाम सुमिरन करना है ।

8. गुरू अमरदास जी के उपदेश
व हमारी अंतिम संस्कार की मर्यादा

वर्तमान समय में मृतक संस्कार संबंधी कई गलत रीतियां सिखों में प्रचलित हो गयी हैं । मनमत से बचने तथा गुरमत को अपनाने के लिए, इस विषय पर नीचे दी गयी टिप्पणी पर अवश्य विचार कर लेनी चाहिए ।

गुरबाणी के आधार पर, गुरसिखों द्वारा लिखी गयी **रहित मर्यादा** संबंधी अभिलेखों व संदर्भों के आधार पर, शिरोमणी गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी अमृतसर द्वारा अधिकृत रहित मर्यादा आदि के आधार पर और तैयार-बर-तैयार सिंघों में प्रचलित विश्वासों के आधार पर मानव शरीर के नष्ट हो जाने पर, उसको संभालने और पराधर्मी रस्मों को त्याग कर गुरमत विधि विधान अपनाने के बारे में आत्मिक, धार्मिक सामाजिक और भाईचारक सिद्धांत तथा संकेत कुछ इस प्रकार हैं :

(1) प्रभु आदेश में, प्रभु द्वारा मिली आयु का समय समाप्त होने पर हर प्राणी का देहांत हो जाना लाजमी है । यथा :

- **जंमणु मरणा हुकमु है भाणै आवै जाइ ।।"** (आसा दी वार, पृ. ४७२)
- **इहु मारगु संसार को नानक थिरु नहीं कोइ ।।"** (सलोक महला ९, पृ. १४२८)

(2) हर प्राणी को अपने किये मंदे या अच्छे कर्मों का फल, उसके जीवन में किये गये कर्मों व व्यवहार के आधार पर ही मिलना होता है । जीवन के साथ अपने सुकृत्य ही निभेंगे । किसी के द्वारा की गयी सहायता या किसी द्वारा किसी और के नमित किया गया कर्म, प्राणी का साथ नहीं दे सकता । यथा :

- **करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि ।"** (जपुजी, पृ. ८)
- **जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ।।"** (बारह माहा पृ १३४)

(3) देश और काल के आधार पर, अलग अलग भाइचारों में मृत्यु के उपरांत मृतक शरीर को अलग-अलग रीतियों से विसर्जित किया जाता है । शरीर को जलाया जाता है, दबाया जाता है, कुत्तों के आगे फेंक दिया जाता है, या नदी आदि में जल प्रवाह कर दिया जाता है । पारसियों की

भांति सूखे कूएं (हसन) पर रख कर चीलों-गिरझों को खिला दिया जाता है आदि, आदि । हिंदू, मुसलमान, इसाई, पारसी आदि के अलग-अलग मतों में ये अलग अलग तरीके अपनाये जाते हैं । इन अलग-अलग तरीको के अपनाने से, मरने वाले की आत्मा को कोई लाभ या हानि नहीं होती है । यथा :

-इक दझहि इक दबीअहि इकना कुते खाहि ।।
इकि पाणी विचि उसटीअहि इकि भी फिरि हसणि पाहि ।।
नानक ऐव न जापई किथै जाइ समाहि ।।

(सलोक महला ३, पृ ६४८)

बल्कि बाणी के स्पष्ट फुर्मान तो यह हैं कि मृतक शरीर का चंदन चढ़ाने से मृतक को कोई सुखदाई लाभ नहीं पहुंचता और न ही मृतक को कूड़े करकट के ढेर पर फेंक देने से उसकी आत्मा को कुछ हानि या खेद हो सकता है । देश काल के रिवाज के अनुसार, सफाई नियमों को ध्यान में रख कर या मृतक के रिश्तेदारों की भावनाओं के अनुसार ही, मृतक शरीर को विसर्जित किया जाता है । परंतु मृतक आत्मा को इसका कोई लाभ हानि नहीं । यथा :

जे मिरतक कउ चंदनु चढ़ावै ।।
उसते कहहु कवन फल पावै ।।
जे मिरतक कउ बिसटा माहि रुलाई ।।
तां मिरतक का किआ घटि जाई ।।"

(महला ५, पृ. ११६०)

वैसे सफाई के दृष्टिकोण से मृतक शरीर को जला देना ही यथेष्ठ है । कुछ लोग भूमि में गाढ़ कर मृतक शरीर को विसर्जित करना अच्छा समझते हैं, जिस में जलाने जैसी भयावहता नहीं होती है, पर इस रीति में भूमि का एक बहुत बड़ा क्षेत्र अनर्थ गंवाना पड़ता है । अतः मृतक शरीर को जला देना श्रेष्ठ विधान है ।

(4) सिख मत के अनुसार मृत्यु के समय प्राणी को खटिया से नीचे उतारना अयोग्य है और यह हिंदू मत की नकल होने के कारण, स्वीकार्य

नहीं । प्राणी को खटिया पर ही रहने देना चाहिए।

(5) मृतक शरीर को स्नान करवाकर दस्तार तथा ककारों सहित साफ सुथरे साधारण कपड़ों से पूरी तरह ढक देना चाहिए । कोई ऐसी कीमती कपड़ा मृतक के शरीर पर नहीं डालना चाहिए जो संस्कार के समय उस से उतारा जाय । ऊपर से कपड़ा उतार कर संस्कार से पहले मृतक के नमित दान देना भी पोप लीला और हिंदू रीति की नकल है जो फौरी तौर पर त्याग देनी चाहिए । जब तक संबंधी एकत्र करने हों, उतनी देर तक घर में सब संबंधियों के मन को धैर्य देने के लिए, केवल बाणी का पाठ ही होना चाहिए, रोना-धोना ठीक नहीं है । रोने धोने के बारे में गुरबाणी का सिद्धांत है :

रोवणु सगल बिकारो गाफलु संसारों माइआ कारणि रोवै ।।
चंगा मंदा किछु सूझै नाही इहु तनु एवे खोवै ।।"

(वडहंस महला १, पृ. ५७९)

(6) मृतक शरीर को शमशान भूमि की ओर ले जाते समय अकालपुरख के सम्मुख संगत के साथ मिल कर अरदास की जानी चाहिए । फिर संगत तथा रिश्तेदार, संबंधी आदि बाणी के शबद पढ़ते हुए, मृतक की देह को शमशान भूमि की ओर ले जायं । शमशान भूमि में पहुंच कर मृतक शरीर चिता पर रख कर, अरदास करके निकटवर्ती या कोई संबंधी चिता को आग दिखा दे । सोहिले का पाठ और अंतिम अरदास करके सब वापिस आ जायं ।

(7) वापिस पहुंचकर घर में ही गुरू ग्रंथ साहिब का पाठ आरंभ किया जाय जो संबंधी व रिश्तेदार सब मिल कर करें या सुनें । ध्यान रहे यह पाठ मृतक के नमित नहीं, यह केवल रिश्तेदार एवं संबंधियों के मनों में गुरबाणी की अटल सच्चाइयों को दोहरा कर उनको धैर्य देने के लिए ही होता है । यह तरीका निरी मनमत है कि एक कमरे में पाठ रखवा दिया जाय और भाड़े पर भाई साहिब पाठ करते रहें और बाहर आंगन में या दूसरे कमरे में रोने धोने का काम होता रहे । रोना धोना एक तो ईश्वरीय इच्छा के विपरीत चलने वाली बात है और दूसरे यह दिखलावा भी है । बाणी

का पाठ, कीर्तन या विचार, इनमें शामिल होना ही सब का कर्तव्य है, जो मनों को धैर्य देने के साथ साथ हमें अपनी जिंदगी को गुरमत दिशा दिखाने में समर्थ बनाता है ।

(8) चार, पांच या आठ दिनों तक या कम बढ़ती जितने दिन भी उचित समझे जायं, पाठ होने के उपरांत भोग डालकर अरदास और कढ़ाह प्रसाद की देग बांट देनी चाहिए ।

(9) पराधर्मो की नकल पर और लोग दिखलावे की घटिया रुची को ध्यान में रख कर, कई गुरमत विरोधी रस्में और रिवाज सिखों में प्रचलित हो रहे हैं जो सिख प्रचारकों तथा लिखारियों को फौरी तौर पर रोकने चाहिएं । हिंदू रीतियों में से कई तो हमारा पीछा छोड़ चुकी हैं और कई अभी तक चिपटी हुई हैं । तुलादान, गाय दान, और दीवा वटी करना सब ब्राहमणी रस्में हैं और त्याजय हैं । प्राणी की देह त्यागने पर विशेष अंदाज में बिलखना, स्यापा करना और मरणासन्न प्राणी को चारपाई से उतारना आदि बुद्धिमता वाली बात नहीं है । चारपाई से तो तब तक नहीं उतारना चाहिए जब तक मृतक का शरीर संस्कार के लिए तैयार न हो जाय । फूहड़ी, अर्द्ध मार्ग, पिंड, किरिआ, श्राद्ध और बुढा मरना आदि सब कुढंगी चालें हैं । मृतक पर खिला, बादाम, पतासे आदि फेंकना घृणित और निंदनीय कर्म समझने चाहिएं । मृतक के मुंह में पंज रतनी डालना और कपाल किरिआ आदि सब ब्राहमणी पोप लीला है । बबाण निकालने और श्रृंगार करने विशुद्ध मनमत है । रोने धोने और स्यापे के बारे में तो गुरू अरजन पातशाह का स्पष्ट आदेश पेश कर देना काफी है :

"जो कछु करै सोई सुखु मानु ।। भूला काहे फिरहि अजान ।।
कउन बसतु आई तेरै संगि ।। लपटि रहिओ रसि लोभी पतंग ।।"

(गउड़ी सुखमनी महला ५, पृ.२८३)

नोट : वास्तव में हर क्षेत्र में मृतक के शरीर को विसर्जित करने के काम को पूरा करने के लिए ब्राहमण, आचारजी या कोई और अंतिम संस्कार कर्मी अवश्य सामने जाते हैं, जो हर मामले में अपनी राय ब्राहमणी मत के अनुसार देते हैं । उनसे पीछा छुड़वाना आसान नहीं । गुरसिखों

को यत्न करके इन अवसरों पर, ऐसे लोगों को समीप नहीं आने देना चाहिए । उन्हें पीछे हट जाने की सख्त सलाह देनी चाहिए ताकि अपने *मनमती* तथा *परामती* भार को हमारी गर्दन पर न रख सकें ।

इसके अलावा यह विचार रखना चाहिए कि मृतक को शमशान भूमि की ओर ले जाने के बारे में दिन-रात, सुबह शाम आदि का विचार करना भी गुरमत विरोधी विश्वास है । जब भी उचित प्रबंध हो सके व संबंधियों को सुविधाजनक हो, वही समय ठीक है । **पाठ के भोग** के बारे में भी यह बात समझ लेनी चाहिए । तीसरे दिन से ले कर 10-15 दिन तक जब उचित समझा जाये या बाहर से आये गये की सुविधा को ध्यान में रखते हुए, भोग डाल देना चाहिए । मृतक के बारे में पाठ का भोग दुपैहर के पश्चात या तीन या चार बजे डालना भी घोर मनमत ही है । यदि सुबह का समय ठीक बैठता हो तो विशेष रूप से शाम के चार बजे का समय निश्चित करना गुरमत नहीं है ।

पाठ के भोग के समय कीर्तन भी करवाया जाता है और कीर्तनी सिंघों को एक अवसर पर रिश्तेदार तथा संबंधी केवल रिश्ता दर्शाने के लिए उठ-उठ कर नुमाइशी रूप में माया भेंट करते हैं । यह बीमारी शहरों में तो बहुत बढ़ गयी है । कीर्तन भेंट का विद्यमान तरीका तो वैसे ही भारी सुधार मांगता है, पर मृतक संबंधी कीर्तन तथा माया दान का यह तरीका तथा नुमायश तो फौरी तौर पर बंद होनी चाहिए । जीना तो आगे ही कठिन हुआ पड़ा है, यदि मरना भी इतना महंगा हो जाय तो घोर मनमत किसे कहेंगे ?

ब्राहमणी रीतियों की नकल पर सिखों में भी भोग के समय मृतक प्राणी के नाम पर कपड़े, बिस्तर, बर्तन, फल फ्रूट नकदी आदि दान दिये जाते हैं । अंतर केवल इतना है कि ब्राहमण की जगह सिख ग्रंथी ने ले ली है । पराधर्मी रीतियों पर लेबल बदलने से गुरमत नहीं बन सकती है ।

बाहर दूर से आये रिश्तेदारों, संबंधियों आदि के लिए गुरू के लंगर का प्रबंध करना तो स्वाभाविक बात है, पर देखा देखी और नुमायशी तौर

पर फजूल खर्च करने, विशेष भोजन तैयार करने या श्राद्ध (पारसल करके) मृतक को भेजना आदि सब कुमति है ।

(10) अब हम अंतिम तथा अति आवश्यक बिंदु पर आते हैं । सिख इतिहास में गुरू गोबिंद सिंघ साहिब के अंतिम समय के संबंध में यह वर्णन आता है कि गुरू साहिबान ने कहा था कि *अंगीठा* (चिता) नहीं बीननी है । यदि गुरू साहिबान ने अपने संस्कार के अंगीठे को फोलने या बीनने से वर्जित किया था तो यह हुकम हमें आम तौर पर अपने सारे सिख भाईचारे पर भी लागू करना चाहिए । वास्तव में पातशाह मृतक संस्कार के बारे में यह एक महत्त्वपूर्ण हुकमनामा था जिसका हम मूर्खतावश उदासीन होकर त्याग करते जा रहे हैं ।

शिरोमणी गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी की ''सिख रहित मर्यादा'' में अंकित मृतक संस्कार के शीर्षक में (क) तथा (ख) में इस प्रकार अंकित है ।

''मृतकप्राणी का *अंगीठा* (चिता) ठंडी हो जाने पर सारे शरीर की भस्म अस्थियों सहित उठा कर जल में विसर्जित कर दी जाय या वहीं पर दबा कर जमीन बराबर कर दी जाय ।.... चिता में से फूल चुनने गंगा, पातालपुरी, करतारपुर आदि स्थानों पर जा कर डालने मनमत है।'' कितना अच्छा होता यदि रहित मर्यादा के इस आदेश का भरपूर प्रचार किया जाता ताकि कीरतपुर साहिब या पातालपुरी के आधार पर नयी मनमत का प्रचलन तो न हो सकता । अब पंथ के समूह प्रचारकों को इसी नयी फैल रही मनमत को शीघ्र ही छोड़ने का प्रयास करना चाहिए ।

स्वतंत्रता के पश्चात यह बीमारी बड़ी तेजी से फैली है । इसकी जड़ तो ब्राहमण मत में से निकली परंतु फैलाव हम अपने अज्ञान और मूर्खता के बल पर कर रहे हैं । राजनीतिक लीडरों की शातिर चालों ने भी इस बीमारी को फैलने में काफी योगदान दिया है । यदि ब्राहमण मत वाले हड्डियों तथा भस्म, जिसको ये प्राणी फूल कहे जाते हैं, को हरिद्वार

में गंगा में डाल कर जीव का मुक्त होना मानते हैं तो हरिद्वार की जगह पातालपुरी का आविष्कार करने से यह ब्राहमणी मनमत कैसे गुरमत बन सकती है ? यह कोई नियम नहीं कि यदि अपने घर को लगे तो आग और यदि दूसरे के घर को लगे तो आग नहीं, बैसंतर देवता । यह मापदंड ही दोषपूर्ण है। यदि यह कहा जाय कि सिखों को हरिद्वारों और ब्राहमणों के पंजे में से छुड़वाना हिंदू मत से अलग कर के निखारना है तो यह बात भी ठीक नहीं ।क्योंकि हरिद्वार तथा ब्राहमणों का स्थान पातालपुरी व ग्रंथी अथवा संतों ने नहीं ले लिया है । मनमत सदा मनमत ही है चाहे उस को कोई भी रूप क्यों न दे दिया जाय ।

कुछ मनमती प्रचारक गलत संदर्भ दे कर सिखों को कुमार्ग पर डाल रहे हैं कि महाराज का ऐसा आदेश है कि पातालपुरी मृतक की हड्डियां डालने से जीव मुक्त हो जाएगा । इस प्रकार तो सारी गुरबाणी ही गलत हो जाती है, जो कदाचित मान्य नहीं है । पातालपुरी में हड्डियां डालना सिख रहित मर्यादा के अनुकूल नहीं । छटे व सातवें सतगुरू का केवल इस कारण संस्कार कीरतपुर साहिब में किया गया था क्योंकि वे वहां पर रहते थे और वहीं पर वे ज्योति में विलीन हुए थे । गुरू हरि कृष्न साहिब का संस्कार दिल्ली बाला साहिब में हुआ । गुरू तेग बहादुर साहिब ने दिल्ली में शहीदी पाई, धड़ का संस्कार रकाबगंज दिल्ली में तथा शीश का संस्कार अनंदपुर साहिब के सीसगंज साहिब के स्थान पर हुआ । चार साहिबज़ादों में से बाबा जोरावर सिंघ व बाबा फतेह सिंघ जी का सस्कार और माता गुजरी जी का सस्कार मेहराज निवासी बाबा फूल जी के स्पुत्र तिलोका और रामा (जो बाद में भाई त्रिलोक सिंघ व राम सिंघ बने) ने करवाया, पर पतालपुरी वाली कोइी रस्म उन्होंने बिल्कुल नहीं की । दसम पातशह ने भी हजूर साहिब में अपने ज्योति में विलीन होते समय अपने बारे में ऐसा कोई आदेश जारी नहीं किया । हां, इस सिद्धांत के बिल्कुल विपरीत *अंगीठा* (चिता) तक न फोलने की करड़ी हिदायत सिखों को अवश्य की गई । गुरू गोबिंद सिंघ साहिब के समय अनेकों सिंघ अनंदपुर

साहिब के युद्धों में शहीद होते रहे, पर संस्कार के पश्चात किसी की **भस्म**-अस्थियों आदि को पातालपुरी नहीं डाला गया । इतिहास इस बात का गवाह है ।

इस बीमारी की जड़ तो निश्चय ही ब्राहमणी विश्वास हैं पर इस का विकास हम स्वयं और हमारे तथाकथित धार्मिक तथा राजनैतिक लीडरों ने किया है ।

स्वतंत्रता के पश्चात कई लीडरों की अस्थियां यहां जल प्रवाह करने की पोप लीला की गई है । संतों-साधुओं की हड्डियां भी यहां धड़ाधड़ पहुंच रही हैं । बहुत समय पहले गुजर चुके लोगों की अस्थियां विदेशों से मंगवा कर यहां पर जल प्रवाह करने के पाखंड रचाए जा रहे हैं । यह मनमत के अलावा और कुछ नहीं है ।

9. गुरगद्दी के समय के उपदेश

गुरु अमरदास जी को साढ़े बाइस साल से भी अधिक समय तक, गुरु नानक पातशाह की तीसरी ज्योति के रूप में बतौर गुरु पद की जिम्मेवारी संभालनी पड़ी। जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है कि गुरु नानक देव जी और गुरु अर्जुन देव जी के पश्चात यदि तुलना की जाए तो श्री गुरू ग्रंथ साहिब में किसी एक गुरु व्यक्ति की सब से अधिक बाणी-रचना है तो वह गुरु अमरदास साहिब की बाणी ही है ।

आपने सिरी राग, माझ, गउड़ी, आसा, गूजरी, वडहंस, सोरठि, धनासरी, सूही, बिलावल, रामकली, मारु, भैरउ, बसंत, सारंग, मलाह तथा प्रभाती नामक 17 रागों में अनंत बाणी की रचना की । याद रहे कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में कुल 31 रागों में बाणी लिखी हुई है । अलग-अलग रागों में शब्द, अष्टपदियां तथा छंद हैं । इनकी संख्या क्रमानुसार 172, 91 और 20 है । आपने गूजरी, सूही, रामकली और मारु में चार *वारां* भी लिखी हैं । इन में कुल 85 पउड़ियां हैं । इसके अतिरिक्त आपने 411 श्लोक लिखे हैं । अलग अलग वारों की पउड़ियों के साथ गुरु अमरदास जी के 343 श्लोक हैं ।*वारां ते वधीक* श्लोकों के शीर्षक से आपके 67 श्लोक हैं ।

एक श्लोक गुरु नानक देव जी के बढ़े हुए श्लोकों में 27 नंबर पर है । इन सब के अतिरिक्त कुछ बाणियां भी सम्मिलित हैं । यथा :

आसा में पटी 18 पउड़ियां, वडहंस में चार शब्द अलाहणीयां, बिलावल में सतवारां के दो शबद, रामकली में अनंद बाणी 40 पउड़ियां और मारू में सोलहे 24 शबद हैं ।

एक अवधि तक गुरु अंगद देव जी की सेवा और संगत में गुरु अमरदास जी, गुरु नानक देव जी और गुरु अंगद देव जी के द्वारा रची बाणी का अभ्यास व विचार मंथन करते रहे । गुरु अंगद देव जी से गुरमत के हर विषय पर आत्मिक व्याख्या लेते रहे । स्वाभाविक है कि आपने अपनी बाणी उन्हीं गुरमत सिद्धांतों तथा शिक्षाओं को दृढ़ करवाने अथवा उनकी व्याख्या करने हेतु रची थी । गुरु नानक देव जी, गुरु अंगद देव जी की बाणी अथवा उस समय तक संकलन हेतु एकत्र की गई और गुरु नानक देव जी द्वारा स्वीकार की जा चुकी भगत बाणी के साथ, राई मात्र भी विचार भिन्नता नहीं दिखलाई देती है ।

वास्तव में बात यह है कि गुरु अमरदास जी का मूल व्यक्तित्व उनके द्वारा रची गई बाणी ही है । अत: आपकी जीवन गाथा का ज्ञान प्राप्त करते समय यह आवश्यक है कि आप द्वारा रचित सारी बाणी पर विचार किया जाए । प्रभु का स्वरूप, उसको प्राप्त करने की युक्ति, सतगुरु के लक्षण, महानता, आवश्यकता तथा प्राप्ति, मानवीय जीवन का अभीष्ट लक्ष्य, सद्कर्मों और कुकर्मों की जानकारी, माया का स्वरुप, इसकी प्रबलता और कुप्रभावों से बचने की युक्ति, आदर्श जीवन, ऊंची आत्मिक अवस्था के लक्षण और प्राप्ति, अनंद या सहज अवस्था, पराधर्मों के निरर्थक सिद्धांतों का थोथापन, मनमत, नाम, सतसंग, पाखंड कर्म, सेवा, अहं, काम आदि विकार, संसार की क्षणभंगुरता आदि अनेकों आत्मिक विषयों पर निर्णायक विवरण और उद्धारणों सहित मूल्यवान विचार दिए गए हैं । आपकी जीवन गाथा में अनेकों ही साखियों और सरगर्मियों का वर्णन आता है, जिनके द्वारा आपने गुरमत विचारों तथा सिद्धांतों को दृढ़ करवाया है या उन मूल्यवान सिद्धातों की व्याख्या की है । उदाहरण

के लिए कुछेक सिद्धांत अंकित किए जाते हैं ।

(1)जात-पात का भेदभाव और धर्म

गुरू अमरदास जी ने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा है :

जाति का गरबु ना करीअहु कोई ।।
ब्रहमु बिंदे सो ब्राहमणु होई ।।१।।
जाति का गरबु न करि मूरख गवारा ।।
इसु गरब ते चलहि बहुतु विकारा ।।१।।रहाउ।।
चारे वरन आखै सभु कोई ।।
ब्रहमु बिंद ते सभ ओपति होई ।।२।।
माटी एक सगल संसारा ।।
बहु बिधि भाडे घड़ै कुमा:रा।।३।। (भैरउ, महला 3, पृ ११२८)
नामा छींबा कबीरु जुोलाहा, पूरे गुर ते गति पाई ।।
ब्रहम के बेते सबदु पछाणहि, हउमै जाति गवाई ।।(स्री राग, महला 3, पृ ६७)
आगै जाति रूपु न जाइ ।।
तेहा होवै जेहे करम कमाइ ।।(आसा महला ३, पृ ३६३)
अगै जाति न पुछीअै करणी सबदु है सारु ।।(मारू वार, महला 3, पृ १०९३)
भगति रते से ऊतमा जति पति सबदे होइ ।।
बिन नावैं सभ नीच जाति है विसटा का कीड़ा होइ ।।(आसा महला3,पृ426)

जात-पात के भिन्न-भेद में आस्था रखने वाला वर्ण-आश्रमी धर्म जन्म और जाति-पात के आधार पर मनुष्य का ऊंच-नीच होना मानता है । गुरमत के अनुसार सभी मनुष्य एक परमेश्वर की अंश होने के कारण भाई-भाई हैं अर्थात बराबर हैं । जाति-पात के आधार पर किसी को ऊंचा व किसी को नीचा मानना पाप है । नेक कर्म करने वाला उत्तम और खोटे कर्म करने वाला नीच है । जात-पात अथवा वरण भेद के ब्राहमणी भेदभावों के भिन्न-भिन्न पक्षों पर यदि खुली विचार की जाय तो एक बहुत बड़ी खतरनाक पुस्तक तैयार हो सकती है । इस विषय पर तत्कालीन ब्राहमणी मत के विद्वान जितनी मर्जी है घुमा-फिरा कर व्याख्या कर लें पर वे इसके मूल रूप को छिपा नहीं सकते हैं ।

मनुसमृति, पाराशर संहिता, अत्रि संहिता, तुलसी की राम चरित मानस, वाल्मीकी रामायण आदि सभी पुरातन ग्रंथों में जाति-पात के भेद-भाव खड़े करके जो दुर्दशा शूद्र श्रेणी की, की गई है, वह अत्याचार, जुल्म और धक्केशाही की सभी सीमाएं पार करके रुला देती हैं । पिछली पांच-छः सदियों से हिंदुस्तान के समाज सुधारक और धर्म प्रचारक छूत-छात तथा जाति-पात के घृणित, अमानवीय और धर्म की रूह के बिल्कुल विपरीत घोर पाप को समाप्त करने का यत्न कर रहे हैं पर अभी तक ब्राहमण भाउ के जाल को तोड़ा नहीं जा सका । स्वतंत्रता के पश्चात कानूनी तौर पर भीं इन अत्याचारों को समाप्त करने का यत्न किया गया है ।(हालांकि यह यत्न भी बिल्कुल सांप्रदायिक कारणों से और हिंदू कौम की बेहतरी को दृष्टि में रख कर हुआ है), पर इस ज़हर का असर बदस्तूर जारी है । कई सदियों की लंबी गुलामी और विदेशियों के कुंभी नर्क जैसे अत्याचार के कांड सदियों से मुसलमानों के हाथों हुई अनव्रत मार-पिटाई भी इस मुल्क के लोगों को अक्ल न सिखला सकी ।

कोई लाख चतुराई करे कि वरण आश्रमी भेदभाव हिंदुओं का बुनियादी सिद्धांत नहीं है, पर इस दशक में पुरी के अति सम्माननीय जगतगुरू शंकराचार्य जी महाराज के बयान दर छपे बयान को कैसे नज़रअंदाज किया जा सकता है जिस में परम पूज्य जगत गुरू जी ने अपार दया व कृपा दर्शाते हुए स्पष्ट कहा है कि वे पवित्र हिंदू मंदिरों में पूजा पाठ करने और प्रवेश करने के अधिकार, प्रत्येक जाति वाले को देने को कदाचित तैयार नहीं हो सकते । आपने स्पष्ट घोषणा की कि छूत-छात के महान सिद्धांत को अपनाने से उन्हें कोई शक्ति नहीं रोक सकती । हिंदू धर्म छूत-छात को मानता है और मानता रहेगा । कुछ लोग जन्म से अछूत होते हैं । महात्मा गांधी जैसे अनेकों हिंदू अपने राजनीतिक लाभ के लिए और अंदर ही अंदर सांप्रदायिक हितों की साधना के लिए जो मर्जी है स्टैंड लिए जाएं, पर पुरातन हिंदू ग्रंथों के संदर्भो से परम पूज्य जगत गुरू शंकराचार्य जी के स्टैंड का खंडन करने

वाला कोई माई का लाल इस देश में न पैदा हुआ है और न हो पाएगा ।

इस युग के महान विद्वान तथा राजनीतिज्ञ डॉ. **भीमराव अंबेडकर** ने अपनी रचना Annihilation of Caste में स्पष्ट लिखा है - जाति-पात और वरण-भेद का वेदों व समृतियों में भरपूर वर्णन है । समृतियों में जाति वरण तोड़ने वाले अपराधियों के लिए सख्त सजाएं निश्चित हैं । यथा, यदि शूद्र वेद पढ़े या सुने तो उस की जुबान काट दी जाए या सिक्का ढाल कर उस के कानों में डाल दिया जाए । आपने स्पष्ट लिखा है कि जाति-पात का भेदभाव धर्म शास्त्रों द्वारा प्रचलित हुआ है । इस का साफ अर्थ यह है कि लोगों को जाति-पात के भेदभावों को छोड़ने के लिए कहना शास्त्रों के मत के मौलिक सिद्धांतों के विरुद्ध चलने की प्रेरणा देना है। यदि हमने अपने इस उच्च लक्ष्य को प्राप्त करना है तो वेदों-शास्त्रों के धर्म अधिकार का सर्वनाश जरूरी है ।

डाक्टर साहिब का उपरोक्त विचार हमारे मतानुसार शत-प्रतिशत सही है । इसी विचार के आधार पर डाक्टर अंबेडकर ने सभी शूद्रों के गले से अछूतपन की बला को उतारने के लिए खुलेआम हिंदू धर्म को सदा के लिए त्यागने का निर्णय कर दिया था । यह ठीक है डाक्टर साहिब को लाखों करोड़ों अछूतों अथवा शूद्रों को ब्राहमणी मत के इस घोर अत्याचार और अन्याय से बचाने का अवसर मिल नहीं पाया, क्योंकि राजनीति पर छाए अनंत लीडर, जो बाहर से सैकुलर के नाम से अभी तक मशहूर हैं, पर अंदर से हिंदू सांप्रदायिकता की वृत्ति व स्वहितों के पोषण के लिए वे शूद्रों और अछूतों को अनेकों रियायतें देने के नाम पर राजनीतिक व आर्थिक लाभ के झांसे देकर अपना उल्लू सीधा करते रहे - जिसके कारण डाक्टर अंबेडकर का लक्ष्य पूरा न हो सका ।

गुरू अमरदास जी ने जाति-पात तथा वरण-आश्रम के भेदभावों का पूर्ण तौर पर खंडन किया और भ्रातृत्व, एकता त[illegible] समानता के सिद्धांतों को व्यवहारिक रूप देने के लिए कई क्रांतिकारी [illegible]दम उठाए ।

ब्राहमणी मत के अनुसार शूद्र अथवा अछूत कहे जाने वाले मनुष्य के हाथ का खाना-पीना तो कहीं रहा, उस की परछाई और नज़र तक से व्यक्ति भ्रष्ट हो जाता था ।

सौ सुनार की, एक लुहार की कहावत को चरितार्थ करते हुए, गुरू साहिब ने, वरण-आश्रमी कुफर के गढ़ को पूरी तरह ध्वस्त करने के लिए और ब्राहमणी जाल को तार-तार कर देने हेतु एक बहुत ही क्रांतिकारी कदम उठाया।

लंगर की मर्यादा तो गुरू नानक पातशाह ने चलाई ही थी और गुरू अंगद देव जी के दरबार में भी लंगर की पवित्र मर्यादा दबस्तूर जारी थी पर गुरू अमरदास जी ने ऐलान कर दिया कि संगत और दीवान में केवल वे जिज्ञासु ही भाग ले सकेंगे जो पहले संगत के सामूहिक लंगर में से भोजन सेवन कर लेंगे ।यह वरण-आश्रमी मत के सिद्धांत पर कुठाराघात था । वरणआश्रमी मत का विश्वासु तथाकथित नीच जातियों के हाथ का बना भोजन सेवन करने से हमेशा ही कतराता रहा है । अछूतों के हाथों पके अन्न को देखकर मानो उनकी जान ही निकल जाती है । दूर-दराज से हजारों की संख्या में सत्य के खोजी आत्मिक व भ्रातृत्व का मार्गदर्शन पाने के लिए गुरू दरबार में हाजिर होते थे । सर्वसाझे भ्रातृत्व का उपदेश तो पहले ही दिया जाता था और नित्य यही शिक्षा दी जाती थी कि किसी को नीचा और अछूत न समझो क्योंकि सभी बंदे एक ही परमेश्वर की संतान हैं और आपस में भाई-भाई हैं । पर इस से पूर्व कई लोग अपना दांव लगा लेते थे, भाव लंगर की हाजरी तो भर जाते पर सामूहिक लंगर की पंक्ति में बैठने के समय पर एक ओर से खिसक लेते ।

लंगर तैयार करने में हर कोई बिना किसी जाति-पात-मजहब के भेदभाव के शामिल होता था । सेवन करते समय भी साझी पंक्तियां लगाई जातीं । जाति अभिमानियों ने अपनी 'कीमती राय' देने के निरर्थक यत्न जरूर किए कि चलो पंक्ति में चल कर सेवन कर लेते हैं पर भिन्न-भिन्न जातियों की भिन्न-भिन्न पंक्तियां लगवा दी जाएं । लंगर

तैयार करने में भी कुछ एक बहुत नीच समझी जाने वाली जातियों को शामिल न किया जाए । पर गुरदेव जी पर्वत जैसी मजबूत व अडोल हस्ती के सामने किसी की कोई पेश न जा सकी । जाति-पाति के भेदभाव के साथ ही उन्होंने आर्थिक भेदभाव का रास्ता भी काट दिया । आज यह बात चाहे हमें बिल्कुल साधारण सी लगती है कि इतिहास का गंभीर पाठक समकालीन समाज के हालात को देखते हुए यह बात हैरत से पढ़ने पर मजबूर होता है कि गोइंदवाल साहिब के लंगर में अकबर जैसे शहिनशाहे-हिंद और हरीपुर के राजा-रानियों और दरबारियों आदि ने बिल्कुल साधारण व्यक्तियों के साथ बैठकर एक ही पंक्ति में गोइंदवाल में लंगर सेवन किया ।

वरण-आश्रम मत वाला, बहते पानी को साफ और पवित्र मानता था भले ही वह पीने लायक न हो । वास्तव में ब्राहमणी मत के पैरोकारों की खड़े पानी से पिद्दी निकलती थी । गुरू अमरदास जी ने सब को सुधारने के लिए बहुत ही मनोवैज्ञानिक तरीका अपनाया । आपने गोइंदवाल साहिब में एक बहुत बड़ा जलकुंड बनवाया जो कि बाउली साहिब के नाम से प्रसिद्ध है। एक तो साफ पानी की कमी पूरी तरह दूर हो गई और दूसरे इस खड़े पानी के स्त्रोत को सभी जातियों मजहबों के लोग जल लेने, पीने अथवा स्नान आदि के लिए इस्तेमाल कर सकते थे । कुदरती बात थी कि कम से कम सिख मत में शामिल होने वाले लोग जाति-पात के जाल को फौरी तौर पर तोड़ने में सफल हो जाते जिस ने कुछ वर्षो में ही इन को एक शक्तिशाली कौम बना दिया । ध्यान रहे कि वरण आश्रमी ब्राहमणी मत के इस मायाजाल को तोड़ने की खातिर ही श्री अमृतसर तथा तरनतारन साहिब आदि स्थानों पर उपरोक्त तकनीक का प्रयोग करते हुए सरोवरों का निर्माण किया गया । खड़े पानी में सब जातियों के लोग स्नान करके अपने जाति-पात के भेद-भाव को तोड़ने में सफल हो गए और इस तरह ब्राहमण *भाउ* हमारे गले से उतरता गया । काश! सरोवरों की महानता को आज कौम इस असल पहलू द्वारा समझ सकती ।

प्राचीन प्रथा चली आई है कि चौरासी पौड़ियों वाली गोइंदवाल साहिब वाली बाउली(जलकुंड) में स्नान करने से व्यक्ति चौरासी योनियों के भंवर में से मुक्त हो जाता है । बात सौ फी सदी ठीक है । गुरमत को न समझने और मानने वाला वरणआश्रमी भेदभावों का श्रद्धालु वास्तव में चौरासी का खाज ही तो है और इस महान बाउली में स्नान करते समय चौरासी मत का जाल कुदरती तौर पर कट जाता है, भाव जाति-पात के बंधन कट जाते हैं ओर हमें हर मनुष्य ईश्वर की सुंदर कृति प्रतीत होने लगता है ।

(2)सती की अमानवीय प्रथा तथा स्त्री जातिः

सतीआ ऐहि न आखीअनि जो मड़िआ लगि जलंनि: ।।
नानक सतीआ जाणीअनि् जि बिरहे चोट मरंनि् ।।
भी सो सतीआ जाणीअनि, सील संतोखि रहंनि् ।।
सेवनि साई आपणा, नित उठि समाःलंनि् ।।

(सूही महला ३, पृ ७८७)

यहां के हिंदू समाज ने स्त्री जाति के बारे में अजीब मान्यताएं घड़ रखी थीं । अन्य भौतिक पदार्थों की तरह स्त्री, मनुष्य की निजी संपत्ति थी । इस को अन्य भौतिक पदार्थों की भांति दान (ब्राहमणों को) में दिया जा सकता था । आवश्यकता पड़ने पर वह जूए में हारी जा सकती थी । शूद्र होने के कारण वह जनेऊ (यज्ञोपवीत) धारण नहीं कर सकती थी । जिस अभाग्यशाली स्त्री का पति कालवास हो जाता, उस को अपने पति की चिता के साथ ही जल मरना पड़ता था । इस कुरीति को सती का नाम दिया गया था । यह निश्चय ही हृदय विदारक, अमानवीय तथा अत्याचारी प्राकृति की रीति थी । यदि स्त्री मर जाय तो पति पुनः विवाह करवा सकता था परंतु पति मर जाए तो स्त्री को जिंदा ही उसकी चिता के साथ जला दिया जाता था । प्राचीन धार्मिक शास्त्रों तथा ग्रंथों में अंकित प्रावधानों का, इस से बड़ा अत्याचार और क्या हो सकता है ?

गुरू साहिबान ने समाज में स्पष्ट तौर पर यह प्रचार किया कि वह स्त्री सती नहीं कही जा सकती जो पति की चिता के साथ जल मरती है । सती वह स्त्री है जो पति के बिछोड़े की चोट को सहते हुए, प्रभु के आदेश में रहकर आदर्श जीवन व्यतीत करती है । वह स्त्रियां भी सती हैं जो ऊंचे आचरण और संतोष के गुणों को धारण किये रखती हैं, अपने पति की सेवा करती हैं और नित्य प्रति सावधान हो कर अपने इस कर्तव्य को निभाती हैं ।

गुरु नानक पातशाह ने, स्त्री को पुरुष के मुकाबले पर नीच या बुरा नहीं माना है । उन्होंने साफ कहा कि उस स्त्री को नीच कैसे कहा जा सकता है जिसकी कोख से बड़े-बड़े महापुरुष, राजा तथा धर्मात्मा पुरुष जन्म लेते हैं । **इतिहासकार लतीफ** के अनुसार भी, गुरु अमरदास जी ने अपने सिख समाज में से सती जैसी अमानवीय तथा दिल को दहला देने वाली तथाकथित रस्म अथवा अत्याचार को पूर्ण तौर पर रद्द कर दिया था । **जी बी स्कॉट** के अनुसार गुरु साहिब सब से पहले ऐसे मुख्य सुधारक थे, जिन्होंने सती की अत्याचारपूर्ण रीति के विरुद्ध आवाज बुलंद की । समाज में व्यभिचार न बढ़े, यह सोच कर आवश्यकता के अनुसार विधवा विवाहों का भी प्रचार किया । सती की रस्म को कानूनन बंद करवाने के लिए (अपने उत्तराधिकारी गुरु) रामदास जी को हिदायत की कि वे बादशाह अकबर के साथ बातचीत करें ताकि कानूनी शक्ति द्वारा इस अत्याचारपूर्ण बर्बर रीति को बंद किया जा सके ।

स्त्री जाति के साथ इतना भेदभाव शास्त्रीय मत ने कर रखा था कि हर पक्ष से इसकी अधोगति झलकती थी । धर्म कर्म तथा सामाजिक सरगर्मियों में भाग लेना तो कहीं रहा, अलग-अलग रीतियों के भार से उसको इतना बोझिल कर दिया गया था कि वह ऊपर उठ भी नहीं सकती थी । युवा स्त्री, यदि विधवा हो जाए तो उसको पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी । इस कुरीति के फलस्वरूप विधवा स्त्री का जीवन केवल नर्क बन जाता था क्योंकि उसकी सांसारिक आवश्यकताओं की

पूर्ति के लिए कोई साधन आम तौर पर नहीं रहता था । फिर, इस कुरीति के कारण समाज में व्यभिचार बढ़ने के अवसर पैदा होते रहते थे । स्त्री को समाज में खुले रूप में विचरण करने की आज्ञा नहीं थी । वह नगन मुख हो कर अन्य लोगों के सामने नहीं जा सकती थी । उसको पर्दे में रहना पड़ता था । यदि अधिक जरूरत होती तो घूंघट निकालकर, भाव मुंह, चेहरा, नाक आदि पूरी तरह से ढंक कर रहना पड़ता था । ये कुरीतियां स्त्री जाति के स्वास्थ्य के लिए ही हानिकारक नहीं थी, बल्कि इन रस्मों से स्त्री जाति के मन में व्यक्त न की जा सकने वाली आत्महीनता का भाव पैदा होने की स्वाभाविक बात थी । इससे स्त्री के व्यक्तित्व का विकास भी संभव नहीं रह पाता । हरीपुर के राजा की साखी से गुरु पातशाह की इसी शिक्षा का संकेत मिलता है । इस साखी के द्वारा उन्होंने सब रानियों तथा स्त्रियों को घूंघट निकालने की कुरीति का त्याग करने को कहा था । यह बीमारी अब हमारे समाज में आम तौर पर तो नहीं रह गई है, पर *अनंद कारज*(विवाहोत्सव) के अवसरों पर यह नाटक, गुरु पातशाह की हजूरी में वधु द्वारा अभी भी दांव लगने पर कर लिया जाता है । गुरमत पर चलने वालों को इस ओर भी ध्यान देना चाहिए ।

(3) विवाह शादियों की रस्मों में सुधार :

'-इहु जगतु ममता मुआ, जीवण की बिधि नाहि ।।
गुर कै भाणै जो चलै, तां जीवण पदवी पाहि ।।(पृ ५०८)
-हउमै ममता मोहणी, मनमुखा नो गई खाइ ।।
जो मोहि दूजे चितु लाइदे, तिना विआपि रही लपटाइ ।।(पृ ५१३)
-ऐ मना अति लोभीआ नित लोभे राता ।।
माइआ मनसा मोहणी दह दिस फिराता ।।
अगै नाउ जाति न जाइसी मनमुखि दुखु खाता ।।(पृ ५१४)
-ऐहु सभु किछु आवण जाणु है जता है आकारु ।।
जिनि ऐहु लेखा लिखिआ सो होआ परवाणु ।।
नानक जे को आपु गणाइंदा, सो मूरखु गावारु ।।(पृ ५१६)

-हउ हउ करदी सभी फिरै बिनु सदबै हउ न जाइ ।।
नानक नाम रते तिन हउमै गई, सचै रहे समाइ ।।(पृ ४२६)
-हम नीच मैले अति अभिमानी, दूजै भाइ विकार ।।
गुर पारसि मिलिऔ कंचनु होए निरमल जोति अपार ।।(पृ ४२७)
-बिनु नावै सुखु न पाइऔ ना दुखु विचहु जाइ ।।
इस जगु माइआ मोहि विआपिआ दूजै भरमि भुलाइ ।।(पृ ४३०)
-पूरे गुरि समझाइआ, मति ऊतम होई ।।
अंतरु सीतल सांति होइ, नामें सुखु होई ।।(पृ ४२४)
-इस जुग महि सोभा नाम की, बिनु नावै सोभ न होई ।।
इह माइआ की सोभा चारि दिहाड़े जांदी बिलमु न होइ ।।(पृ ४२९)
-तनु मनु धनु सभु सउपि गुर कउ हुकमि मंनिऔ पाईऔ ।।

(श्री गुरु अमरदास जी पृ ९१८)

मनुष्य के आत्मिक जीवन को तबाह करने में हमारे कई भाईचारक और सामाजिक रस्मो रिवाज बड़ा महत्त्वपूर्ण रोल अदा करते हैं । यदि ये रस्मो रिवाज वास्तविक व सादगी भरे हों तो मनुष्य के आत्मिक निर्माण के लिए लाभदाई होते हैं । यदि इनमें और की और नवीन मनोवृत्तियां सम्मिलित होती जाएं तो मनुष्य का आत्मिक जीवन ही नीच नहीं हो जाता, बल्कि इनसे मानवीय भ्रातृत्व में भी कई क्लेश उठ खड़े होते हैं । फिर, इन क्लेशों द्वारा और अधिक सामाजिक बुराइयों का जन्म होता जाता है जिससे मानवीय जीवन नारकीय हो जाता है ।

आज विवाह-शादियों से संबंधित अनेकों रस्में पैदा हो चुकी हैं जिनके कारण मनुष्य का आत्मिक जीवन ही तबाह नहीं हुआ बल्कि भ्रातृत्व के पक्ष से भी मनुष्य का जीवन कुंभी नर्क बन चुका है । गुरु अमरदास जी इस तथ्य को भलीभांति समझते थे और इसीलिए इस संबंध में आप ने मानव समाज में फौरी तौर पर वांछित सुधार करने आवश्यक समझे थे । विवाह शादियों संबंधी अनावश्यक रस्मो-रिवाजों का जन्म और विकास, मनुष्य की नीच मनोवृत्तियों में से हुआ है । इन दुरावृत्तियों को ठीक दिशा देने के लिए आप ने अपनी बाणी और व्यवहारिक जीवन के द्वारा नीचे लिखे विचार दृढ़ करवाए थे ।

सांसारिक लोग ममता की भावना के कारण आत्मिक जीवन बर्बाद कर रहे हैं । वे आदर्श जीवन युक्ति से अनभिज्ञ हैं । सही जीवन युक्ति के लिए गुरु की शिक्षा के अनुसार ढलना जरुरी है । गुरु की मति को छोड़ कर मन की अगवाई में चलने वाले, अहं और ममता के हाथों बर्बाद होते हैं । वे ईश्वर को छोड़ कर माया में मन जोड़े रखते हैं। लोभी पुरुष अनावश्यक पदार्थवादी इच्छाओं की पूर्ति के लिए भटकते रहते हैं । मनमती पुरुष सांसारिक बड़प्पन और जाति अभिमान के हाथों चढ़ कर, अपने लिए दुःख पैदा करते हैं । ऐसे मनमुख इस वास्तविकता को ही नहीं समझते कि पदार्थवादी बड़प्पन नाशवान चीजें हैं । अपने आप को इनके आधार पर बड़ा गिनने वाला मनुष्य मूर्ख और गंवार होता है ।

गुरु अमरदास जी के अनुसार संसार के अधिकांश मनुष्य अपनी अहं वृत्ति में ही विचरण कर रहे हैं । इस अहं वृत्ति से गुर उपदेश के द्वारा ही छुटकारा हो सकता है । गुरु द्वारा दर्शाई युक्ति के अनुसार प्रभु के साथ सच्चा प्यार डाल कर, उसका नाम सुमिरन करने से अहं को समाप्त किया जा सकता है । यह सांसारिक जीव, नीच और पापों से भरा होने पर भी अहंकार किये जा रहा है । गुरु रूपी पारस के स्पर्श के बिना हमारा जीवन निर्मल नहीं बन सकता । यह बात पक्की तरह समझनी चाहिए कि प्रभु के प्यार और सुमिरन के बिना, सच्चा सुख नहीं मिल सकता । मन का सांसारिक दुखों से छुटकारा भी नहीं हो सकता । संसार के लोग, माया के प्यार में फंसे हुए होने के कारण, सच्चे मार्ग से भटके हुए हैं । केवल मात्र पूरे गुरु के उपदेश द्वारा हमारी बुद्धि उत्तम और निर्मल हो सकती है । हमारे मन में शीतलता, शांति और स्थाई सुख पैदा हो सकता है । मानवीय जीवन की सच्ची शोभा व महानता, परमेश्वर के नाम सुमिरन में निहित है । पदार्थवादी प्राप्तियों के द्वारा मिली शोभा व सम्मान, चार दिनों के हैं, क्षणभंगुर हैं, जिनका कोई आधार नहीं है । सीधी तथा साफ बात तो यह है कि मनुष्य अपने जीवन को सफल करने

के लिए तन, मन तथा धन संबंधी, सभी प्राप्तियों के अहं को छोड़कर सतगुरु के आदेशों को मान ले और उन्हें व्यवहार में लाए ।

गुर उपदेश की ओर ध्यान न देने के कारण विवाह शादियों के बहाने अपनी लालची वृत्ति को शांत करने के लिए लड़की वालों से अधिक से अधिक दहेज लेने की कोशिश की जाती है । यह वृत्ति कई बार तो परले दर्जे की घृणित व सामाजिक अत्याचार से भी ऊपर होती है । इस कुरीति के कारण समाज में बेटी और पुत्र, या स्त्री और पुरुष की बराबरी का नियम कायम करना नामुमकिन हुआ पड़ा है । इस रुचि ने, मनुष्य के जीवन में ईर्ष्या, द्वेष, बदले की भावना आदि ही पैदा नहीं किये बल्कि मनुष्य की जहां कहीं भी चली है, रिश्वत लेने की रुचि को भी बहुत बढ़ाया है । अहं की वृत्ति ने दिखलावे को भारी बढ़ावा दिया है और इसके कारण दहेज का प्रदर्शन, ऊंची-नीची जाति का भेदभाव तथा इससे पैदा हुए झगड़े बहुत बढ़ गए हैं । झूठे प्रदर्शन की रुचि और लालच ने अपव्यय को इस कदर बढ़ा दिया है कि बेटियों वाले गरीब माता पिता का ही नहीं, साधारण आर्थिक दशा वाले माता पिता का जीवन भी कुंभी नर्क बन गया है ।

विवाह मनुष्य के जीवन की एक आवश्यक और पवित्र सामाजिक आवश्यकता है । इसके लिए कोई सीधा समतल, सादगी से परिपूर्ण सामाजिक तरीका भी अपनाया जा सकता था जिससे मनुष्य के जीवन में अनावश्यक आर्थिक क्लेश और दुख न पैदा होते । पर मनुष्य की लालची तथा अहं वृत्तियों ने कई व्यर्थ व थोथी पाप भरी रस्मों-रीतियों को जन्म दे कर मनुष्य के जीवन के लिए दुःख मोल ले लिए हैं । इन रीतियों रिवाजों में ब्राहमणी मत ने भी अपनी आदत और स्वभाव के अनुसार जोरदार योगदान किया है । पुराने समय में रिश्ता-नाता तय करवाने, राशियों, जाति आदि को दृष्टि में रखकर ऐसे भावी वर-वधु के जोड़ों को शुभ अशुभ और उचित-अनुचित घोषित करने और विवाह पढ़वाने के लिए ब्राहमण जैसे *अद्वितीय व्यक्तित्व* का बहुत महत्व हुआ

करता था । और तिस पर इस सब के लिए उसने भाड़ा निश्चित कर रखा था । आज भी देखा देखी के कारण और ब्राहमणी मत की बेआवाज लाठी के कारण, बेशुमार लोग मनमत और पोप लीलाओं की ओर धकेले जा रहे हैं ।

सिख रहित मर्यादा में अनंद संस्कार अथवा सिख विवाह रीति संबंधी कई बातों का उल्लेख किया गया है । इनमें से कुछेक बातों की ओर सिख मुखियों तथा धार्मिक लीडरों को विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है । सिख रहित मर्यादा के अनुसार, सिख लड़के लड़की का विवाह जाति पात गौत्र आदि को पूर्ण तौर पर नजरअंदाज करके होना चाहिए और सिख लड़की का विवाह केवल सिख लड़के के साथ ही हो सकता है । सफल जोड़े के लिए एक जैसे विचारों का होना सदा सुखदाई होता है । रिश्ता पक्का करने के लिए संगत की हजूरी में केवल अरदास की रस्म चाहिए । अनंद का दिन निश्चित करने के लिए *पत्री वाचन* या अच्छे बुरे दिन का जांचना, थित वार आदि का विचार करना, विशुद्ध मनमति है । सेहरा, मुकुट, गाना आदि बांधना पित्तर पूजा करना, कच्ची लस्सी में पैर डालना, बेरी जंडी आदि को काटना घड़ोली भरना, रूठ कर जाना, छंद पढ़ने, हवन करना, वेदी गाड़ना, वेश्या नाच, शराब आदि सब मनमत के कर्म हैं । लड़के लड़की का विवाह पैसे या भेंट लेकर करवाना भी पाप कर्म है ।

वर्तमान समय में अनेकों दकियानूसी रस्मों को नवीन रूप दिया जा चुका है और कई नवीन सामाजिक बुराइयां पैदा हो रही हैं । इनकी ओर भी पंथ-दर्दियों तथा धार्मिक नेताओं को तुरंत ध्यान देना चाहिए । जयमाला की रीति बिपरन(ब्राहमणी) छाया होने के कारण त्याजय है । शराब पीना सिख जीवन पद्धति के विपरीत कुकर्म है । यह अपव्यय के अतिरिक्त और कई सामाजिक बुराइयों को जन्म देने वाली चीज है । *रीसैप्शन* कार्यक्रमों के नाम पर होने वाले फटीचर कार्यक्रम मनोरंजन की जगह भ्रातृत्व मर्यादा को तोड़ कर, शराब और काम-कुकर्मों को

उकसा रहे हैं । सजावट और रोशनी प्रबंधों के नाम पर अपव्यय इस सीमा तक बढ़ चुका है कि बेटी वालों की तो मानो, कमर ही टूटने वाली बात बनी हुई है । देखा देखी के बहाने यह अपव्यय व दिखलावे दिनों दिन फटे हुए जूते की तरह बढ़ते ही जा रहे हैं । बैंड बाजों की धुनियां किसी को प्यारी लगें या न लगें, ऐसी आवश्यक बुराई की शक्ल धारण कर चुकी हैं जैसे प्राचीन सनातनी मत के धारणकर्ता के लिए ब्राहमण या पुरोहित । शहरों नगरों की बारातों में एक और नई बीमारी क्षय रोग बन कर सिख समाज में फैल चुकी है । कोई-कोई ही परिवार इस क्षय रोग से बच पाया होगा । आम सिख परिवार इस जाल में बुरी तरह फंस चुके हैं । सड़कों बाजारों में वर का जो जलूस बारात के साथ निकाला जाता है उसमें सिख युवक युवतियां ही नहीं वृद्ध तथा अर्द्ध वृद्ध बेसुरे बाजे की धुन पर नाच कर (जो डांसर नहीं होते) सिख सभ्यता को बिल्कुल हल्का करने का, अनजाने में अपराध कर रहे हैं । यह दृष्टि से ओझल करने वाली बात नहीं है । हमारा यह तात्पर्य कभी नहीं है कि दुनियादारी को अपने ऐसे खुशी के अवसरों को मनाने से रोका जाए । हमारा यह सब कुछ लिखने का तात्पर्य केवल इतना ही है कि हम ओछे बनने से बचें और सिखी विरोधी रीति रिवाजों को अपनाकर सिख सभ्यता की रस्मों को हल्का-फुल्का बनाने के घोर पाप से तोबा करें । खुशी मनाने के लिए कई सुंदर तथा स्वस्थ तरीके अपनाए जा सकते हैं । हां, यदि मक्खी की तरह गंदगी पसंद करने की वृत्ति को अपनाना ही हमारा कर्म हो तो एमरजेंसी लगाने वाली प्रधानमंत्री भी हमें रोक नहीं सकती । ऐसी वृत्ति की व्याख्या गुरबाणी में इस प्रकार की गई है :

कबीर पापी भगति न भावई, हरि पूजा न सुहाइ ।।

माखी चंदनु परहरै जह बिगंध तह जाइ ।। (पृ १३६८)

सत्य पूछो तो विवाह-शादी संबंधी हमारे रस्मोरिवाज फौरी ध्यान मांगते हैं । सारे पंथ को अपनी रहित मर्यादा पर कुछ वर्षो के पश्चात दृष्टिपात करना चाहिए ताकि मनमती कर्म रुपी ढोरों को गुरमत के

खूबसूरत महल में दाखिल होने से रोका जा सके । हमारी दृष्टि से तो दूध पिलाने, ठाका करने तथा कुड़माई आदि की सभी रस्में बेकार हैं और इन्हें अनुपयोगी व अपव्यय वाली घोषित कर देना चाहिए । इन सब की जगह पर केवल *अरदास* की रीति को महत्व देना चाहिए जो कढ़ाह प्रशाद की *देग* सहित या इसके बिना भी हो सकती है । और कोई लेने देन की बात पोप लीला के तौर पर इस समय नहीं होनी चाहिए । विवाह संबंधी रस्मों का निर्णय करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि ये रस्में ऐसी हों जिन से हमारी सर्वव्यापी, सर्वोत्तम सिख सभ्यता निखर सके और इस सभी के लिए पूर्वी और पश्चिमी सभ्यताओं की सभी प्रकार की निरर्थक और गलत रीतियों का त्याग करना बहुत जरूरी है ।

गुरमत में स्त्री-पुरुष के बराबर के स्थान को दृष्टि में रखते हुए *धेतियां* (लड़की वालों) को *पुतेतियां* (लड़के वालों) के सामने हर मामले में ज़लील सी पोजीशन में प्रस्तुत करने का संपूर्ण विरोध होना चाहिए । इसकी जगह पर स्वस्थ गुरमत की दिशा निकालकर ब्राहमणी मत की इस गलत छाया से सिखी को बचाना चाहिए । हमारा पंथ के प्रति सनिम्र निवेदन है कि *धेते-पुतेते* की *मिलणी* का ड्रामा करने की जगह सीधे गुरू दरबार में हाजर होने और वहां पर सादे दीवान में अनंद पढ़ा कर यह रस्म पूरी कर ली जाय और फिर साझे तौर पर विशेष प्रकार के लंगर का प्रबंध कर लिया जाए । संबंधित विषय सभी पक्षों से खुली विचार की मांग करता है और इस संबंध में निर्णय करना पंथ के क्षेत्राधिकार में आता है । कुछ भी हो, हमें अपने समाज में से विवाह शादियों के बारे में अपनाई जा रही मनमतों व परामतों को त्याग देने का निर्णय कर ही लेना चाहिए ।

इस संबंध में गुरू अमरदास जी ने अपने जीवन में कई क्रांतिकारी और व्यवहारिक कदम उठाए थे । जैसे कि इस लेख के आरंभ में गुरू अमरदास जी के विचार बताए जा चुके हैं कि रिश्ता-नाता ढूंढने के लिए जाति, पात, गौत्र, धन-दौलत आदि के आधार ओछेपन की

निशानी हैं । शारीरिक मेल, स्वभाव का मेल, गुणों का मेल, आयु व व्यक्तित्व का मेल और सब से अधिक जरूरी गुरमत धारण करने संबंधी मेल को देखना चाहिए । इन आधारों पर ही गुरू अमरदास जी ने अपनी बेटी बीबी दानी जी का आनंद कारज रामा जी नामक अति साधारण सिख से किया । बीबी भानी जी के लिए योग्य वर चुनते समय तो उन्होंने हद ही कर दी । जेठा जी (जिनको चौथे स्थान पर गुरू नानक पातशाह जी की गद्दी सौंपी गई थी) अभी आयु में छोटे ही थे, कि उनके माता जी का साया सिर से उठ गया । नानी यतीम जेठा जी को लेकर बासरके आ गई थी । नानी भी आर्थिक तौर पर बहुत कमजोर थी । इसी कारण छोटी उम्र में ही उदर पूर्ति के लिए जेठा जी को *घुंघणियां* (उबली हुई गेहूं व चने) बेचने का काम करना पड़ता था । गुरू अमरदास जी की आर्थिक दशा कभी कमजोर नहीं रही । उनका सामाजिक स्तर भी आत्मिक गुणों के कारण बहुत ऊंचा हो चुका था। यदि दुनियादारी की नजर से परखें तो गुरू अमरदास जी अपनी सपुत्री बीबी भानी का रिश्ता एक अति गरीब तथा यतीम लड़के के साथ नहीं कर सकते थे । पर आप ने तो इस सिलसिले में हमें व्यवहारिक शिक्षा देने के लिए काम करना था । गुरमत, आर्थिक स्थिति के आधार पर किसी को बड़ा या छोटा नही मानती । आयु, गुणों, सिखी प्यार, स्वभाव, आचरण आदि के मेल के कारण बीबी भानी जी के लिए जेठा जी का संयोग सब से अधिक मेल खाता था । आर्थिक स्थिति को पूरी तरह व्यवहारिक रूप में नज़र-अंदाज करके बीबी जी का रिश्ता जेठा जी से कर दिया गया । इस आधार पर हुआ रिश्ता कितना सफल हुआ, बाद का इतिहास इसका सुंदर साक्षी है ।

ठीक है कि जेठा जी अपने महान गुणों और ईश्वरी कृपा के कारण गुरू अमरदास जी के बाद रामदास जी के नाम के साथ चौथे स्थान पर गुरगद्दी के अधिकारी बने, पर शुरू में आप जिस कमजोर आर्थिक दशा वाले और सांसारिक दृष्टिकोण से हीन स्तर वाले थे, और जिस प्रकार

उन को गुरू अमरदास जी ने स्वीकार किया था, उस का वर्णन आपने अपनी बाणी में इन शब्दों में किया है :

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा,
सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ।।
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता,
गुर सतिगुर संगि कीरे हम थाप ।। (पृ १६७)

'प्रेमा' जो अपने कुकर्मों के कारण कुष्टि हो गया था, सतगुरू अमरदास जी की कृपा द्वारा अरोग हो गया था । वह सिखी की कमाई करने लग गया । गुरू अमरदास जी ने उसका नाम भी मुरारी रख दिया । उस को अपना बेटा जान कर उसे सम्मानित करते हुए संगत में मांग की कि कोई सज्जन मुरारी के संग अपनी वर-योग्य कन्या का विवाह कर दे । शीहां उप्पल ने अपनी लड़की मथो का रिश्ता करना मान लिया । शींहे की पत्नी को यह प्रस्ताव अच्छा न लगा । जोड़ी गुणों, स्वभाव, आयु, व्यक्तित्व आदि के पक्ष से ठीक बनती थी पर बीबी मथो की माता की बड़ी आपत्ति यह थी कि मुरारी के माता-पिता, खानदान आदि का कुछ पता नहीं और पूर्ववृत्त भी अच्छा नहीं । गुरू अमरदास जी ने गुरमत ज्ञान द्वारा मथो के माता जी के इस बारे में भुलेखे को दूर किया और अंत माता ने बीबी मथो का अनंद कारज मुरारी के साथ करवाना मान लिया । मथो मुरारी की सौभाग्य जोड़ी अपने निजी जीवन के लिए ही अच्छी सिद्ध नहीं हुई बल्कि सिखी का इस जोड़ी ने इतनी लगन व उत्साह से प्रचार किया कि सतगुरू अमरदास जी ने 'मथो मुरारी' को संयुक्त तौर पर प्रचारक की *मंजी* प्रदान की ।

मंदर गांव(जिला लाहौर) का एक ब्राहमण 'सचन-सच' गुरू घर का व्यवहारिक जीवन वाला सिख बन गया था । हरीपुर कांगड़ा की घूंघट निकालने वाली रानी जो जंगल की ओर दौड़ गई थी, को सतगुरू जी ने अरोग्य करके सचन सच के साथ विवाह-बंधन में पिरो दिया । यह विवाह जाति पात आदि के बंधन तोड़ कर ही नहीं हुआ था बल्कि एक पुनर्विवाह भी था । हरीपुर की इस रानी को राजा ने सदा के लिए छोड़

दिया था क्यों कि यह पागल हो कर जंगलों की ओर दौड़ गई थी । यह विवाह भी बहुत सफल रहा और इस जोड़े ने भी गुरमत का बहुत प्रचार किया ।

विवाह शादियों संबंधी रस्मों और विचारधारा में सिख कौम को फौरी तौर पर ध्यान देने की आवश्यकता है । इसे अपनी निराली रहित-मर्यादा स्थापित करनी चाहिए और इस संबंध में ब्राहमणी मतों के जाति गौत्रों के प्रभावों और वर्तमान नास्तिक और मयायावादी प्रभाव से छुटकारा प्राप्त करना चाहिए ।

(4) सिखी के न्यारे अस्तित्व का उपदेश:

भगता की चाल निराली ।।
चाला निराली भगताह केरी, बिखम मारगि चलणा ।।
लबु लोभु अहंकारु तजि त्रिसना बहुतु नाही बोलणा ।।
खंनिअहु तिखी वालहु निकी एतु मारगि जाणा ।।
गुरपरसादी जिनी आपु तजिआ हरि वासना समाणी ।।
कहै नानकु चाल भगता जुगहु जुग निराली ।।

(रामकली महला 3, अनंद पृ 918)

हिंदू मूले भूले अखुटी जांही ।।
नारदि कहिआ सि पूज करांही ।।
अंधे गुंगे अंध अंधारु ।।
पाथरु ले पूजहि मुगध गवार ।। (वार बिहागड़ा, महला 1, पृ 256)

गुरु अमरदास जी ने सिखी का यह पहलू आरंभ में ही दृढ़ता से सिखों को समझा दिया था कि गुरमत की जीवन शैली पराधर्मो से बिल्कुल भिन्न और स्वतंत्र है । यह बात भी स्पष्ट कर दी कि एक अरसे से मनमत तथा दूसरे धर्मों की जो छटाएं हम अपने ऊपर लादे चले आ रहे हैं, उनको त्यागना कोई आसान बात नहीं है । इन छटाओं में बेशुमार चिथड़े से नियम हैं जो हमारे आत्मिक जीवन के लिए बोझ तुल्य हैं ।

पर अरसे तक इन पर चलने के कारण हमारा इनसे इतना मोह हो गया है कि हम इन को आसानी से त्याग भी नहीं सकने । यह महसूस करने हुए भी कि इन के साथ हमारे जीवन में अशांति, कलह क्लेश आदि ही पैदा हो रहे हैं, हम इन को छोड़ने में कठिनाई महसूस करते हैं । गुरु अमरदास जी ने सिखी में दाखिल होने से पूर्व वर्षो तक ब्राहमणी मत के सिद्धांतों व नियमों का बहुत कट्टरता से पालन किया था। तीर्थ यात्राओं, गंगा स्नानों, वर्णआश्रमी कर्मकांडीय भेदपूर्ण व्यवस्था के विश्वास को खूब निभाया था । चाहे इन साधनों द्वारा आज तक किसी को भी आत्मिक शांति प्राप्त नहीं थी हुई, पर फिर भी इन सब नियमों को जिज्ञासु अपनी छाती से इस तरह लगाए हुए चलता था जैसे बंदरी अपने मरे हुए बच्चे को एक अवधि तक छाती से लगाए रखने का निष्फल प्रयास करती है । वास्तविकता का ज्ञान हो जाने पर भी इन गलत नियमों तथा जीवन युक्तियों का त्यागना आम जिज्ञासु के लिए कितना कठिन होता है, इस बात को गुरदेव भली भांति जानते थे ।

दूसरी ओर यह बात समझना भी बहुत जरूरी है कि अन्य मतों तथा मनमतों की छटा उतार फेंके बिना, गुरमत ज्ञान का जलवा भी प्रत्यक्ष नहीं हो सकता।

इस संबंध में गुरु अमरदास जी की दीर्घ दृष्टि को हम, आप की ऐतिहासिक साखियों और बाणी में से छलकता देख सकते हैं । आरंभ से लेकर वर्तमान दशक तक के बुद्धिजीवियों, विद्वानों व पंथ-दर्दियों को अलग-अलग ढंग से ऐसे प्रयास करने पड़ रहे हैं, जिनके द्वारा वे आम लोगों के भुलेखों को दूर करके समझा सकें कि सिख मत एक बिल्कुल न्यारा, स्वतंत्र और संपूर्ण मत है । किसी प्रकार भी इसको हिंदू मत की एक शाख नहीं कहा जा सकता । इस भ्रम को दूर करने के लिए भाई साहिब काहन सिंघ नाभा आदि अनेकों विद्वानों को *हम हिंदू नहीं* आदि पुस्तकों की रचना करनी पड़ी । गुरबाणी में दर्शाए विचारों, सिख फलसफे और सिख इतिहास में से यह भुलेखा पड़ने की गुंजाइश तो नहीं, पर प्रचार की कमी के कारण और ब्राहमण भाऊ की शातिर और शातिर चालों के

कारण, अनेकों लोग इस दुविधा और भुलेखे का शिकार बनते रहे हैं, और अभी भी भ्रमित हो रहे हैं कि सिख मत शायद हिंदू मत की एक शाख मात्र ही है । बाणी में सतगुरु साहिबान ने ही नहीं, भक्तों ने भी इस विषय के संबंध में बहुत दृढ़ मत व्यक्त किए हैं । यथा :

–बेद की पुत्री सिंम्रित भाई ।।
सांकल जेवरी ले है आई ।।

. . . .

कटी न कटै, तूटि नह जाई।।
सा सापनि होइ, जग कउ खाई ।। (गउड़ी कबीर जी पृ ३२९)

–ना हम हिंदू न मुसलमान ।।
अलह राम के पिंडु परान ।। (पृ 1636)

–हमरा झगरा रहा न कोऊ ।।
पंडित मुलां छाडे दोऊ ।।1।।रहाउ।।
पंडित मुलां जो लिखि दीआ ।।
छाड चले हम कछू न लीआ ।।'' (भैरउ, कबीर जी पृ ११५८)

–बुत पूजि पूजि हिंदू मूऐ, तुरक मूए सिरु नाई।।
ओइ ले जारे, ओइ ले गाडे, तेरी गति दुहू न पाई ।।

(सोरठि, कबीर जी पृ ६५६)

–बेद कतेब इफतरा भाई, दिल का फिकरु न जाइ ।।

(तिलंग, कबीर जी पृ ७२७)

–पडीआ, कवन कुमति तुम लागे ।।
बूडहुगे परवार सकल सिउ, रामु न जपहु अभागे ।।''

(मारू कबीर जी पृ ११०२)

–हिंदू अंना: तुरकू काणा ।।
दुहां ते गिआनी सिआणा ।।
हिंदू पूजै देहुरा मुसलमान मसीत ।।
नामे सोई सेविआ जह देहुरा न मसीति ।।

(बिलावल गौड़, नामदेव जी पृ ८७५

–बेद पुरान सासत्र आनंता, गीत कबित न गावउगो ।।

(रामकली, नामदेव जी पृ 972)

–गइआ पिंडु भरता ।। बनारसि असि बसता ।।
मुखि बेद चतुर पड़ता ।। सगल धरम अछिता ।।
गुर गिआन इंद्री द्रिढ़ता ।। खटु करम सहित रहता ।।
सिवा सकति संबादं ।। मन छोडि छोडि सगल भेदं ।।

(गौंड, नामदेव जी पृ 873)

–भैरउ भूत सीतला धावै ।। खर बाहनु उहु छारु उडावै ।।
हउ तउ एकु रमईआ लैहउ ।। आन देव बदलावनि दैहउ ।।

(गौंड, नामदेव जी पृ 874)

–पाडे तुमरी गाइत्री, लोधे का खेतु खाती थी ।।
लै करि ठेगा टगरी तोरी , लांगत लांगत जाती थी ।।

(बिलावल गौंड, नामदेव जी पृ 874)

गुरमत का सैद्धांतिक और सांस्कृतिक पक्ष से साधारण सा अध्ययन करने से ही स्पष्ट हो जाता है कि सिख मत अपने आप में एक स्वतंत्र संपूर्ण और हिंदू मुसलमान से बिल्कुल न्यारा मत है । वास्तव में मुसलमानों द्वारा गुरमत को इस्लाम वाली दिशा में खींचने का, न के बराबर यत्न हुआ है और इस बारे में आम लोगें को भ्रम भी कोई नहीं हुआ । जबकि धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन सिख मत और इसलाम में इतनी निकटता दर्शाता है जिसकी तुलना में सिख मत और हिंदू मत के सिद्धांतों में लेश मात्र भी निकटता नहीं है । पर क्योंकि सिखों की अधि संख्या हिंदुओं में से सिख बनी है और आज तक अनेकों हिंदू खानदानों में कुछ व्यक्ति सिखी स्वरुप में मिल जाते हैं, इस बारे में गलतफहमी हो जाना स्वाभाविक सी बात थी । क्योंकि सिखी का खुले रुप से प्रचार करने की आवश्यकता को हम लोगों ने अभी तक महसूस नहीं किया है । एक अवधि तक मुसलमानों के अत्याचारों से हिंदुओं को बचाने के लिए सिखों ने जो बे-इंतहा कुर्बानियां कीं, सिर धड़ की बाजी लगा कर हिंदुओं की रक्षा के लिए दशकों तक लगातार जिन लंबी जदो-जहिद

में सिख कौम को व्यस्त रहना पड़ा, उसने भी यह भुलेखा पैदा करने में बड़ी मदद की है कि *'हिंदू और सिख तो एक हैं ।'* इस कारण लोग स्थापित करने लगे कि सिखी का केवल इसलाम मात्र से वैर है । वास्तव में बात ऐसी नहीं है जितनी कुर्बानियां सिख कौम के बजुर्गों को हिंदुओं के लिए करनी पड़ीं इतनी तो कोई कौम अपने अस्तित्व के लिए भी दे सकने का साहस नहीं कर सकती । अतः मुद्दा यह कि भुलेखा पड़ जाना स्वाभाविक तथा साधारण बात थी । वैसे सैद्धांतिक पक्ष से अवलोकन करने पर हम पाएंगे कि दोनों मत परस्पर विरोधी हैं । ब्राहमणी मत लाख हाथ पैर मारे, सूतक, पातक, चौंके कार आदि के वहमों से छुटकारा प्राप्त नहीं कर सकता । इधर सिख मत में इन सुनैहरी धुंध से भरपूर सिद्धांतों को लगभग मूर्खता के निकट गिना जाता है । श्राद्धों, किरियाओं, मंत्रों-जंत्रों, ग्रह चक्रों, थिति वार आदि युगों के अच्छे बुरे होने वाले विश्वासों, शगुन अपशगुन तथा शुभ अशुभ मुहूर्तों की पुरजोर पुि किए बिना ब्राहमण मत, अपनी सारी चमक दमक गंवा बैठेगा, जबकि इन वहमों में राई मात्र यकीन रखने वाला पुरुष भी सिखी के सिद्धांतों के अनुसार सिखी से बेवफा समझा जाता है । ब्राहमणी मत वाले के लिए देवी देवताओं तथा अवतारों में विश्वास रखना ही नहीं, उन की मूर्तियों तथा मूर्तियों की पूजा, अर्चा, तर्पण, भोग आदि को भी जरूरी अंग माना गया है । सिख मत में वाहिद एक परमेश्वर को छोड़कर और किसी हस्ती में विश्वास करना और कर्मकांडों की दलदल में अपने आप को फंसाना, धर्म से बागी होने के तुल्य समझा जाता है । ब्राहमणी मत के अनुसार जाति वरण के भेदभाव को तोड़ना अपनी लचकदार कमर तोड़ लेना है जबकि सिखी सिद्धांत के अनुसार इस बेढंगी कमर को तोड़े बिना धर्म के सुंदर महल का निर्माण संभव नहीं है । गुरमत में व्रत संबंधी कर्मकांडों के लिए कबीर साहिब ने *गदही होइ कै अउतरै भार सहै मन चार* का दंड विधान निश्चित किया है । हिंदू मत, वेद विश्वासी मत है और फिर हिंदू मत, पूजा अर्चा में विष्णु के अवतारों को महान

स्थान प्राप्त है जबकि वेदों और अवतारों को सिख मत में नीचे अंकित गुरबाणी वाक्यों के अनुसासर, शून्य समझा गया है, क्योंकि सिख मत का आधार केवल गुरबाणी और अकाल पुरख ही हैं, वेद और अवतार नहीं। यथा :

पड़ि पड़ि पंडित मोनी थके बेदां का अभिआसु ।।
हरिनामु चित न आवई, नहि निज घर होवै वासु ।।

(मलार महला ३ पृ १२७७)

वेद पड़हि, हरिनामु न बूझहि ।।
माइआ कारणि, पड़ि पड़ि लूझहि ।। (मारु महला 3, पृ 1050)
पंडत मैलु न चूकई जे वेद पड़ै, जुग चारि ।।''

(सोरठि महला 3 पृ 1050)

सिम्रति सासत्र पुंन पाप बीचारदे ततै सार न जाणी ।।

(रामकली महला 4 अनंद पृ ९20)

बेद बाणी जग वरतदा त्रैगुण करे बीचारु ।।
बिनु नावैं जमडंडु सहै, मरि जनमै वारो वार ।।

(मलार महला 3 पृ 1276)

ब्रहमा मूल, वेद अभिआसा ।।
तिस ते उपजे देव मोह पिआसा ।।
त्रैगुण भरमे नाहीं निज घर वासा ।। (गउड़ी महला 3, पृ 230)

त्रैगुण बाणी वेद बीचारु ।।
बिखिआ मैलु बिखिआ वापारु ।।(मलार महला 3, पृ 1262)
गुरबाणी वरती जग अंतर,
इसु बाणी ते हरिनामु पाइदा ।।(मारू, महला 3, पृ 1066)
गुरबाणी इस जग महि चानणु ।।(सिरी राग महला ३, पृ ६७)
–सतिगुरु बिना होर कची है बाणी ।।
कहदे कचे सुणदे कचे, कचीं आखि वखाणी ।।

(रामकली महला 3, पृ ९20)

अवतारों के बारे में :

जुगह जुगह के राजे कीए, गावहि करि अवतारी ।।
तिन भी अंतु न पाइओ ताक, किआ करि आख्व वीचारी ।।

(आसा, महला 3, पृ 423)

अवतार न जानहि अंतु ।।
परमेसरु पारब्रह्म बेअंतु ।।

(रामकली, महला 5, पृ 894)

दस अउतार राजे होइ,
वरते महादेव अउधूता ।।
तिन भी अंतु न पाइओ
तेरा लाइ थके बिभूता ।।

(सूही, महला 5, पृ 747)

पाडे तुमरा राम चंदु, सो भी आवतु देखिआ था ।
रावन सेती सरबर होई, घर की जोइ गवाई थी ।।

(बिलावल, गौंड, नामदेव जी, पृ 875)

जूज महि जोरि छली चंद्रावलि
कान: क्रिसनु जादमु भइआ ।।(आसा, महला 1, पृ 470)

ब्राहमणी मत के लिए यह जरुरी था कि देवी देवताओं, ब्राहमण, विष्णु, महेश आदि सब को बहुत ऊंचा स्थान दिया जाय । एकीश्वर की भक्ति को दृढ़ करने के लिए इन वस्तुओं को भी शून्य समझना जरूरी है । गुरू अमरदास जी ने अपनी बाणी में इस कठिनाई का अच्छी तरह खंडन किया है और गुरमत सिद्धांतों को खुले शब्दों में निखार कर प्रकट कर दिया है । यथा :

महादेउ गिआनी वरते,
घरि आपणै तामसु बहुत अहंकारा ।। (वडहंस, महला 3, पृ 559)
माइआ मोहे देवी सभि देवा ।। (गउड़ी महला 3, पृ 227)

ब्रहमा बिसनु महादेउ त्रैगुण भूले,
हउमै मोहु वधाइआ ।। (वार बिलावल महला 3, पृ 852)
ब्रहमा बिसनु महेसु न कोई ।।
अवरु न दीसै, ऐको सोई ।। (मारू महला १, पृ 1035)
ब्रहमा बिसनु रुद्र, तिसकी सेवा ।।
अंतु न पावहि, अलख अभेवा ।। (मारू, महला 3, पृ 1053)

सदा सदा सो सेवीऐ जो सभ महि रहै समाइ ।।
अवरु दूजा किउं सेवीऐ जंमै तै मरि जाइ ।।
निहफलु तिनका जीविआ, जि खसमु न जाणहि आपणा,
अवरि कउ चितु लाइ ।।
नानक एव न जापई, करता केती देइ सजाइ ।।(वार गूजरी, महला 3, पृ 509)

सिख सतगुरु साहिबान ने आरंभ से ही इस ओर अवश्यक ध्यान दिया था ताकि सिख मत एक स्वतंत्र, संपूर्ण तथा सार्वभौम मत का रूप धारण कर ले । समय के अनुसार हिंदू मत के अनेकों संस्कारों यथा जन्म संस्कार, यज्ञोपवीत(जनेऊ) संस्कार, विवाह संस्कार, मृतक संस्कार आदि से सिख मत के मानने वालों का पीछा छुड़वाया गया । गुरू गोबिंद सिंघ जी ने सिखों को, अमृत संचार कराने के साथ ही विशाल ब्राहमणी संस्कारों से सदा के लिए मुक्त करवा दिया और इस बारे में गुरमत संस्कारों को दृढ़ता से लागू करा दिया । इस के फलस्वरूप स्वतंत्र तथा स्वस्थ सिख संस्कृति की नींव रखी गई । इस समय तक दूसरे धर्मों के सभी चिन्हों का भी पूर्ण तौर पर परित्याग कर दिया गया । केस, कड़ा, कंघा, कछैहरा, कृपाण आदि खालसा सभ्यता के चिन्ह अस्तित्व में आए ।

सिख विचारधारा, सिख सभ्यता तथा सिख जीवनयुक्ति का न्यारापन कायम करने में गुरु अमरदास जी का महान योगदान है । इस संबंध में आप ने अपनी रची बाणी के द्वारा अपना स्थाई योगदान प्रदान किया । आप की बाणी में से अनेकों मिसालें इस मंतव्य के लिए ऊपर दी जा चुकी हैं । अब आपकी जीवन गाथा में से कुछ प्रासंगिक संदर्भों का वर्णन किया जाता है ।

लंगर की मर्यादा अपने आप में सिखी के न्यारे अस्तित्व को दृढ़ करवाती है । हर जाति के लोग सेवा करने के विचार से केवल सफाई आदि के नियमों का पालन करते हुए लंगर पकाने में शामिल हो सकते थे । मनुष्यों के बीच, सभी प्रकार के भेदभाव दूर कर दिए गए थे । इन छूत छात के भेद भावों को जड़ से काटने के लिए सतगुरु साहिबान ने प्रत्येक सतसंगी के लिए लंगर में से श्रद्धा सहित *प्रशादा* सेवन करना अनिवार्य कर दिया था । सार्वजनिक बाउली(जलकुंड) के निर्माण ने भी सिख मत की न्यारी सभ्यता की बनावट में बहुत महत्त्वपूर्ण रोल अदा किया था । ठीक है कि आज के समय में शायद इस बात की महानता आसानी से न समझ आ सकें पर जाति पात के भेद भावों तथा छूत छात की भावनाओं से पूर्ण समाज में से सिख मत को मानने वालों को उभाड़ कर निकाल लेने पर, फिर उनमें भ्रातृत्व एकता पैदा कर देने में, सतगुरु साहिबान द्वारा बनवाई बाउली का महान योगदान था ।

भाई पारो की सलाह और विनती पर, गुरु अमरदास जी ने संवत 1624 बिक्रमी की बैसाखी से सिखों का विशेष वार्षिक समारोह करवाना आरंभ किया । इससे सिख सभ्यता को निखारने में बहुत मदद मिली । सारी सिख संगत का एक जगह पर एकत्र होना, साझे प्रोग्राम के बारे में विचार करना, गुरमत सिद्धांतों का विस्तार सहित प्रचार करना आदि, समय पाकर बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ । सिखी प्रचार के साथ-साथ इस सालाना समारोह ने सिखों में एक कौम होने के अहसास को भी जागृत कर दिया ।

गुरु अमरदास जी ने अपने मुखी प्रचारकों का जीवन ऐसा साधा कि वे अपनी न्यारी रहित मर्यादा द्वारा ही हर जगह पर विचरण करते थे । इससे सिखी का स्वतंत्र अस्तित्व बनना शुरु हो गया । आपने अपने भतीजे बाबा सावण मल को कुल्लू, कांगड़ा सुकेत आदि पहाड़ी क्षेत्रों में प्रचार करने को भेजा था । हरीपुर में ठहरते समय एकादशी व्रत वाला दिन आ गया । सावण मल जी ने व्रत रखने की हिंदू मर्यादा का पालन

करने की जगह पर लंगर बनवाया और स्वयं लंगर सेवन करके दूसरों को भी सहभोज में निमंत्रित किया । सावण मल जी को राजा के सम्मुख पेश होना पड़ा पर सिखी की सीधी व स्पष्ट जीवन शैली व गुरबाणी विचारों से राजा इतना प्रभावित हुआ कि उसने सपरिवार मय अपने अमीरों वजीरों के सिखी धारण कर ली ।

अल्लायार पठान तथा मथो जैसी स्त्रियों को सिख धर्म के प्रचार के काम पर लगाना, एक क्रांतिकारी कदम ही था । स्पष्ट था कि सिखी के न्यारे भाईचारे में हिंदू मुसलमान आदि सभी जातियों, कौमों के लोग शामिल हो सकते हैं । इस नये तथा न्यारे भ्रातृत्व में स्त्रियों को भी प्रचार के काम पर लगा कर पुरुषों के बराबर अधिकार दिये जा चुके थे जिसका इस से पहले स्वपन लेना भी नींद खराब करने के समान था ।

भाई प्रेमे के साथ मथो का, और हरीपुर की रानी के साथ सच्चन सच्च का अंतर्जातीय विवाह भी सिखी की न्यारी तथा विश्वव्यापी मर्यादा का द्योतक है ।

(5) मानव जीवन का मनोरथ:

मानव जीवन का मनोरथ क्या है, इस बारे में गुरु अमरदास जी ने बड़े स्पष्ट विचार दिए हैं । उन्होंने कई तरीकों से यह दृढ़ करवाया है कि मानव जन्म, विषय विकारों में बर्बाद करने के लिए नहीं है, किसी ऊंचे प्रयोजन के लिए है ।

गुरु जी ने मनुष्य को संबोधित करते हुए बहुत बुलंद आवाज से कहा है कि हे इनसान! तूं यह तो सोच कि संसार में जन्म ले कर तूं ने आज तक कौन सा अच्छ कर्म किया है । जिस हरी ने तेरे शरीर की सृजना की है, उसको तूने अपने अंतर में नहीं बसाया है । परमेश्वर, गुरु की कृपा द्वारा ही मनुष्य के हृदय में बस सकता है । इसलिए सतगुरु की शिक्षाओं के संग मन जोड़ने से ही हमारा मानव जन्म सफल हो सकता है । जिन व्यक्तियों ने सतगुरु के उपदेशों में मन लगा कर,

परमेश्वर को अपने मन में नहीं बसाया है, उन के जीवन को सतगुरु जी धिक्कारते हैं । उनके खाने पीने, अच्छे वस्त्र पहनने, सोने और भांति-भांति के भोग विलास आदि पर धिक्कारते हैं क्योंकि इस प्रकार वह मानव जन्म को व्यर्थ ही गंवा रहे हैं ।

ऐ सरीरा मेरिआ, इसु जग महि आइ कै,
किआ तुधु करम कमाइआ ।।
कि करम कमाइआ तुधु सरीरा,
जां तू जग महि आइआ ।।
जिनि हरि तेरा रचनु रचिआ,
सो हरि मनि न वसाइआ ।।
गुरपरसादी हरि मंनि वसिआ,
पूरबि लिखिआ पाइआ ।।
कहै नानक एहु सरीरु परवाणु होआ,
जिनि सतिगुर सिउ चितु लाइआ ।।

(रामकली महला 3, अनंद, पृ 921)

भाई रे, भगतिहीणु काहे जगि आइआ ।।
पूरे गुर की सेव न कीनी, बिरथा जनमु गवाइआ ।। (पृ 64)
सतिगुरु जिना न सेविउ सबदि न लगो पिआरु ।।
सहजे नामु न धिआइआ कितु आइआ संसारि ।।

(गूजरी की वार, महला 3, पृ 512)

सफलु जनमु जिनीः गुरमुखि जाता हरि जीउ रिदै वसाए।।
बाझ गुरू फिरै बिललादी दूजै भाइ खुआइ ।।

(गूजरी की वार महला 3, पृ 513)

सतिगुर सिउ चितु न लाइओ नामु न वसिओ मनि आइ ।।
ध्रिगु इवेहा जीविआ किआ जुग महि पाइआ आइ ।।

(गूजरी की वार महला 3, पृ 510)

धिगु धिगु खाइआ, धिग धिग सोइआ ।।
धिगु धिग कापड़ अंगि चढ़ाइआ ।।
धिगु सरीरु कुटंब सहित सिउ जितु हुणि खसमु न पाइआ ।।
पउड़ी छुडकी फिरि हाथि न आवै, अहिला जनमु गवाइआ ।।

(बिलावल, महला 3, पृ 796)

गुरमुखि हरि जीउ सदा धिआवहु जब लगु जीअ परान ।।
गुर सबदी मनु निरमलु होआ चूका मनि अभिमानु ।।
सफलु जनमु तिसु प्रानी केरा हरि कै नामि समानु ।।

(प्रभाती महला 3, पृ 1334)

मानस जनमि सतिगुरु न सेविआ, बिरथा जनमु गवाइआ ।।
नदरि करे ता सतिगुरु मेले, सहजे सहजि समाइआ ।।

(प्रभाती महला 3, पृ 1334)

(6) सतगुरु की शिक्षा की आवश्यकता :

गुरू अमरदास जी ने ऊंची आत्मिक अवस्था प्राप्त करने के लिए केवल मात्र सच्चे सतगुरु की शिक्षा को सुनने तथा उस के अनुसार जीवन व्यतीत करने की ताकीद की है । मानव जीवन की सफलता के लिए एकाएक सफल साधन गुरु का उपदेश कमाना है । यथा :

मेरे मन गुर की सिख सुणीजै ।।
होर का नाम सदा सुखदाता, सहजे हरि रसु पीजै ।। (पृ 1334)

गुरू अमरदास जी ने अपने निजी अनुभव के आधार पर इस सत्य को भली-भांति समझा दिया है कि हरी परमेश्वर केवल सतगुरू के उपदेश से ही प्राप्त किया जा सकता है । परमेश्वर रूपी नामधन हमारे हृदय में ही है, पर यह धन सच्चे गुरू के मार्गदर्शन के बिना दिखाई नहीं दे सकता ।

सतिगुर ते हरि पाईऐ भाई ।।
अंतरि नामु निधानु है,

पूरे सतिगुरि दीआ दिखाई ।। (पृ 425)

सच्चे परमेश्वर को, जो पूरी तरह मैल-रहित है, गुरु के उपदेश के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है ।

यथा :

सचा साहिबु एकु है,
मतु मन भरमि भुलाहि ।।
गुर पूछि सेवा करहि,
सचु निरमलु मंनि वसाहि ।। (पृ 428)

सतगुरु की सेवा अपने आप में बहुत बड़ा संघर्ष है । सतगुरु की सेवा द्वारा सभी दुखों का नाश करने वाला परमेश्वर, हमारे मन में बस जाता है । यथा :

गुर सेवा तपां सिरि तपु सार ।।
हरि जीउ मनि वसै, सभी दुख विसारण हारु ।। (पृ 423)

वह मनुष्य आत्मिक सुख न होने के कारण, सदा दुखी रहते हैं जो सतगुरु के उपदेश की कमाई रुपी सेवा नहीं करते । यथा :

जिनी पूरखी सतिगुरु न सेविओ,
से दुखीए जुग चारि ।। (पृ 34)

गुरुहीन मनुष्य आत्मिक तौर पर सदा अचेत रहते हैं और मृत्यु के भय में ही बंधे रहते हैं । सच्चा आत्मिक कल्याण गुरु उपदेश द्वारा ही हो सकता है । यथा :

बाझहु गुरु अचेत है सभी बधी जम कालि ।।
नानक गुरमति उबरे, सचा नाम समालि ।। (पृ 30)

गुरू अमरदास जी ने बड़े सीधे शब्दों में यह बात समझाई है कि गुरु के बिना परमेश्वर की भक्ति हो ही नहीं सकती । गुरू ही परमेश्वर की सच्ची भक्ति करने का तरीका सिखलाने की सामर्थ्य रखता है । यथा

भाई रे गुर बिनु भगति न होइ ।।
बिनु गुर भगति न पाइऐ, जे लोचै सभ कोइ ।। (पृ 39)

(7) साधू के लक्षण और पाखंड कर्म :

गूरु अमरदास जी कहते हैं कि जो मनुष्य अपने पेट अथवा स्वार्थ की खातिर अनेकों पाखंड धारण करते हैं, जो कारोबार व परिश्रम छोड़ कर दूसरों पर भार बन कर उनके घर से उदर पूर्ति करते हैं, उनको साधु अथवा धर्मात्मा नहीं समझा जा सकता । आत्मिक मंडलों की सैर करने वाले ही साधु या धर्मात्मा पुरुष कहलवा सकते हैं जो अपने मालिक प्रभु को ढूंढ लेते हैं और अपने हृदय घर में आत्मिक अडोलता पैदा कर लेते हैं । यथा :

अभिआगत एहि न आखीअनि जि पर घरि भोजनु करेनि ।।
उदरै कारणि आपणे बाहले भेख करेनि ।।
अभिआगत सेई नानका जि आतम गउणु करेनि ।।
भालि लहनि सहु आपणा निज घरि रहणु करेनि ।।

(रामकली की वार, महला 3 पृ 949)

गुरु अमरदास जी ने बड़े साफ शब्दों में मांग कर खाने का और बेकार तथा निखट्टू बन कर समाज पर भार डालने का विरोध किया । यथा :

जोगी होवां जगि भवां, घरि घरि भीखिआ लेउ ।।
दरगह लेखा मंगीऐ, किसु किसु उतरु देउ ।। (मारू महला 3, पृ 1089)

हरी राम तपे (तपीश्वर) की पोल खोल कर गुरु अमरदास जी ने गुरमत का उपर्युक्त सिद्धांत, सिखों के प्रति दृढ़ करवाया था । झूठे त्याग तथा पाखंडों को त्याग कर **घालि खाइ किछु हथहु देइ नानक राह पछाणहि सेइ** वाली गुरमत जीवन पद्धति ही सर्वोत्तम है । सतगुरु साहिबान ने स्पष्ट करके समझा दिया कि भगवे आदि वेश करने से मनुष्य साधु या जोगी नहीं बन जाता । परमेश्वर का मिलाप तो सतगुरु की शिक्षा पर चल कर ही हो सकता है । यथा :

जोगु न भगवी कपड़ीं, जोगु न मैले वेसि ।।
नानक घरि बैठिआं जोगु पाईऐ, सतिगुर के उपदेसि ।।

(सलोक वारां ते वधीक महला 3, पृ 1420)

गुरु अमरदास जी ने यह बात अच्छी तरह दृढ़ करवाई कि परमेश्वर को प्राप्त करने के लिए, पाखंड धारण करने तथा आडंबर करने व्यर्थ हैं । केवल साफ नीयति कर लेने से, बिना घर बार का त्याग किये परमेश्वर मिल सकता है । यथा :

काइ पटोला पाड़ती, कंबलड़ी पहिरेइ ।।

नानक घर ही बैठिआ सहु मिले, जे नीअति रासि करेइ ।।(पृ 1383)

गुरु अमरदास जी ने सीधे सादे तथा सरल ढंग से मिसाल दे कर सत्य के अभिलाशी जिज्ञासु को यह बात अच्छी तरह समझा दी कि मालिक प्रभु को रिझाये बिना, बेकार बाहर के आचार विहार तथा वेश धारण करने से प्रभु प्राप्ति नहीं हो सकती है । स्त्री के श्रृंगार की कोई कीमत नहीं है, जब तक उस ने अपने पति के मन में अपने लिए प्यार या समर्पण पैदा नहीं किया है । यथा :

कामणि तउ सीगारु करि, जां पहिलां कंतु मनाइ ।।

मतु सेजै कंतु न आवई, एवै बिरथा जाइ ।। (पृ 788)

(8) केवल गुरबाणी से मार्गदर्शन लेने की आवश्यकता :

गुरबाणी ही इस संसार में आत्मिक मार्ग को रोशन करने के लिए प्रकाश स्तंभ का काम करती है । सतगुरु के सच्चे मत के विपरीत जाने वाली हर बाणी, निश्चित तौर पर कच्ची समझनी चाहिए और इनको कहने, सुनने तथा मानने वाले सभी लोग कच्चे होते हैं । यथा :

गुरबाणी इसु जग महि चानणु,

करमि वसै मनि आइ ।। (पृ 67)

सतिगुरू बिना होर कची है बाणी ।।

बाणी त कची सतिगुरू बाझहु होर कची बाणी ।।

कहदे कचे सुणदे कचे, कची आखि वखाणी ।।(रामकली म 3 अनंद,९२०)

-जिन बाणी सिउ चितु लाइआ से जन निरमल परवाणु ।।

नानक नामु तिना कदे न वीसरै से दरि सचे जाणु ।।

(आसा महला 3, पृ 429)

(9) माया:

मनुष्य द्वारा प्रभु मिलन की राह में माया बहुत बड़ी रुकावट है । प्राचीन ग्रंथों में माया के कई रूपों का वर्णन किया गया है । जैसे जड़ -माया व चेतन माया, या कंचन माया व कामिनी माया, अर्थात धन, जमीन, जायदाद व स्त्री बच्चे, रिश्तेदार संबंधी आदि को माया कहा गया है । गुरमत में घर-घाट, जमीन जायदाद, धन-दौलत, स्त्री-बच्चों आदि को त्याग देने का उपदेश नहीं दिया गया बल्कि इन के मोह में फंसने को माया कहा गया है । इस मोह से बचने का उपदेश दिया गया है । कोई भी चीज जिसके संपर्क में आ कर हमारा परमेशवर के संग प्यार टूट जाए त्रृष्ण का विकार पैदा हो जाए, हरी भूल जाए और हरी को त्याग कर अनात्मिक तत्वों से मोह हो जाए, उस वृत्ति को माया कहा जा सकता है । माया के इस ताप से मनुष्य को अत्यंत दुखी होना पड़ता है । जैसे शास्त्रों में जठरागिनी का बहुत भयंकर रोग बताया गया है, संसार में विचरण करते हुए माया का दुख भी उसी तरह बहुत तीखा रोग है । जो मनुष्य गुरू की कृपा द्वारा प्रभु के साथ ध्यान जोड़ लेते हैं, वे माया में विचरण करते हुए भी उससे निर्लिप्त रह कर प्रभु को पा लेते हैं ।

माया के दुखों से केवल गुरू के शबद उपदोश द्वारा ही बचा जा सकता है । माया का सुख क्षण-भंगुर है और किसी समय भी यह मनुष्य का साथ अचानक छोड़ देते हैं, जिस के कारण मायावादी रुची वाला मनुष्य उसका साथ छूट जाने पर दुखी होता है । माया नागिन की तरह प्रत्येक जीव को चिपटी हुई है और जो मनुष्य भी इसका गुलाम बन कर इसकी सेवा करता है, यह उसी मनुष्य को डस लेती है । माया कामोह, काम,क्रोध और अहंकार मानो भूत हैं, यह सब यम के अधीन हैं और इन पर केवल यम का ही आदेश चलता है और इनकी राह पर चलने वाले अंतत: यम के वश में ही पड़ जाते हैं । माया का मोह अज्ञान में से पैदा होता है और इस पर विजय प्राप्त करना बहुत मुश्किल काम है । माया के सर्प का जहर परमेश्वर के नाम द्वारा बुझाया जा सकता है जो केवल गुरू से ही प्राप्त किया जा सकता ।

मूर्ख व अज्ञानी पुरुष उस धन को एकत्र करते हैं जो सदा साथ नहीं चल सकता । इस कच्चे धन द्वारा दुख ही दुख पैदा होता है । यह धन करतार का एक खेल मात्र है, कभी मनुष्य को प्राप्त हो जाता है और कभी इस से वह छिन जाता है । गुरू ज्ञान का धारणकर्ता परमेश्वर के नाम व प्यार को असली व सदा साथ निभने वाला धन समझता है । वैसे दुनियावी धन का मोह अपने आप में एक विशाल कठिन भव्य सागर के समान है, जिस को तैर कर पार करना बहुत कठिन है । मैं, मेरी की अहं भावना में मनुष्य का आत्मिक जीवन तबाह हो रहा है ।

गुरू अमरदास जी ने बहुत कठोर शब्दों में मनुष्य को चेतावनी दी है और कहा है, 'हे मन की अगवाई में चलने वाले मूर्ख मनुष्य! तूं मायावादी पदार्थों को नियंत्रित करके रख, इनमें व्यसित होकर प्रभु को मत भूल । अंत में संसार यात्रा समाप्त होने पर यह तेरे साथ नहीं जाने का और यह यहीं पर रह जाएंगे । माया का मोह पागलपन से बढ़कर और कुछ नहीं । मनुष्य इस पागलपन में अपने आप को खराब कर रहा है । माया का मोह अपने आप में एक भयानक गुब्बार है, जो इतने व्यापक रूप में फैला हुआ है कि उसके आर-पार के किनारों का पता ही नहीं चलता है । मन की अगवाई में चलने वाले मनुष्य परमेश्वर को भूल कर बहुत दुख भोग रहे हैं ।इस विषय के बारे में गुरू अमर दास जी की बाणी में इस प्रकार वर्णन किया गया है:

जैसी अगनि उदर महि तैसी बाहरि माइआ ।।
माइआ अगनि सभ इको जेही करतै खेलु रचाइआ ।।
जा तिसु भाणा ता जंमिआ, परवारि भला भाइआ ।।
लिव छुड़की लगी त्रिसना माइआ अमरु वरताइआ ।।
एह माइआ जितु हरि विसरै, मोहु उपजै भाउ दूजा लाइआ ।।
कहै नानकु गुर परसादी जिना लिव लागी,
तिनी विचे माइआ पाइआ ।। (रामकली, महला ३, अनंदु-पृ ९२१)

नानक माइआ का मारणु सबदु है,
गुरमुखि पाइआ जाए ।। (पृ ८५३)

माइआ खोटी रासि है, एक चसे महि पाजु लहि जाए ।।
हथहु छुड़की तनु सिआहु होइ, बदनु जाइ कुमलाइ ।।

(गूजरी की वार, महला ३, पृ ५१०)

माइआ होई नागनी जगति रही लपटाइ ।।
इस की सेवा जो करे तिसही कउ फिरि खाइ ।।

(गूजरी की वार, महला ३, पृ ५१०)

माइआ मोह परेतु है, कामु क्रोधु अहंकारा ।।
ऐह जम की सिरकार है, ऐनां: उपरि जम का डंडु करारा ।।

(गूजरी की वार, महला ३, पृ ५१३)

माइआ मोहु अगिआनु है बिखमु अति भारी ।।

(गूजरी की वार, महला ३, पृ ५०९)

माइआ भुइअंगमु सरपु है जगु घेरिआ बिखु माइ ।।
बिखु का मारणु हरिनामु है, गुर गरुड़ सबदु मुखि पाइ ।।

(सलोक वारां ते वधीक, महला ३, पृ १४१५)

काचा धनु संचहि मूरख गावार ।।
मनमुख भूले अंध गावार।।
बिखिआ कै धनि सदा दुखु होइ ।।
न साथि जाइ न परापति होइ ।। (धनासरी, महला ३, पृ ६६५)
इहु धनु करते का खेलु है कदे आवै कदे जाइ ।।
गिआनीआ का धनु नामु है, सद ही रहै समाइ ।।

(वार मलार, महला ३, पृ १२८२)

माइआ मोहु दुखु सागरु है, बिखु दुतरु तरिआ न जाइ ।।
मेरा मेरा करदे पचि मुए, हउमै करत विहाइ ।।

(सलोक, महला ३, पृ १४१६)

माइआ वेखि न भुलु तू मनमुख मूरखा ।।
चलदिआ नालि न चलदी, सभु झूठु दरबु लखा ।।

(मारू की वार, महला ३, पृ १०८७)

माइआ मोहु सभु बरलु है दूजै भाइ खुआई राम ।।
माता पिता सभु हेत है, हेते पलचाई राम ।। (वडहंस, महला ३, पृ ५७१)
माइआ मोहु गुबारु है, तिसदा न दिसै उरवारु न पारु ।।
मनमुख अगिआनी महा दुखु पाइंदे, डुबे हरिनामु विसारि ।।

(सिरीरागु की वार, महला ३ पृ ८९)

(10) अकालपुरख पर दृढ़ विश्वास :

गुरू अमरदास जी ने सिखों को केवल मात्र एकाएक परमेश्वर का आश्रय लेने की हिदायत की है । परमेश्वर सर्वशक्तिमान है और उस के समान बड़ी और कोई हस्ती नहीं है । यथा :

जो तेरी सरणाई हरि जीउ, तिन तू राखन जोगु ।।

तुधु जेवडु मै अवरु न सूझै, न को होआ न होगु ।। (पृ१३३३)

हरि सरणाई भजु मन मेरे सभ किछु करणै जोगु ।।

नानक नामु न वीसरै, जो किछु करै सु होगु ।। (पृ १३४७)

हमें केवल औपचारिक तौर पर अकालपुरख पर आश्रय नहीं रखना चाहिए । हमारा अकालपुरख के संग ऐसा अनन्य व पक्का प्यार होना चाहिए जिस तरह एक आदर्श पति-पत्नी के बीच होता है जो शक्ल से तो भिन्न-भिन्न हैं पर दोनों की ज्योति एक ही होती है । यथा :

धन पिरु एहि न आखीअनि, बहनि इकठे होइ ।।

एक जोति दुइ मूरती, धन पिरु कहीऐं सोइ ।।

प्रभु परमेश्वर को सदा अपने समीप आने की हिदायत है, पर वे केवल गुरू की कृपा से ही समीप आते हैं । यथा :

प्रभु निकटि वसै सभना घट अंतरि, गुरमुखि विरलै जाता ।।
नानक नमु मिलै वडिआई, गुर कै सबदि पछाता ।। (पृ ६८)

परमेश्वर निर्भय और सर्वशक्तिमान है इसलिए परमेश्वर पर विश्वास या श्रद्धा रखने वाला जीव निर्भय हो कर विचरण करता है ।

जिस का साहिबु डाढा होइ ।। तिस नो मारि न साकै कोइ ।।
साहिब की सेवकु रहै सरणाई ।। आपे बखसे दे वडिआई ।।
तिस ते ऊपरि नाही कोइ ।। कउणु डरै, डरु किस का होइ ।।

(बिलावल, महला ३, पृ ८४२)

जनम-मरण के भंवर में पड़े किसी व्यक्ति की सेवा सा सुमिरन की जगह पर घट-घट में और प्रत्येक स्थान पर रमे परमेश्वर का आश्रय लेना चाहिए । यथा :

सदा सदा सो सेवीऐ जो सभ महि रहै समाइ ।।

अवरु दूजा किउ सेवीऐ जंमै तै मरि जाइ ।। (पृ ५०९)

(11) परमेश्वर प्राप्ति के साधन :

गुरू अमरदास जी ने परमेश्वर की प्राप्ति के लिए सीधा तथा सरल उपाय बताया है और अन्य सभी मनमती साधनों का खंडन किया है । प्रभु गुरू के शबद के व्यवहार तथा सतसंगत द्वारा ही मिल सकता है । जब तक हम अपने मन में सच्चा प्यार नहीं बसाते हैं हमारे आडंबर, लोगों को दिखाने की खातिर किए गए कर्म कांड व परिश्रम व्यर्थ हैं । यथा :

मनहठि कितै उपाइ न छुटीऐ सिम्रिति सासत्र सोधहु जाइ ।।
मिलि संगति साधू उबरे, गुर का सबदु कमाइ ।। (पृ ६५)
खट दरसन जोगी संनिआसी, बिनु गुर भरमि भुलाए ।।
सची बाणी सिउ चितु लागै आवणु जाणु रहाए ।।
पंडित पढ़ि पढ़ि वादु वखाणहि, बिनु गुर भरमि भुलाए ।।
लख चउरासीह फेरु पाइआ, बिनु सबदै मुकति न पाए ।।
(पृ ६७)

सासत सिंम्रिति बेद चारि मुखागर बिचरे ।।
तपे तपीसर जोगीआ, तीरथि गवनु करे ।।
खटु करमा ते दुगुणे पूजा करता नाइ ।।
रंगु न लगी पारब्रहम त सरपर नरके जाइ ।।
रंग तमासे बहु बिधी चाइ लगि रहिआ ।।
चिति न आइओ पारब्रहमु ता सरप की जूनि गइआ ।।
(पृ ७०)

सभना का सहु एकु है, सद ही रहै हजूरि ।।
नानक हुकमु न मंनई, तां घर ही अंदिर दूरि ।।
(पृ ५१०)

(12) अहंकार

परमेश्वर प्राप्ति के लिए उच्च आत्मिक जीवन जीने के लिए अहंकार रूपी विकार बहुत बड़ी रुकावट है । गुरू अमरदास जी कहते हैं कि मनुष्य का मन अहं के मोह रूपी जहर में बुरी तरह फंसा रहता है और उसका मन इस तरह अजगर जैसे भार से लदा रहता है । केवल गुरू के शबद द्वारा इस जहर को मारा जा सकता है । मनुष्य अहं और

माया के मोह के कारण उच्च आत्मिक रास्ते से विछिन्न हो जाता है । उस के मन में लोभ का दुखदाई नशा उठ खड़ा हो जाता है और विवेकहीन हो कर मनुष्य माया की खातिर भटकता रहता है । अहं और परमेश्वर का नाम सुमिरन दो ऐी भिन्न-भिन्न चीजें है जो एक स्थान पर नहीं टिक सकती हैं । जिस हृदय में अहं निवास करे, उस में परमेश्वर का प्यार नहीं टिक सकता । संसार के लोग अहीं की मैल के कारण बहुत दुख प्राप्त कर रहे हैं । प्रभु को छोड़कर माया के संग प्यार करने के कारण उन को विकारों की मैल चिपटी रहती है । अहं की मैल ऐसी चीज है- जो सैंकड़े तीर्थों से स्नान करने पर भी नहीं उतरती है । यथा :

हउमै बिखु मनु मोहिआ, लदिआ अजगर भारी ।।
गुरुड़ सबदु मुखि पाइिआ हउमै बिखु हरि मारी ।।

(मलार महला 3, पृ १1260)

हउमै माइआ मोहि खुआइआ, दुखु खटे दुख खाइ।।
अंतरि लोभ हलकु दुखु भारी, बिनु बिबेक भरमाइ।।

(भैरउ महला 3 पृ १1132)

हउमै नावै नालि विरोधु है, दोइ न वसहि इक ठाइ।।
हउमै विचि सेवा न होवई तां मनु बिरथा जाइ।।

(वडहंस महला 3, पृ 560)

जग हउमै मैलु दुखु पाइआ मलु लागी दूजै भाइ।।
मलु हउमै धोती किवै न उतरै जे सउ तीरथ नाइ।।

(सिरी राग महला 3, पृ 39)

(13) मनमुख :

गुरू अमरदास जी ने बड़े सुंदर व साफ शब्दों में मनुष्य को मन की अगवाई की जगह पर गुरू की अगवाई में जीवन चलाने की प्रेरणा की है जिससे मनुष्य का जन्म सफल हो सके । मन की अगवाई में चलने वाला मनुष्य, नित्य झूठ बोलता है और विकारों की जहर ही बीजता और खाता है । मनमुख का अंतर्मन जला हुआ होता है। **मनमुख** नित्य काम, क्रोध, अंहकार आरि विकारों की कमाई करता है । जगह कुजगह

की उसको कोई तमीज नहीं होती । वह हर जगह पर, हर समय विकारों में ही लीन रहता है । परमेश्वर के दरबार में अपने जीवन का हिसाब देते समय, वह झूठा घोषित किया जाता

मनमुख मनुष्य की मति बड़ी चंचल होती है । वह अपने मन ही मन बहुत चतुराइयां करता है । इस चतुराई के आधार पर की गयी उसकी सारी मेहनत बेकार जाती है । वास्तविक बात तो यह है कि मनमुख परमेश्वर का नाम सुमिरन कभी नहीं करता है । परमेश्वर के नाम से टूट कर, मन को माया में फंसाकर रखने से सुख कैसे प्राप्त हो सकता है ? मनमुख का जीवन ही ऐसा है कि वह कभी भी गुर शबद की विचार नहीं करता है ।

गुरू अमरदास जी, उस जीवन को धिक्कारते हैं तो अहं के कारण पाप कमाता है ओर परमेश्वर के सुमिरन का, सदा रहने वाला अनंद त्याग देता है । मनमुख सतगुर से हीन होने के कारण पहले तो परमेश्वर की भक्ति करने के बारे में सोचता ही नहीं है, पर यदि कभी ऐसा सोच ही ले, तो भी सतगुरू के बिना उससे भक्ति नहीं हो सकती है । वह अहं तथा माया के दुखों में फंसा रह कर, आवगावन के चक्कर में पड़ा रहता है।

मनमुखु सद ही कूड़ो बोलै,
बिखु बीजै बिखु खाए ।।
जमकालि बांधा त्रिसना दाधा,
बिनु गुर कवणु छडाए।। (सूही महला ३, पृ ७५३)
मनमुख बोलि न जाणनी, ओना अंदरि कामु क्रोधु अहंकारु।।
थाउ कुथाउ न जाणनी, सदा चितवहि बिकार ।।
दरगह लेखा मंगीऐ, ओथै होहि कूड़िआर ।।

(सारंग की वार, महला 3 ,७पृ 1248)

मनमुख चंचल मति है अंतरि बहुतु चतुराई।।
कीता करतिआ बिरथा गइआ, इकु तिलु थाइ न पाई।।

(सलोक वारां ते वधीक, महला 3,१पृ 1414)

मनमुख नामु न चेतनी बिनु नावै दुख राइ।।
आत्मा रामु न पूजनी, दूजे किउं सुखु होइ।।

(सलोक महला ३ पृ११४१४)

मनमुखु ऊधा कउलु है न तिसु भगति न नाउ ।।
सकती अंदरि वरतदा कूड़ तिसका है उपाउ।।५११।।
नामु न चेतहि सबदु न वीचारहि, इहु मनमुख का आचार।।
हरि नामु न पाइआ जनमु बिरथा गवाइआ,
नानक जमु मारि करे खुआर ।। (पृ ५०९)
धिगु तिन्हा दा जीविआ, जो हरि सुखु परहरि तिआगदे,
दुखु हउमै पाप कमाइ ।।
मनमुख अगिआनी माइआ मोहि विआपे,
तिनु बूझा न काई पाइ।। (पृ ५११)
... ...
मनमुख भगति करहि बिनु सतिगुर,
विणु सतिगुर भगति न होई राम ।।
हउमै माइआ रोगि विआपे,
मरि जनमहि दुखु होई राम ।।

(सूही महला ३, पृ ७६८)

(14) संक्रांति (संगरांद) व अमावस (मसिया) दिनों का भ्रम

गुरू अमरदास जी ने गुरसिखों को दृढ़ता से यह ताकीद की थी कि वे दिनों के भारी या हल्के होने के, या शुभ-अशुभ के वहमों में ने पडें । दूसरे धर्मों में कुछ विशेष दिनों को पवित्र तथा शुभ कर के माना गया है, जबकि दूसरे दिनों के बारे में उनका विश्वास और तरह से है । जैसे संक्रांति, पुन्नियां, मसिया, ऐकादशी, अष्टमी आदि के दिनों को विशेष महत्व दिया गया है । इन विशेष दिनों में कई धार्मिक पुन्य दान तथा कर्म कांड इस कारण पूरे किये जाते थे कि इन का उन खास दिनों पर किये जाना विशेष रूप से फलदायी होता है । सतगुरू साहिबान ने, तिथियों-वारों आदि के शुभ-अशुभ होने के भ्रम-वहम को मानने वाले लोगों को मूर्ख तथा गंवार कहा है। यथा :

सतिगुरू बाझहु अंधु गुबारु ।।
थितीं वार सेवहि मुगध गवार ।। (पृष्ठ 843)

(15) ईश्वरीय गुण अपनाने और दुर्गुण त्यागने की आवश्यकता:

गुरमत में अवगुण या बदी को त्यागने व गुण ग्रहण करने की स्पष्ट हिदायत दी गई है । गुरमत के अनुसार तो नाम सुमिरन केवल तब ही हो सकता है यदि दुर्गुणों से हम तौबा कर लें और नेक-चलन बनें । गुरमत में आज के देहधारी गुरूडंमीय प्रचारकों के इस विचार का पूर्ण खंडन है कि व्यक्ति बद से नेक सभी प्रकार के काम करता रहे, और देहधारी गुरूओं से नाम ले ले ओर इस हेरा-फेरी या चतुराई से प्रभु को प्राप्त कर ले । सतगुरू साहिबान ने इस मामले में बहुत सख्त निर्णय लेकर यह बात समझा दी है कि नाम सुमिरन केवल उस दशा में ही हो सकता है जब दुर्गुण त्याग कर ईश्वरी गुणों को गृहण किया जाए । गुरू अमरदास जी इस संबंध में स्पष्ट शब्दों में कहते हैं कि दैवी गुण ग्रहण करने से ही आत्मिक आनंद पैदा हो सकता है और इनसान ईश्वर की भक्ति कर सकता है । गुरू उपदेश के द्वारा ईश्वरीय गुणों का व्यापार करने वाले व्यक्ति ही नाम सुमिरन कर सकते हें सच्चे भगत अपने अंदर से अहं की भावना को दूर कर लेते हैं क्योंकि उन्होंने गुणों तथा दुर्गुणों की पहचान कर ली होती है । इसलिए सीधा जीवन मार्ग तो यही है कि इनसान क्षणभंगुर पदार्थों के मोह और अवगुणों से मन न लगाए और कोई ऐसा दुश्कर्म कतई न करे जिस से अंत में पछताना पड़ जाय । यथा :

गुण की सांझ सुखु उपजै सची भगति करेनि ।।
सचु वणजहि गुर सबद सिउ, लाहा नामु लएनि ।।

(सूही, महला ३, पृ ७५६)

हरि भगता की जाति पति है,
भगत हरि कै नामि समाणे राम ।।
हरि भगति करहि विचहु आपु गवावहि,
जिनः गुण अवगण पछाणे राम ।।

गुण अउगण पछाणै हरि नामु वखाणै,
भै भगति मीठी लागी ।।
अनदिनु भगति करहि दिनु राती घर ही महि बैरागी ।।

(सूही, महला ३, पृ ७६८)

साथि तेरै चलै नाहीं तिसु नालि किउ चितु लाईऐ ।।
ऐसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईऐ ।।

(रामकली, महला ३, अनंद, पृ ९१८)

(16) नाम सुमिरन के बारे में भुलेखे की निवृत्ति :

नाम सुमिरन पर गुरू अमरदास जी की बाणी में बहुत बल दिया गया है पर आपने अपार कृपा द्वारा यह स्पष्ट समझा दिया है कि केवल मात्र तोता-रटन द्वारा सुमिरन करना (Mechanical repetition) नाम सुमिरन नहीं कहला सकता । सुमिरन तब ही हो सकता है जब जिज्ञासु के मन में दृढ़ विश्वास हो कि साहिब सदा उसके साथ रहते हैं और वह सृजनकर्ता और पालनहार ईश्वर से कुर्बान जाए । अपने आप को अथवा अहं को त्यागे बिना सुमिरन कैसे हो सकता है ? अहं का त्याग किए बिना प्रभु का नाम लेना बेस्वाद हो जाता है और अपने स्व का त्याग किए बिना परमेश्वर के नाम का रटन करना ईश्वरीय कर्म नहीं रह जाता है । गुरू की शरण में आए बिना भाव गुरू द्वारा सिखलाए गए गुण धारण किए बिना नाम् सुमिरन करना व्यर्थ कर्म है जो परमेश्वर की दरगाह् में स्वीकार्य नहीं होता । इस संबंध में गुरू अमरदास जी ने कूएं के हरट की मिसाल दे कर अपना गुरमत का सिद्धांत बहुत अच्छी तरह समझा दिया है कि चलते कूएं हे हरट भी यंत्रों की रगड़ खाने पर कई बार तूं तूं की प्यार व मीठी आवाज निकालने लग जाते हैं पर हरट की यह तूं तूं की आवाज प्यार व भक्ति के जज़्बे से शून्य होने के कारण, नाम सुमिरन नहीं कहला सकती है । इसी प्रकार मन में दैवी गुण धारण किये बिना व ईवरीय प्यार पैदा किये बिना तोता रटन पाठ सुमिरन नहीं कहला सकता। यथा :

हरहट भी तूं तूं करहि बोलहि भली बाणि ।।
साहिबु सदा हदूरि है, किआ उची करहि पुकार ।।
जिनि जगतु उपाइ हरि रंगु कीआ, तिसै विटहु कुरबाणु ।।
आपु छोडहि तां सहु मिलै सचा एहु वीचारु ।।
हउमै फिका बोलणा, बुझि न सकां कार ।।
वणि त्रिणु त्रिभवणु तुझै धिआइदा, अनदिनु सदा विहाण ।।
बिनु सतिगुर किनै न पाइआ, करि करि थके वीचार ।।
नदरि करहि जे आपणी तां आपे लैहि सवारि ।।
नानक गुरमुखि जिन्ही धिआइआ, आए से परवाणु ।।

(सलोक वारा ते वधीक, महला ३ पृ १४२०)

(17) बख्शिश तथा अरदास पर निश्चय:

परमेश्वर की प्राप्ति के लिए परमेश्वर के सम्मुख अरदास करनी चाहिए और उसकी कृपा या बख्शिश की मांग करनी चाहिए । अरदास के लिए भी कई जरूरी बातें ध्यान में रखनी चाहिएं । अपने खोटे कर्मो को मानना और परमेश्वर की अनंतता व क्षमायाचना का वर्ण हमारे मनों में आत्मविश्वास और पवित्रता प्रकट नहीं करता । सच्चा भक्त परमेश्वर के सम्मुख सदा यही मानता है हमारे अंदर अनंत अवगुण हैं और नेकियां न के बराबर हैं । इसलिए मालिक से केवल उसकी कृपा और बख्शिश की ही मांग करना उचित है । गुरू अमरदास जी ने कितने सुंदर ढंग से अरदास करनी सिखलाई है :

असी खते बहुत कमावदे, अंतु न पारावारु ।।
हरि किरपा करि कै बखसि लैहु, हउ पापी वड गुनहगारु ।।
हरि जीउ लेखै वार न आवई, तूं बखसि मिलावणहारु ।।
गुर तुठे हरि प्रभु मेलिआ, सभ किलविख कटि विकार ।।
जिना हरि हरि नामु धिआइआ, जन नानक तिन् जैकारु ।।

(सलोक, महला ३, पृ १४१६)

(18) प्रचारकों के लिए व्यवहारिक जीवन की आवश्यकता :

दूसरों में धर्म प्रचार करने वाले का अपना जीवन उच्च व निर्मल, पाक-पवित्र और दैवी गुणों व प्यार में रमा होना चाहिए । **गुरू**

अमरदास जी कहते हैं कि प्रचारक के लिए यह जरूरी है कि वह दैवी ज्ञान को स्वयं भी अच्छी तरह समझता हो और व्यवहार में लाता हो । अपने आप को पहचाने बिना सच्चे दैवी ज्ञान से विहीन प्रचारक स्वाभाविक तौर पर ही पाप कर्म कमाता है और परमेश्वर की दरगाह में स्वीकार्य नहीं होता । प्रचारक को अपने ज्ञान विद्ववता और आकर्षक व्याख्यान शक्ति पर भूलकर भी गर्व नहीं करना चाहिए । यह गुण भी तो ईश्वर की देन ही हैं । इन गुणों पर अहंकार काहे का ? जब परमेश्वर अपनी सत्ता या शक्ति इनसान में से खींच लेता है तब वह अपना ज्ञान-भरपूर व्याख्यान कैसे कर सकता है?प्रचारक अपनी बोलने की शक्ति व सुंदर शैली को प्रभु द्वारा प्रदत्त निधि समझे और भूल कर भी इस पर अहंकार न करे । यथा :

आपि न बूझै लोक बुझावै ।।
मन का अंधा अंधु कमावै ।।
दरु घरु महलु ठउरु कैसे पावै ।। (पृ ८३२)
किआ कोई तेरी सेवा करे, किआ को करे अभिमाना ।।
जब अपुनी जोति खिंचहि तूं सुआमी,
तब कोई करउ दिखा वखिआना ।।

(बिलावल, महला ३, पृ ७९७)

प्रचारक नम्रता के गुणों का कभी त्याग न करें ।

— — — — —

10. दैवी गुणों तथा ज्ञान के सूर्य गुरू अमरदास जी

(कलि विचि धू अंधार सा, चढ़िआ रै भाणु)

भट्टों द्वारा गुर की स्तुति में उच्चारित बाणी की तरह गुरू ग्रंथ साहिब में राय बलवंड और सत्ते द्वारा उच्चारित रामकली की वार भी दर्ज है जिस में गुरू नानक साहिब से ले कर गुरू अर्जन देव जी तक पांच गुरू-अवतारों के महान व्यक्तित्वों और उनके उच्च आत्मिक गुणों का वर्णन है ।

गुरू अमरदास जी के महान व्यक्तित्व का वर्णन सत्ता जी करते हुए कहते हैं - गुरू अमरदस जी अपने पूर्वजों, गुरू नानक देव जी तथा गुरू अंगद देव जी जैसे ही महान हैं । गुरू अमरदास जी ने आत्मिक बल को नेहणी बना कर मन रूपी नाग को नेत्रे में डाला है और आत्मिक अडोलता के पहाड़ को मथनी बनाकर गुरू शबद रूपी सागर को बिलो कर दैवी गुणों रूपी रत्न निकालकर संसार के लोगों को ज्ञान का प्रकाश दिया है । गुरू अमर दास जी के मस्तिष्क पर गुरू नानक देव जी और गुरू अंगद देव जी जैसा नूर ही दिखलाई देता है और आपका सिंहासन व दरबार भी गुरू नानक देव जी व गुरू अंगद देव जी के समान हैं । आप आत्मिक अडोलता के मालिक हैं और आपने अपनी इंद्रियों को पूरी तरह नियंत्रित कर रखा है । आप निर्मल आचरण से भरपूर हैं ओर सदा परमेश्वर के यशगायन में लीन रहते हैं संसार में छाए विषय-विकारों के घोर अंधकार को दूर करने के लिए आप ईश्वरीय गुण रूपी किरणों वाले महान सूर्य है। आपने ऊंचे व निर्मल आचरण के द्वारा धर्म की उजड़ी हुई खेती को दुबारा आबाद कर दिया है और उसकी रक्षा की है ।

गुरू अमरदास जी के अमृत-लंगर के द्वारा लोग आत्मिक जीवन का निर्माण कर रहे हैं । जो मनुष्य भी गुरू अमरदास जी के उपदेश को

मन में धारण कर लेता है, वह हर स्थान पर परमेश्वर का दीदार करता है और उसका जीवन-मृत्यु का भंवर समाप्त हो जाता है । गुरू अमरदास जी के गुणों को देख कर ऐसा प्रतीत होता है कि अकाल पुरख?, मानो, आप गुरू अमरदास जी के रूप में प्रत्यक्ष खड़े हैं । विकारों के अंधड़ का गुरू अमरदास जी पर रत्ती मात्र भी प्रभाव नहीं और आप सुमेर पर्वत की भाँति अडोल और मजबूत मन वाले हैं । आप सब जीवों के मानसिक रोगों को समझते हैं आप साक्षात गुरू नानक देव जी व गुरू अंगद देव जी के रूप ही हैं । यथा :

सो टिका, सो बैहणा, सोई दीबाणु।।
पियू दादे जेविहा, पोता परवाणु ।।
जिनि बासकु नेत्रै घतिआ, करि नेही ताणु ।।
जिनि समुंदु विरोलिआ, करि मेरु मधाणु ।।
चउदह रतन निकालीअनु कीतोनु चानाणु ।।
घोड़ा कीतो सहज दा, जतु कीउ पलाणु ।।
धणखु, चढ़ाइओ सत दा, जस-हंदा बाणु ।।
कलि विचि धू अंधारु सा, चढ़िआ रै भाणु ।।
सतहु खेतु जमाइओ, सतहु छावाणु ।।
नित रसोई तेरीऐ, घिउ मैदा खाणु ।।
चारे कुंडां सुझीओसु, मन महि सबदु परवाणु ।।
आवागउणु निवारिओ, करि नदरि नीसाणु ।।
अउतरिआ अउतार लै, सो पुरखु सुजाणु ।।
झखड़ि वाउ न डोलई, परबतु मेराणु ।।
जाणै बिरथा जीअ की, जाणी हू जाणु ।।

(पृ ९६८)

11. श्री गुरू अमरदास जी के चरणों में भाई नंद लाल सिंघ जी की श्रद्धांजलि

तीसरी पातशाही, गुरू अमरदास जी सत्य के पालनहार, देशों के सुल्तान और सखावत तथा बख्शिश के प्रसार के संसार सागर की भांति हैं। मृत्यु का फरिश्ता भी जिस के अधीन है और हिसाब-किताब रखने वाले देवताओं का सुल्तान जिस के अधीन है । इन दोनों की चमक दमक का पहरावा सत्य की मशाल और बंधपतियों वाली हर कली की खुशी और उल्लास है उसके पवित्र नाम (उर्दू आधारित नाम, ***अमर दास***) का पहला अक्षर ***'अलिफ'*** यानी ***अ,*** प्रत्येक भटक रहे व्यक्ति के लिए सुख आराम, प्रदान करने वाला है और दूसरा अक्षर मुबारक ***'मीम'*** यानी ***म,*** हर आतुर और लाचार के कानों को काव्य रस प्रदान करता है। उस के नाम की सौभाग्यशाली ***'रे'*** ,यानी ***र*** अक्षर अमर मुखड़े की शोभा और रौनक है तथा नेकी से परिपूर्ण ***'दाल'***
यानी ***द,*** हर निराश की आशा की किरण और सहारा है । उसके नाम का दूसरा ***'आलिफ '*** यानी ***अ*** अक्षर, हर पापी को क्षमा कर पनाह देने वाला है और अंतिम लफ़्ज़ ***'सीन'*** यानी ***स*** उस करतार की परछाई है ।

भाई नंद लाल सिंघ जी ने श्री गुरू अमरदास जी का स्तुति-गायन अपनी रचना*'गंज नामा'* में किया है जो कि अगले पृष्ठ पर अंकित है।

वाहिगुरू जीओ सत

वाहिगुरू जी हाज़र नाज़र है।

शेयर- गुरू अमरदास आं गरामी नज़ाद

ज़ि अफज़लि हॅक हसतीअश रा मूआद ।।६४।।

अर्थ-गुरू अमरदास उस महान घराने में से हैं, जिस की हस्ती व रब्ब के फ़ज़ल और कर्म से सामग्री मिली है ।

शेयर-ज़ि वसफो सनाए हमा बरतरीं

ब-सदरि हकीकत मुरबअ नशी ।।६५।।

अर्थ-स्तुति-गायन के कारण वह सब से ऊंचा है ।

वह रब्ब सत्य के आसन पर चौकड़ी जमा कर बैठा है ।

शेयर-जहां रौशन अज नूरि अर्शादि ऊ ।।

ज़मीनो ज़मां गुलशन अज दादि ऊ ।।६६।।

अर्थ-उसके वचनों के नूर से यह संसार जगमगा रहा है, और उस के इनसाफ से यह धरती और दुनियां का बाग बना हुआ है ।

शेयर- दो आलम गुलामश चिह हज़दहि हज़ार ।।

फज़ीलो करामश फज़ूं अज शुमार ।।६७।।

अर्थ- हम हज़ार लोग तो क्या, दोनों जहान ही उसके गुलाम हैं उसकी महानता, स्तुति तथा कृपा के मापदंड से बाहर हैं ।

੧ੴ वाहिगुरू जी की फतहि। ।

सिख मिशनरी कालेज का उद्देश्य

हम सिख हैं।

इसलिए यह आवश्यक है कि हमें सिखी असूलों(नियमों) का पता हो, गुरबाणी के अर्थ भाव, सिख इतिहास की जानकारी, सिख रहित मर्यादा के असूल सिख फिलासफी, सिख सभ्यता की हर गुरसिख को जानकारी होनी अति आवश्यक है। यदि हमें इनका ज्ञान नहीं हो हम कैसे सिख कहला सकते हैं ? पाठ हम करते जा रहे हैं, पर यदि कोई हमसे गुरबाणी के किसी वाक्य का अर्थ पूछ ले और हम जवाब न दे सकें तो यह हमारे लिए कितनी शर्मनाक बात होगी। दस गुरू साहिबों एवं प्राचीन गुरसिखों के इतिहास की जानकारी होनी आवश्यक है, यदि हम अपना बेमिसाल इतिहास नहीं जानते तो हम कैसे दूसरे को बता सकेंगे कि हम कौन-सी विरासत के मालिक हैं। सिख रहत् मर्यादा के उसूल कौन-कौन से हैं, इस विषय पर हम आमतौर पर अज्ञानी हैं। घर में पाठ रखना हो या जीवन में कोई संस्कार करना हो, गुरमत क्या है, इसे जानने के लिए हमें ग्रंथी सिंघों या ज्ञानी व्यक्ति पर निर्भर होना पड़ता है। पर क्या सिख होते हुए ऐसे असूलों की जानकारी हमें स्वयं को होनी ज़रूरी नहीं ?

आज हम देखते हैं हमारे में जो कमज़ोरियां आ रही हें, उसका मुख्य कारण यही है कि हमने सिखी के बारे में ज्ञान प्राप्त करने की ज़िमेवारी नहीं समझी। यदि हमें गुरसिखी के असूलों का स्वयं ज्ञान हो तो हम अपने नौजवानों को जो अनजाने में दाड़ी व केशों की बेअदवी कर रहे हैं, नशे पी रहे हैं, देहधारी पाखंडी गुरूओं को मान रहे हैं, को गुरबाणी के उसूल दृढ़ करवा कर, खून से लिखा अपना बलिदानी इतिहास सुना कर सिख धर्म की ओर प्रेरित कर सकते हैं। जो नौजवान आज बागी हो रहे हैं तो इसमें उन बेचारों का क्या दोष ? दोष तो हमारा अपना है, हमारे प्रचारकों का है, हमारी अगवाई करने वालों का है जो ऐसे नौजवानों को सिख धर्म की ओर नहीं प्रेरित कर सकें।

आज ना तो सिखी हमें माता-पिता से, घर से ही मिल रही है (क्योंकि माता-पिता ही सिखी से दूर हो चुके हैं तथा मादा प्रस्ती में बुरी तरह उलझे हुए हैं) व ना ही सिखी 'खालसा' स्कूलों, कालेजों से ही मिल रही है, क्योंकि किसी स्कूल या कालेज को छोड़कर सिखी के संदेश देने का प्रबंध हम इनमें कर ही नहीं सके या किया ही

नहीं, जहां पहले खालसा, स्कूलों कालेजों में होता था। गुरद्वारों में से सिखी की सिक्षा मिलनी चाहिए थी क्योंकि गुरुद्वारे बने ही सिखी का प्रचार करने के लिए, पर आज गुरुद्वारों में फैली गुटबाजी, पार्टीबाजी गुरुद्वारे पर कब्ज़े की भूख, गोलक (गुरूद्वारे में चढ़ाए हुए धन) की लड़ाई, नौजवानों के मार्ग में बाधा बनी हुई हैं, जिस कारण वह गुरूद्वारों में हो रहे धर्म प्रचार को नहीं स्वीकारते। फिर जो प्रचारक हमने अपने धर्म स्थानों में लगा रखे हैं, उनमें से बहु-गिनती अनपढ़ हैं। यदि हमारे बहुत सारे प्रचारकों की, ना स्कूली शिक्षा हो, ना वह धर्म के क्षेत्र में पूरा ज्ञान रखते हों, ना हि उच्च महान् जीवन, ना ही प्रचार के लिए मिशनरी उत्साह हो तो फिर यह आशा कैसे रखी जा सकती है कि ऐसे प्रचारक नौजवान पीढ़ी पर अपने प्रचार का अच्छा प्रभाव डाल सकेंगे। सत्य तो यह है कि प्रचारकों का यह क्षेत्र केवल एकमात्र माया कमाने का एक साधन बना कर रख दिया गया है, व प्रचार का वास्तविक उद्देश्य अलोप होता जा रहा है।

जब हम दूसरे धर्मों ईसाई मत, इस्लाम मत आदि की ओर देखते हैं तो उनके प्रचारक व प्रचारक तैयार करने वाली संस्थाएं (अदारे) देख कर दंग रह जाते हैं कि कैसे उन्होंने ग्यारह सालों का लम्बा समय लगाकर लाखों कि गिनती में प्रचारक तैयार किए हैं व प्रचार के क्षेत्र में उन्हें पूरी तरह तैयार किया है। पर जब हम अपने प्रचारकों की ओर देखते हैं तो असहाय से होकर रह जाते हैं क्योंकि हमारे प्रबंधकों ने प्रचारकों की तैयारी के लिए कोई बड़े संगठित व योग्य मिशनरी कालेज नहीं खोला, जहां प्रचारकों को सिख धर्म की पूरी शिक्षा देकर तैयार करके प्रचार के क्षेत्र में भेजा जा सके। योग्य प्रचारकों की कमी कारण ही हमारा धर्म जो दुनिया का सबसे बढ़िया व आलमगीर धर्म है। जो हर देश, प्रदेश में, बिना किसी जात-पात, अमीर-गरीब, वर्ग भेद, रंग रूप आदि बिना भेदभाव प्रचार किया जा सकता है, संसार में तो क्या पंजाब में भी सही ढंग से नहीं प्रचार सका

उपरोक्त कमी को महसूस करते हुए 'सिख मिशनरी कालेज' आरम्भ किया गया है, जिस द्वारा 'दो साला सिख मिशनरी कोर्स (Correspondonce Course) करवाने का प्रबंध किया गया है। पढ़े-लिखे नौजवान, इस दो साला सिख मीशनरी कोर्स करने के बाद (Elementry Sikh Missionaries)के तौर पर कार्य करेगें। यह गुरमति प्रचारक अपनी कार्य करते हुए प्रचार का काम (Part time) में बिना किसी प्रकार की तन्खाह फल आदि के करेंगे।